नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकुर

(शिक्षा-समन्वित जीवन चरित्र)

गौड़ीय
वेदान्त
प्रकाशन

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु

(शिक्षा–समन्वित जीवन–चरित्र)

॥ श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गौ जयतः ॥

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकुर

(शिक्षा–समन्वित जीवन–चरित्र)

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति एवं तदन्तर्गत भारतव्यापी श्रीगौड़ीय
मठोंके प्रतिष्ठाता, श्रीकृष्णचैतन्याम्नाय दशमाधस्तनवर
श्रीगौड़ीयाचार्य केशरी नित्यलीलाप्रविष्ट
ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री

श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके
अनुगृहीत

त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके
द्वारा संकलित एवं सम्पादित

गौड़ीया वेदान्त प्रकाशन

प्रकाशक—

श्रीमान् प्रेमानन्द ब्रह्मचारी (सेवारत्न)

प्रथम संस्करण—१०,००० प्रतियाँ

श्रीगौरपूर्णिमा

श्रीचैतन्याब्द ५२२

११ मार्च २००९

प्राप्तिस्थान

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
मथुरा (उ० प्र०)
०५६५-२५०२३३४

श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ
दानगली, वृन्दावन (उ० प्र०)
०५६५-२४४३२७०

श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ
दसविसा, राधाकु
गोवर्धन (उ० प्र०)
०५६५-२८१५६६८

श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
कोलेरडाङ्गा लेन
नवद्वीप, नदीया (प० बं०)
०९३३३२२२७७५

श्रीरमणबिहारी गौड़ीय मठ
बी-३, जनकपुरी, नई दिल्ली
०११-२५५३३५६८

खण्डेलवाल एण्ड संस
अठखम्बा बाजार, वृन्दावन
०५६५-२४४३१०१

जयश्री दामोदर गौड़ीय मठ
चक्रतीर्थ रोड, जगन्नाथपुरी, उड़ीसा
०६७५२-२२७३१७

समर्पण

परमाराध्य, मुकु

गुरुपादपद्म अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज! मैं आशा करता हूँ कि आपके श्रीकरकमलोंमें समर्पित 'नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु

जीवनचरित्र' नामक यह ग्रन्थ नामाश्रित निष्कपट साधक-भक्तोंको नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु

पारमार्थिक जीवन-यापन करनेकी प्रेरणा प्रदान करेगा।

श्रीहरि-गुरु-वैष्णव-सेवाभिलाषी
श्रीभक्तिवेदान्त नारायण

विषय–सूची

प्रस्तावना .... **क–च**

(पृष्ठभूमि) .... **छ–त**

प्रथम अध्याय **१–६**

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु

द्वितीय अध्याय **७–१०**

श्रील हरिदास ठाकु

तृतीय अध्याय **११–३०**

श्रील हरिदास ठाकु

चतुर्थ अध्याय **३१–३८**

श्रील हरिदास ठाकु

पञ्चम अध्याय **३९–४४**

श्रील हरिदास ठाकु

षष्ठ अध्याय **४५–५२**

जीव मोहनी साक्षात् मायादेवीके द्वारा
श्रील हरिदास ठाकु

सप्तम अध्याय **५३–७८**

श्रील हरिदास ठाकु

अष्टम अध्याय **७९–८४**

अजातशत्रु श्रील हरिदास ठाकु
(विषधर सर्पका उपाख्यान)

नवम अध्याय **८५–९४**

श्रील हरिदास ठाकु

दशम अध्याय ९५–९८
श्रील हरिदास ठाकुर

एकादश अध्याय ९९–११२
श्रील हरिदास ठाकुरके
माहात्म्यका वर्णन

द्वादश अध्याय ११३–१३२
श्रीमन् महाप्रभु एवं श्रील हरिदास ठाकुर

त्रयोदश अध्याय १३३–१५४
श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकुरका सम्मान

चतुर्दश अध्याय १५५–१६२
नीलाचलमें श्रील हरिदास ठाकुर

पञ्चदश अध्याय १६३–१७०
श्रील हरिदास ठाकुर

षोड़श अध्याय १७१–१८४
नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकुर

सप्तदश अध्याय १८५–१९२
श्रीमन् महाप्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकुर

अष्टादश अध्याय १९३–२०६
श्रील हरिदास ठाकुर

ग्रन्थके उपकरण

प्रथम अध्याय....................	श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका ९३-९५ श्रीनवद्वीपधाम-माहात्म्य ५/१२५-१५७ चै॰ भ॰ म॰ १०/६-७ चै॰ च॰ आ॰ १६/१४२
द्वितीय अध्याय	चै॰ भा॰ आ॰ २/३७ चै॰ च॰ अ॰ ३/९८-१००
तृतीय अध्याय....................	चै॰ च॰ अ॰ ३/९४-१६३ साप्ताहिक गौड़ीय, तृतीय खण्ड, २५ संख्या
चतुर्थ अध्याय	चै॰ च॰ अ॰ ३/१६४-२१२ साप्ताहिक गौड़ीय, तृतीय खण्ड, २५ संख्या
पञ्चम अध्याय..................	चै॰ भा॰ आ॰ १६/१८-३२ चै॰ च॰ अ॰ ३/२१३-२२४ साप्ताहिक गौड़ीय, तृतीय खण्ड, १६ संख्या
षष्ठ अध्याय......................	चै॰ च॰ अ॰ ३/२२५-२६४ साप्ताहिक गौड़ीय, तृतीय खण्ड, १६ संख्या
सप्तम अध्याय....................	चै॰ भा॰ आ॰ १६/३३-१७१ साप्ताहिक गौड़ीय, तृतीय खण्ड, २५ संख्या
अष्टम अध्याय..................	चै॰ भा॰ आ॰ १६/१७२-१९७
नवम अध्याय....................	चै॰ भा॰ आ॰ १६/१९९-२५०

दशम अध्याय....................	चै॰ भा॰ आ॰ १६/२५१–२६५
एकादश अध्याय..................	चै॰ भा॰ आ॰ १६/२६७–३१४
द्वादश अध्याय	चै॰ भा॰ म॰ ३/१५७–१७३ चै॰ भा॰ म॰ १८/६–७८ चै॰ भा॰ म॰ १०/३५–१११
त्रयोदश अध्याय	चै॰ भा॰ म॰ १३/७–१९२
चतुर्द्दश अध्याय..................	चै॰ च॰ म॰ ११/१६१–२०६
पञ्चदश अध्याय	चै॰ च॰ अ॰ १/४६–६४, ९४–१०२
षोड़श अध्याय...................	चै॰ च॰ अ॰ ४/३–२४, ४८–४९, ५४–६०, ७२–८३, ८७–१०४, १७९–२०४
सप्तदश अध्याय.................	चै॰ च॰ अ॰ ३/४९–९४
अष्टादश अध्याय	चै॰ च॰ अ॰ ११/१६–१०५

सांकेतिक चिह्नोंकी सूची

अ॰—अन्त्य-लीला/खण्ड
आ॰—आदि-लीला/खण्ड
चै॰ च॰—श्रीचैतन्यचरितामृत
चै॰ भ॰—श्रीचैतन्यभागवत
भ॰ र॰ सि॰—श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु
म॰—मध्य-लीला/खण्ड
श्रीमद्भा॰—श्रीमद्भागवत

प्रस्तावना

अस्मदीय परमाराध्य गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी अहैतुकी कृपा और प्रेरणासे आज उन्हींकी प्रीतिके लिए अनर्पितचिर उन्नतोज्ज्वलरससे युक्त श्रीकृष्णप्रेम-प्रदाता, श्रीकृष्णनाम-सङ्कीर्त्तनके मूल प्रवर्त्तक, श्रीराधाभाव-कान्तिसे देदीप्यमान श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके प्रिय परिकर नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
राष्ट्र
अपार प्रसन्नता हो रही है।

'नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
प्रकाशित करनेका उद्देश्य

विधि-भक्तिके द्वारा व्रजभावको प्राप्त नहीं किया जा सकता तथा आत्मेन्द्रिय-प्रीति वाञ्छाका लेशमात्र रहनेपर रागमार्गमें भी किसीका अधिकार नहीं होता। अतएव ऐसे साधक जिनमें परम सौभाग्यवशतः शुद्धभक्तोंके सङ्गके प्रभावसे व्रजभावको प्राप्त करनेका लोभ तो जागृत हो गया है, किन्तु अनर्थ ग्रस्त अवस्थाके कारण वे रागमार्गका अनुशीलन करनेमें असमर्थ हैं, उन्हें रागमार्गमें अधिकार प्राप्त करनेके लिए श्रीमन् महाप्रभुकी 'तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना। अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥' रूपी शिक्षाके मूर्त्तिमान स्वरूप नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
दिखाये गये आदर्श, परम उपाय स्वरूप सर्वश्रेष्ठ भजनके अङ्ग श्रीनाम-सङ्कीर्त्तनका यत्नपूर्वक अनुशीलन करना चाहिये। किन्तु एक बात सब समय अवश्य ही स्मरण रखनी चाहिये

कि श्रीनाम-सङ्कीर्त्तनका यत्नपूर्वक अनुशीलन शुद्ध भक्तोंके आनुगत्यके बिना कभी भी सम्भवपर नहीं है। शुद्ध भक्तोंके आनुगत्यमें निरपराध श्रीनामको ग्रहण करनेसे नाम प्रभु स्वयं ही राग भजनमें अधिकार प्रदान करते हैं।

परम करुणामय भक्तवत्सल व्रजप्रेम स्वभक्ति-रूप सम्पद-प्रदाता महावदान्य भगवान् श्रीगौरसुन्दरके प्राणोंसे भी अधिक प्रिय भक्तोंकी प्रेम-सेवाकी पराकाष्ठासे समृद्ध परम मधुर चरित्रका प्रयत्नपूर्वक पुनः-पुनः अनुशीलन करना हमारा एकान्त कर्त्तव्य है। भगवद्भक्तोंके चरित्रोंका पुंखानुपुंख अनुशीलन किये बिना हम कभी भी यह समझ नहीं पायेंगे कि भगवद्भजन किसे कहते हैं?

भक्तोंके चरित्रका अनुशीलन करनेके फलस्वरूप भक्तोंके श्रीचरणकमलोंके प्रति निष्कपट प्रीतिके उदित होनेसे ही हम भक्तवत्सल भगवान्की प्रीतिके पात्र बन पायेंगे। इसीलिए शास्त्रोंमें भगवत्-कृपाको भक्त-कृपाकी अनुगामिनी कहा गया है। स्वयं भगवान्ने अपने मुखसे अपने भक्तोंकी सेवाको अपनी सेवासे बड़ा बतलाया है। भक्तपूजाका अनादर करके गोविन्दपूजाका जितना भी आदर अथवा आडम्बर प्रदर्शित क्यों न किया जाये, गोविन्द उस पूजाके प्रति कभी भी सामान्य दृष्टिपात तक भी नहीं करते, बल्कि वैसे पुजारीको दाम्भिक मानकर उसके द्वारा की जानेवाली पूजाको सम्पूर्ण रूपसे अस्वीकार कर देते हैं। भक्तोंके आनुगत्यके बिना किसी भी प्रकारसे भगवान्की पूजा करना सम्भवपर नहीं है। इसलिए शास्त्रोंमें श्रीमुकु

पहले करनेके लिये कहा गया है। भगवान् श्रीकृष्णने अपने प्रियतम भक्त उद्धवको उपलक्ष्य करके कहा था—"हे उद्धव! मुझे ही 'आचार्य' कहकर जानना। कभी भी आचार्यकी मनुष्य बुद्धि द्वारा अवज्ञा अथवा अनादर मत करना। गुरुदेव सर्वदेवमय हैं।"

श्रीचैतन्य महाप्रभु तथा श्रील सनातन गोस्वामिपादने स्वयं अपने मुखसे श्रील हरिदास ठाकु
स्वीकार करके जगत्-वासियोंको उनके चरणकमलोंका अनुसरण करनेकी शिक्षा प्रदान की है। अतएव नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
पुनः-पुनः आलोचना करनेसे हमारा वज्रके समान कठिन हृदय भी द्रवीभूत हो सकता है, अपने द्वारा किये गये भक्तिहीन निरर्थक परिश्रमके प्रति हमारे हृदयमें वास्तविक पश्चाताप जागृत हो सकता है तथा शुद्धभक्तोंकी कृपाको प्राप्त करनेके लिए चित्त व्याकु

भगवद्भक्त परदुःखदुःखी, अति अद्भुत क्षमा-गुणसे सम्पन्न तथा हिंसा, द्वेष और मात्सर्य आदिसे रहित परम पवित्र चरित्रवाले होते हैं। अतः श्रीगौरगत-प्राण गौरभक्तोंके परम-उदार चरितामृतका पुनः-पुनः अनुशीलन और आस्वादन करनेके फलस्वरूप हम भी उनके आदर्श चरितके आनुगत्यमें अपने हृदयकी सङ्कीर्णता, हिंसा-द्वेष, मात्सर्य आदि दोषोंसे शून्य होकर शुद्ध भगवद्भक्तिमें प्रवेशाधिकार प्राप्त करेंगे।

'भक्ताख्यान शुनिले कृष्णेते भक्ति हय'।

भक्तोंके उपाख्यानको सुननेसे भगवान् श्रीकृष्णमें भक्ति उदित होती है।

ग्रन्थ परिचय

श्रील कविराज गोस्वामीके द्वारा नामचार्य श्रील हरिदास ठाकु
३/९१, १५७) में किये गये वर्णनसे यह जाना जाता है कि श्रील हरिदास ठाकु
बेनापोल गये थे। बेनापोलसे सप्तग्रामके निकटवर्ती चाँदपुरमें तथा चाँदपुरसे शान्तिपुर आये थे। किन्तु श्रील वृन्दावन दास ठाकु

बेनापोल तथा चाँदपुर जानेकी बातका उल्लेख ही नहीं किया। उन्होंने लिखा है कि बूढ़न ग्रामसे श्रील हरिदास ठाकु
गङ्गाके तटपर स्थित फु
लगे। अतएव इन दोनों प्रमाणिक ग्रन्थोंके प्रसङ्गोंके आधारपर श्रील हरिदास ठाकु
उसका ठीक-ठीक क्रम निर्देश प्राप्त नहीं होता, तथापि हमनें श्रील हरिदास ठाकु
ग्रन्थोंमें वर्णित प्रायः प्रत्येक प्रसङ्गको यथासम्भव क्रमानुसार इस ग्रन्थमें सङ्कलित करनेका प्रयास किया है तथा पयारोंका अनुवाद श्रील भक्तिविनोद ठाकु
भाष्य' तथा श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती 'प्रभुपाद' द्वारा रचित 'अनुभाष्य' तथा 'गौड़ीय-भाष्य' के आधारपर ही किया है। वस्तुतः सम्पूर्ण ग्रन्थमें ही श्रील प्रभुपादके द्वारा लिखित विचारोंको ही लिपिबद्ध किया गया है तथा अनेक स्थानोंपर उनके नामका उल्लेख भी किया है।

इस ग्रन्थकी पाण्डुलिपि प्रस्तुत करनेमें श्रीमान् परमेश्वरी दास ब्रह्मचारीने बहुत परिश्रम किया है। श्रीमान् भक्तिवेदान्त माधव महाराज तथा श्रीमान् विजयकृष्ण ब्रह्मचारीने प्रूफ-संशोधन किया है। श्रीमान् सुबल सखा ब्रह्मचारी, श्रीमान् मधुमङ्गल ब्रह्मचारी तथा श्रीमान् अच्युतानन्द ब्रह्मचारीने कम्पोजिंग की है। बेटी शान्ति दासीने ले-आउट आदि सेवा कार्य किये हैं। मुखपृष्ठका चित्र श्रीमती श्यामरानी दासीके द्वारा तथा मुखपृष्ठका डिजाइन श्रीमान् विकास ठाकु
द्वारा प्रस्तुत किया गया है। श्रील हरिदास ठाकु
लीलाओंसे सम्बन्धित चित्र श्रीजगन्नाथपुरीके भक्त श्रीमान् मधुमङ्गल ब्रह्मचारी और श्रीमान् जनार्दन दास तथा दिल्ली निवासी भक्त कर्ण द्वारा संग्रह किये गये है। श्रीमान् जयगोपाल दास ब्रह्मचारीने प्रकाशन सम्बन्धीय सेवाओंमें

योगदान दिया है। इन सबकी सेवा चेष्टा अत्यन्त सराहनीय और उल्लेखयोग्य है।

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्ग-गान्धर्विका-गिरिधारी राधा-विनोदबिहारी इनपर प्रचुर कृपा-आशीर्वाद वर्षण करें—यही मेरी उनके श्रीचरणकमलोंमें प्रार्थना है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि वैष्णव-समाज विशेषकर गौड़ीय भक्तोंमें इस ग्रन्थका समादर होगा।

इस ग्रन्थमें यदि कोई भूल-त्रुटि दृष्टिगोचर हो तो पारमार्थिक पाठकगण निजगुणोंसे क्षमा करेंगे तथा संशोधनपूर्वक ग्रन्थका सार ग्रहण कर बाधित करेंगे।

परमार्थ प्राप्तिके इच्छुक श्रद्धालुजन इस ग्रन्थका पाठ और कीर्त्तनकर परमार्थके पथपर अग्रसर हों—यही प्रार्थना है। अलमतिविस्तरेण।

श्रीनित्यानन्द त्रयोदशी
७ फरवरी, २००९
५२२ श्रीचैतन्याब्द

श्रीगुरु-वैष्णव-कृपालेश-प्रार्थी
श्रीभक्तिवेदान्त नारायण

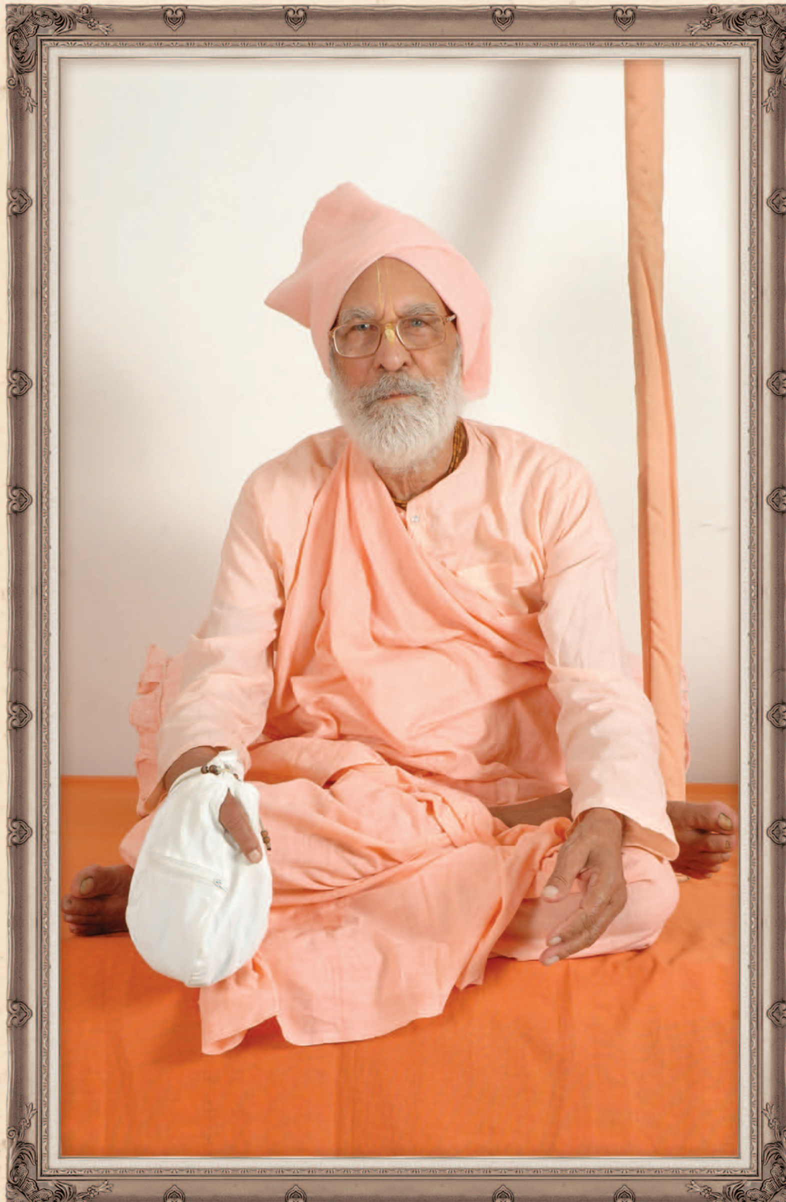

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

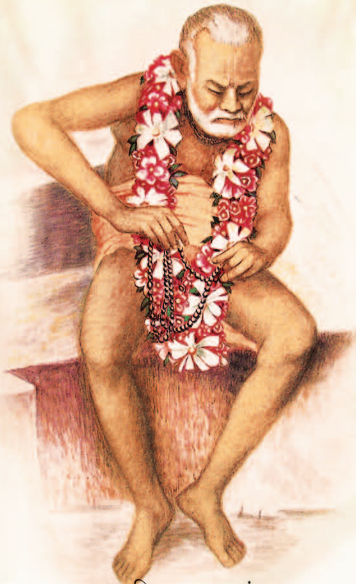

ॐ विष्णुपाद परमहंस
श्रील जगन्नाथ दास बाबाजी महाराज

ॐ विष्णुपाद
श्रील सच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाकुर

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

ॐ विष्णुपाद परमहंस
श्रील गौरकिशोर दास बाबाजी महाराज

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर 'प्रभुपाद'

ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

श्रीरूपानुग गुरु–परम्पराकी जय

श्रील हरिदास ठाकुरकी भजन-कुटीर (बेनापोल)

वेश्याका श्रील हरिदास ठाकुरकी कुटीमें आगमन

वेश्याके द्वारा श्रील हरिदास ठाकुरके समक्ष आत्म–समर्पण

बेनापोलमें सेवित परम महान् वैष्णवी तथा नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकुरके श्रीविग्रह

बादशाहके प्रहरियोंके द्वारा श्रील हरिदास ठाकुरको दण्ड-प्रदान

सिद्ध बकुलमें श्रील हरिदास ठाकुर

श्रीमन् महाप्रभु द्वारा रोपित सिद्ध बकुल

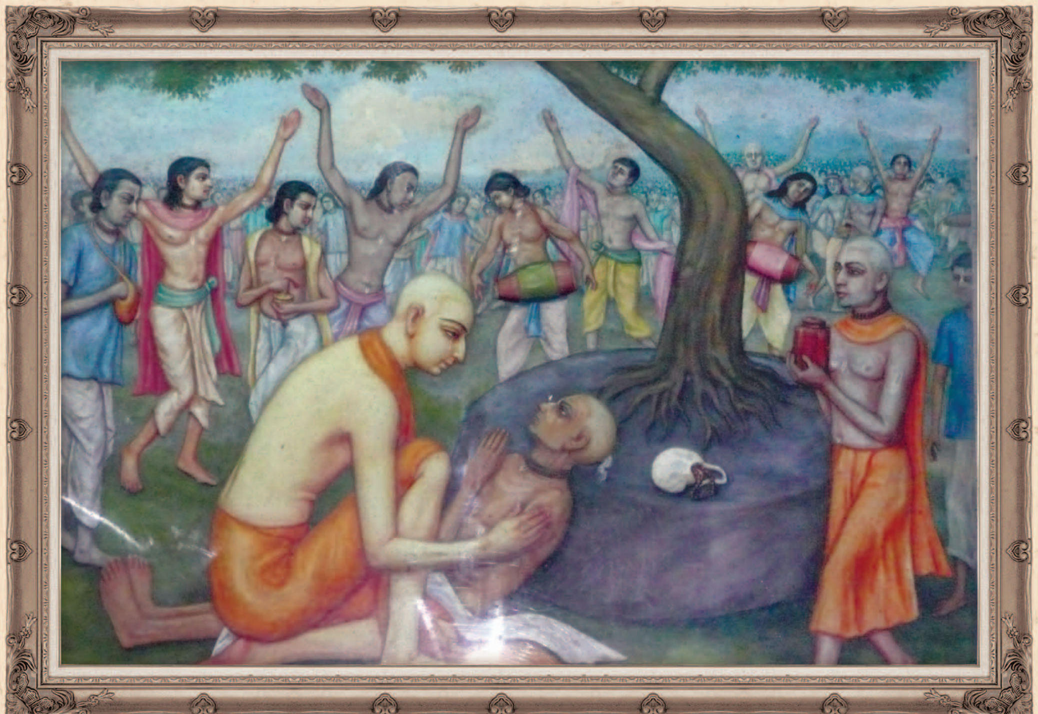

श्रील हरिदास ठाकुरके अन्तिम समयमें सपरिकर श्रीमन् महाप्रभुका समागम

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकुरकी

त्यक्त देहको गोदमें लेकर नृत्य

श्रील हरिदास ठाकुरके दिव्य कलेवरको समुद्र-स्नान कराते भक्त

सपरिकर श्रीमन् महाप्रभु द्वारा श्रील हरिदास ठाकुरको समाधि-प्रदान

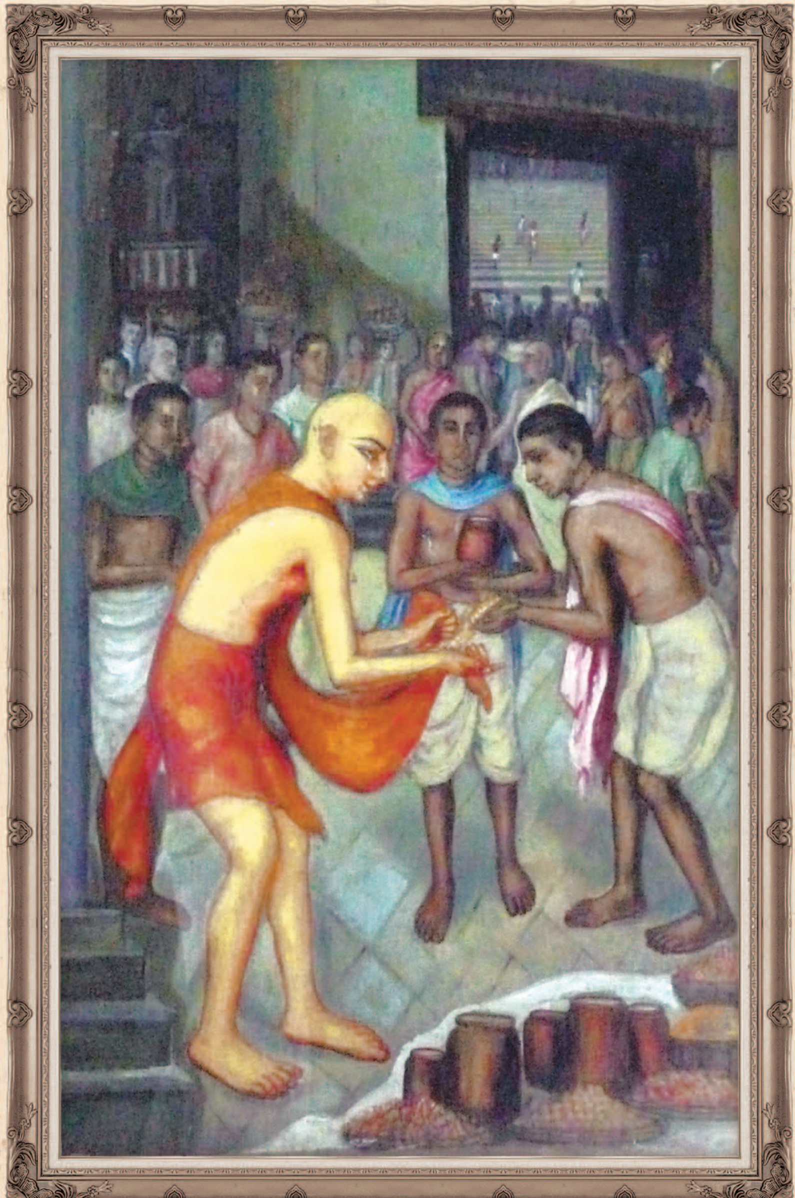

श्रील हरिदास ठाकुरके विरह-महोत्सव हेतु भिक्षा माँगते श्रीमन् महाप्रभु

(पृष्ठभूमि)

प्रत्येक युगमें भगवान्‌को प्राप्त करनेके भिन्न-भिन्न साधन

प्रत्येक युगमें भगवान्‌को प्राप्त करनेके अलग-अलग साधन होते हैं। सत्ययुगमें ध्यानके द्वारा, त्रेतामें यज्ञके द्वारा तथा द्वापरमें अर्चनके द्वारा लोग भगवान्‌की आराधना करते थे। परन्तु इस कलियुगमें ये तीनों ही उपाय निम्न कारणोंसे निष्फल हैं—

(१) सत्ययुगमें लोगोंकी आयु एक लाख वर्ष होती थी, अतः लोग हजारों वर्षों तक भी तपस्या अथवा ध्यानके द्वारा सिद्धि प्राप्त कर लेते थे। परन्तु कलियुगमें मनुष्यकी आयु अधिक-से-अधिक प्रायः एक सौ वर्षकी होती है और उसमें भी अनेकों व्याधियाँ हैं। अतः कलियुगमें ध्यान सम्भव नहीं है।

(२) त्रेतायुगमें लोग अश्वमेध, अग्निहोम तथा गौमेध यज्ञ आदि अनुष्ठानोंके द्वारा सिद्धि प्राप्त करते थे। उस समय ब्राह्मणलोग भी आचरणशील तथा मन्त्रसिद्ध होते थे। वे जिस भी देवताको आह्वान करते थे, वह साक्षात् रूपसे प्रकट हो जाता था। परन्तु इस कलियुगमें मन्त्रसिद्ध ब्राह्मणोंका पूर्ण रूपसे अभाव हो गया है तथा इस युगमें ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोचित आचार-विचारसे भी भ्रष्ट हो जानेके कारण तथाकथित ब्राह्मण मात्र ही हैं। अतः ऐसे ब्राह्मणोंके द्वारा यज्ञ करवानेपर किसीका भी कल्याण सम्भव नहीं है।

(३) द्वापरयुगमें लोग बड़े-बड़े मन्दिरोंका निर्माणकर तथा उसमें श्रीविग्रहकी प्रतिष्ठाकर भगवान्‌का अर्चन-पूजन करके सिद्धि प्राप्त करते थे, परन्तु कलियुगमें मनकी

चञ्चलताके कारण अर्चनके द्वारा भी सिद्धि प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

कलियुगके जीवोंके लिए भगवान्‌को प्राप्त करनेका साधन

कलियुगके जीव अल्प आयु, आचरणशील ब्राह्मणोंके अभाव तथा मनकी चञ्चलताके कारण क्रमशः ध्यान, यज्ञ तथा अर्चनके द्वारा सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकते। अतएव उनकी दशा अति दयनीय है।

कलियुगके जीवोंकी ऐसी दयनीय दशाकी चिन्ता करके भगवान्‌का हृदय द्रवित हो गया। उनपर कृपा करनेके लिए भगवान् स्वयं ही अपनी समस्त शक्तियोंके साथ अपने नामके रूपमें इस जगत्‌में अवतरित हो गये। परम दयालु भगवान्‌ने कलियुगके मन्द बुद्धि, भाग्यहीन, आलस्य प्रधान जीवोंको विशेष सुविधा प्रदान करनेके लिए 'नाम' ग्रहण करनेमें किसी प्रकारका भी विधि-निषेध आदि कोई भी नियम नहीं रखा अर्थात् किसी भी समय, किसी भी स्थानपर तथा किसी भी अवस्था (पवित्र-अपवित्र) में 'नाम' ग्रहण किया जा सकता है।

इस विषयमें प्रसङ्गवशतः यहाँपर अनेकानेक शास्त्रीय प्रमाणोंमेंसे कु

कलियुगमें नामके रूपमें श्रीकृष्णका अवतार

कलिकाले नाम रूपे कृष्ण अवतार।
नाम हैते हय सर्व जगत् निस्तार॥

नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म।
सर्वमन्त्रसार नाम एइ शास्त्र मर्म॥

(चै॰ च॰ आ॰ १७/२२, ७/७४)

कलियुगमें श्रीकृष्ण नामके रूपमें अवतरित हुए हैं। कृष्णनामसे ही समस्त जगत्‌का उद्धार होता है। कलियुगमें

नामके अतिरिक्त सभी धर्म व्यर्थ हैं। समस्त मन्त्रोंका सार हरिनाम ही है, तथा यही सभी शास्त्रोंका निगूढ़ अर्थ है।

कलिकल्मष नाशकारी श्रीनामसङ्कीर्त्तन

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

इति षोड़शकं नाम्नां कलिकल्मषनाशनम्।
नातः परतरोपायः सर्ववेदेषु दृश्यते॥

(कलिसन्तरणोपनिषत्)

'हरे कृष्ण' इत्यादि सोलह नाम कलियुगके कल्मषको नाश करनेवाले हैं, समस्त वेदोंका अनुशीलन करनेपर इसकी अपेक्षा श्रेष्ठ अन्य कोई उपाय नहीं देखा जाता।

कलियुगमें अन्य साधनोंकी निरर्थकता

हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

(बृहन्नारदीयपुराण ३८/१२६)

सत्ययुगमें ध्यान, त्रेतामें यज्ञ और द्वापरमें अर्चनकी प्रधानता होती है। परन्तु कलियुगमें हरिनाम ही मेरा जीवन है, हरिनाम ही मेरा जीवन है, हरिनाम ही मेरा जीवन है। कलियुगमें नामके अतिरिक्त जीवकी कोई अन्य गति नहीं, अन्य गति नहीं, अन्य गति नहीं है। तीन बार उक्ति द्वारा कलियुगमें हरिनामके अतिरिक्त अन्य साधनोंकी निरर्थकता दिखलायी गयी है।

नामोच्चारणकारीको कलिके दोष स्पर्श नहीं करते

हरे केशव गोविन्द वासुदेव जगन्मय।
इतीरयन्ति ये नित्यं न हि तान् बाधते कलिः॥

(बृहन्नारदीयपुराण)

जो लोग नित्यकाल “हे हरे! हे गोविन्द! हे केशव! हे वासुदेव! हे जगन्मय!”—ऐसा कहकर कीर्त्तन करते हैं, उन्हें कलिका प्रभाव तनिक भी बाधा नहीं दे सकता है।

नाममें ही भगवान्‌की समस्त शक्तियोंका समावेश

दानव्रततपस्तीर्थक्षेत्रादीनाञ्च या स्थिताः।
शक्तयो देवमहतां सर्वपापहराः शुभाः॥
राजसूयाश्वमेधानां ज्ञानसाध्यात्मवस्तुनः।
आकृष्य हरिणा सर्वाः स्थापिता स्वेषु नामसु॥
(स्कन्दपुराण)

दानमें, व्रतमें, तपमें, तीर्थ-क्षेत्रोंमें, प्रधान-प्रधान देवताओंमें समस्त प्रकारके पापोंको हरण करनेवाले सत्कर्मोंमें, शक्तिसमूहमें, राजसूय और अश्वमेध यज्ञादिमें तथा ज्ञान-साध्य आत्म वस्तुओंमें—जहाँ भी जो कु
आकर्षणकर अपने नाममें स्थापन कर दिया है।

नामसङ्कीर्त्तन सभी अवस्थाओंमें सम्भवपर

न देशनियमस् तस्मिन् न कालनियमस्तथा।
नोच्छिष्टादौ निषेधोऽस्ति श्रीहरेर्नाम्नि लुब्धक॥
(विष्णु-धर्मोत्तर)

हे नामके प्रति लुब्ध (लोभी) जन! भगवन्नाम-कीर्त्तनमें देश और कालका कोई नियम या विचार नहीं है तथा उच्छिष्ट-मुखसे अथवा किसी भी अशुचि अवस्थामें इसका निषेध नहीं है अर्थात् कोई भी व्यक्ति पवित्र और अपवित्र समस्त अवस्थाओंमें हरिनामकीर्त्तन कर सकता है।

नामसङ्कीर्त्तनके द्वारा ही भजनके सभी अङ्गोंकी पूर्णता

मन्त्रतस्तन्त्रतश्छिद्रं देशकालार्हवस्तुतः।
सर्वं करोति निश्छिद्रमनुसङ्कीर्त्तनं तव॥
(श्रीमद्भा॰ ८/२३/१६)

श्रीशुक्राचार्यने कहा—मन्त्रोंके जप आदिमें (स्वर आदिके उच्चारणमें त्रुटिके कारण) तन्त्रमें (विपरीत क्रमके द्वारा उत्पन्न त्रुटिसे) और देश, काल, पात्र तथा वस्तुमें (दक्षिणा आदिमें) जो-जो न्यूनताएँ होती हैं, वे सभी आपके नामसङ्कीर्त्तन मात्रसे ही निश्छिद्र और परिपूर्ण हो जाती है।

कलियुगका महान् गुण

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत्॥
(श्रीमद्भा॰ १२/३/५१)

यद्यपि कलियुग समस्त दोषोंका समुद्र है, तथापि हे राजन्! कलिका एक महान् गुण यह है कि श्रीकृष्णकीर्त्तनके द्वारा जीव मायाके बन्धनसे मुक्त होकर श्रीकृष्णरूप परतत्त्वको प्राप्त करते हैं।

कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः।
यत्र सङ्कीर्त्तनेनैव सर्वस्वार्थोऽपि लभ्यते॥
(श्रीमद्भा॰ ११/५/३६)

जिस कलियुगमें सङ्कीर्त्तनके द्वारा ही समस्त अभीष्ट सिद्ध होते हैं, सारग्राही (सारवस्तुको ग्रहण करनेवाले) गुणज्ञ (कलिके महान् गुणको जाननेवाले) श्रेष्ठपुरुष उस कलिको ही धन्य कलि कहते हैं।

कलियुगमें हरिनामकी प्रधानता

ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन्।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्य केशवम्॥
(पाद्मोत्तर खण्डमें ४२ अध्याय)

सत्ययुगमें ध्यानके द्वारा, त्रेतामें यज्ञोंका अनुष्ठान करनेसे तथा द्वापरमें परिचर्याके द्वारा जो फल प्राप्त होता है, कलियुगमें एकमात्र हरिनामकीर्त्तन करनेसे वह सब फल प्राप्त हो जाता है।

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्त्तनात्॥
(श्रीमद्भा॰ १२/३/५२)

सत्ययुगमें विष्णुके ध्यानके द्वारा, त्रेतायुगमें यज्ञके द्वारा और द्वापरमें परिचर्या (सेवा–पूजा) द्वारा जो कु
है, कलियुगमें केवल हरिकीर्त्तनके द्वारा वह सब प्राप्त किया जा सकता है।

परम मङ्गलमय श्रीहरिनामके प्रति कलियुगके जीवोंका अनादर

यन्नामधेयं म्रियमाण आतुरः पतन्
स्खलन् वा विवशो गृणन् पुमान्।
विमुक्तकर्मार्गल उत्तमां गतिं प्राप्नोति
यक्ष्यन्ति न तं कलौ जनाः॥
(श्रीमद्भा. १२/३/४४)

मृत्युके समय आतुरताकी स्थितिमें अथवा गिरते या फिसलते समय विवश होकर भी यदि मनुष्य भगवान्के किसी एक नामका भी उच्चारण कर ले, तो उसके समस्त कर्मबन्धन छिन्न–भिन्न हो जाते हैं और उसे उत्तम–से–उत्तम गति प्राप्त होती है। परन्तु हाय! कलियुगमें लोग ऐसे दयामय भगवान्की आराधनासे भी विमुख हो जाते हैं।

अतएव निष्कर्ष यह है कि त्रिकालदर्शी, भ्रम, प्रमाद, विप्रलिप्सा, करणापाटव आदि दोषोंसे रहित मुक्तपुरुषोंने 'श्रीहरिनाम–सङ्कीर्त्तन' को ही कलियुगके जीवोंके उद्धारका एकमात्र उपाय बतलाया है।

स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचैतन्यदेव तथा उनके परिकरोंके द्वारा जीवोंको शिक्षा प्रदान

यद्यपि शास्त्रोंमें यत्र–तत्र–सर्वत्र श्रीहरिनाम–सङ्कीर्त्तनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की गयी है, तथापि कलियुगके हतभागे

जीवोंमें इतना भी सामर्थ्य नहीं है कि वे शास्त्रोंके उक्त सारको संग्रह करके अपने जीवनमें पालन कर सके। अतएव परम दयालु भगवान्ने स्वयं ही श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूपमें अवतरित होकर स्वयं अपना कलि-पावन नामसङ्कीर्त्तन करके जगत्के जीवोंको शिक्षा दी। पुनः समय-समयपर अपने उपदेशोंके माध्यमसे भी भगवान्ने यही प्रदर्शित किया। यथा—

नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म।
सर्वमन्त्रसार 'नाम' एइ शास्त्र मर्म॥
(चै॰ च॰ आ॰ ७/७४)

साध्य-साधन तत्त्व जे किछु सकल।
हरिनाम-सङ्कीर्त्तने मिलिबे सकल॥
(चै॰ च॰ म॰ २०/१०३)

श्रीहरिनामके बिना कलियुगके जीवोंका और कोई भी धर्म नहीं है। सभी शास्त्र यही कहते हैं कि भगवन्नाम सभी मन्त्रोंका सार है। साध्य और साधन नामक जितने भी तत्त्व हैं, वह सभी हरिनाम-सङ्कीर्त्तनके द्वारा प्राप्त हो जाते हैं।

नाम सङ्कीर्तने हय सर्वानर्थनाश।
सर्वशुभोदय कृष्णप्रेमेर उल्लास॥

सङ्कीर्तन हैते पाप-संसार नाशन।
चित्तशुद्धि, सर्वभक्तिसाधन-उद्गम॥

कृष्ण प्रेमोद्गम, प्रेमामृत-आस्वादन।
कृष्णप्राप्ति, सेवामृतसमुद्रे मज्जन॥
(चै॰ च॰ अ॰ २०/११, १३, १४)

श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तनसे समस्त प्रकारके अनर्थ दूर हो जाते हैं, चित्त निर्मल हो जाता है, जन्म-जन्मान्तरके पाप और उससे प्राप्त पुनः-पुनः जन्म-मृत्युरूप संसार नष्ट हो जाते हैं, समस्त प्रकारके कल्याण उदित हो जाते हैं, प्रेमाभक्तिके सभी

साधनोंका सञ्चार होने लगता है, कृष्णप्रेमका उदय होता है, प्रेमामृतका रसास्वादन होने लगता है, श्रीकृष्णकी प्राप्ति होती है और अन्तमें सेवामृतरूपी समुद्रमें सम्पूर्ण रूपसे निमग्न होनेपर सुशीलता और निर्मलता प्राप्त होती है।

श्रीमन् महाप्रभुने केवल स्वयं ही नहीं, अपितु अपने दायें तथा बायें हाथ स्वरूप श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
प्रेरित किया। अनेकानेक प्रिय परिकरोंके माध्यमसे, विशेष करके श्रील हरिदास ठाकु
अपार महिमाको जगत्‌में भलीभाँति प्रकाशित करवाया। भगवान् जानते थे कि जब तक जीव किसी वस्तुकी महिमा या चमत्कारको न देख ले, तब तक उस वस्तुके प्रति उसका विश्वास ही नहीं होता। अतः श्रील हरिदास ठाकु
माध्यमसे उन्होंने जगत्-वासियोंको दिखाया कि कैसे श्रीहरिनामके गौण फलस्वरूप भयङ्कर-से-भयङ्कर विपत्तियोंको आसानीसे पार किया जा सकता है और उसके मुख्य फलस्वरूप भगवान्‌की विशेष करुणा प्राप्त की जा सकती है।

इस श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तनका शास्त्रोंमें विपुल रूपमें गुणगान किया गया है तथा इसी श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तनको वितरण करनेके लिए स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूपमें प्रकटित हुए। अपने सम्पूर्ण जीवनमें, दिन-रात, क्षण-क्षणमें इस श्रीकृष्ण-सङ्कीर्त्तनमें निमग्न रहनेवाले श्रील हरिदास ठाकु
जीवन-चरित्रमें अनेकानेक शिक्षणीय प्रसङ्ग हैं, जिनका अनुशीलन करके सभी जीव श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा आचरित एवं प्रचारित विमल कृष्णप्रेमको प्राप्त करके अपने जीवनको धन्यातिधन्य कर सकते हैं।

मैं सर्वप्रथम अपने परमाराध्यतम श्रीगुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज, श्रीचैतन्यचरितामृत तथा श्रीचैतन्यभागवत नामक ग्रन्थोंके

'अनुभाष्य' तथा 'गौड़ीय-भाष्य' के लेखक परमगुरुदेव श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकु
लेखक परात्पर गुरुदेव सच्चिदानन्द भक्तिविनोद ठाकु
चरितामृतके रचयिता श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी तथा श्रीचैतन्यभागवतके रचयिता, चैतन्य-लीलाके व्यास श्रील वृन्दावन दास ठाकु
महाप्रभुको बार-बार प्रणामकर उन सभीकी अहैतुकी कृपालेशसे सर्वथा अयोग्य होते हुए भी नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
जीवन-चरित्रको संग्रह करनेमें प्रवृत्त हो रहा हूँ।

श्रील हरिदास ठाकु
हो, जय हो।

प्रथम अध्याय

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुके परिकर श्रीशिवानन्द सेनके आत्मज श्रील कविकर्णपूरने स्वरचित श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका नामक ग्रन्थमें लिखा है—

ऋचीकस्य मुनेः पुत्रो नाम्ना ब्रह्मा महातपाः।
प्रह्लादेन समं जातो हरिदासाख्यकोऽपि सन्॥
(श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका ९३)

ऋचीक मुनिके पुत्र महातपा-ब्रह्मा श्रीप्रह्लादके साथ मिलकर अब श्रीहरिदास ठाकु

मुरारिगुप्तचरणैश्चैतन्यचरितामृते ।
उक्तो मुनिसुतः प्रातस्तुलसीपत्रमाहरण्॥

अधौतमभिशप्तस्तं पित्रा यवनतां गतः।
स एव हरिदासः सन् जातः परमभक्तिमान्॥
(श्रीगौरगणोद्देश-दीपिका ९४-९५)

श्रीमुरारिगुप्त द्वारा रचित श्रीचैतन्यचरितामृत[१] ग्रन्थमें कहा गया है कि किसी एक मुनिकु
प्रातःकाल तुलसी पत्र चयन करके, उन्हें धोये बिना ही अपने पिताको (भगवान्‌की सेवाके उद्देश्यसे) अर्पित कर दिये थे। इसी कारण उनके पिताने उन्हें यवन होनेका अभिशाप दिया था।

---

[१] वर्त्तमान समयमें यह ग्रन्थ श्रीचैतन्यचरितके नामसे प्रसिद्ध है।

अपने पिता द्वारा अभिशप्त उन्हीं मुनिकु
(यवकु
जन्मग्रहण किया है।

सच्चिदानन्द श्रील भक्तिविनोद ठाकु
धाम-माहात्म्यके पञ्चम अध्याय (१२५-१५७ तक) में वर्णन किया है—"जिस समय श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रील जीव गोस्वामीको श्रीनवद्वीपधामकी परिक्रमा कराते हुए श्रीअन्तर्द्वीपमें पहुँचे, तब एक स्थानकी ओर इङ्गित करके उन्होंने कहा—'इस स्थानपर द्वापरयुगके अन्तमें ब्रह्माने श्रीगौराङ्ग महाप्रभुकी कृपा प्राप्त करनेकी आशासे तपस्याकी थी।' (ब्रह्माजीके पूर्व वृत्तान्तको बतलाते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभुने कहा)—'श्रीकृष्णलीलामें बछड़े तथा ग्वालबालोंको चुराकर ब्रह्माने अपनी माया द्वारा गोविन्दसे छलना की थी। अपनी मायाको पराजित होता देखकर चतुर्मुख ब्रह्मा अपने द्वारा किये गये अपराधके कारण बहुत दुःखी हुए। अनेक स्तव-स्तुति करनेके उपरान्त ब्रह्माने श्रीकृष्णके चरणोंमें क्षमा-प्रार्थना की और वृन्दावन-पति श्रीकृष्णने उन्हें क्षमा कर दिया।

"तब ब्रह्माजीने मन-ही-मन विचार किया कि 'मेरी बह्मबुद्धि (मैं जगत्की सृष्टि करनेवाला हूँ) बहुत घृणित है। इसी बुद्धि-दोषके कारण मैं कृष्णप्रेमसे रहित और व्रजलीलाके रसोंका आस्वादन करनेसे वञ्चित हूँ। यदि मैं गोपाल (ग्वालबाल) के रूपमें जन्म प्राप्त करता, तो अनायास ही गोपियोंके स्वामी श्रीकृष्णकी सेवा कर पाता। उस लीलारसको देखनेका सौभाग्य तो मुझे नहीं मिला, किन्तु अब श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके प्रति मेरी कु
समय तक ब्रह्माने ध्यान लगाकर इसी अन्तर्द्वीपमें तपस्या की थी। कु
ब्रह्माके सामने प्रकट होकर कहा—'ओहे ब्रह्मा! तुम्हारी

तपस्यासे प्रसन्न होकर मैं तुम्हें वही वर देने आया हूँ, जिसकी तुम आशा कर रहे हो।' जब ब्रह्माने नेत्र खोलकर श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके दर्शन किये, तो वह मूर्च्छित होकर वहीं भूमिपर गिर पड़े। तब महाप्रभुने ब्रह्माके मस्तकपर अपने चरण रख दिये। दिव्यज्ञान प्राप्त करके ब्रह्मा स्तव करते हुए कहने लगे—'मैं बहुत दीन-हीन हूँ। अभिमानके वशीभूत होकर आपके चरणोंमें अपराध करनेके फलस्वरूप जड़रसमें निमग्न हो रहा हूँ। ऐसा सभी शास्त्रोंमें वर्णन है कि मैं (ब्रह्मा), पञ्चानन (शिव) तथा इन्द्र आदि सभी देवता आपके आधिकारिक दास हैं। हमारे भाग्यमें आपका शुद्धदास बनना नहीं लिखा है, इसलिए माया हमारे लिए अपना मोहरूपी जाल बिछाती है। मेरे जीवनका प्रथम परार्द्ध (आधा जीवन) तो बीत गया है, किन्तु अब मुझे बहुत चिन्ता हो रही है कि मेरा दूसरा परार्द्ध कैसे व्यतीत होगा? बहिर्मुख होनेपर मनमें बहुत कष्ट होता है।

'एइमात्र तव पदे प्रार्थना आमार।
प्रकट-लीलाय जेन हइ परिवार॥

(श्रीनवद्वीपधाम-माहात्म्य ५/१४३)

'आपके श्रीचरणोंमें मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है कि मैं आपकी प्रकटलीलामें आपका परिकर बनकर आऊँ।

'ब्रह्मबुद्धि दूरे जाय, हेन जन्म पाइ।
तोमार सङ्गेते थाकि' तव गुण गाइ॥

(श्रीनवद्वीपधाम-माहात्म्य ५/१४४)

'मुझे ऐसा जन्म प्राप्त हो, जिससे मेरी ब्रह्मबुद्धि दूर हो जाये, मैं सब समय आपके साथ रहूँ और आपका ही गुणगान करूँ।'

ब्रह्माकी प्रार्थना सुनकर भगवान् श्रीगौरहरिने 'तथास्तु' कहकर वर प्रदान किया।

'जे-समये मम लीला प्रकट हइबे।
यवनेर गृहे तुमि जनम लभिबे॥
आपनाके हीन बलि' हइबे गेयान।
हरिदास ह'बे तुमि शून्य अभिमान॥
तिनलक्ष हरिनाम जिह्वाग्रे नाचिबे।
निर्याण-समय तुमि आमाके देखिबे॥
(श्रीनवद्वीपधाम-माहात्म्य ५/१४६-१४८)

"श्रीमन् महाप्रभुने कहा कि 'जिस समय मेरी लीला प्रकट होगी, उस समय तुम एक यवनके घरमें जन्म लोगे। तुम सब समय अपनेको दीन-हीन समझोगे। तुम्हारा नाम हरिदास होगा तथा तुम्हें किसी प्रकारका कोई अभिमान नहीं होगा। तुम्हारी जिह्वापर प्रतिदिन तीन लाख हरिनाम नृत्य करेगा। निर्याण (देहत्याग) के समय तुम्हें मेरे दर्शन प्राप्त होंगे। इस साधनके बलपर तुम द्विपरार्द्धके अन्तमें इस नवद्वीपधामको प्राप्त करोगे तथा नित्य रसमें निमज्जित होओगे। हे ब्रह्मा! तुम मेरे हृदयकी बात सुनो। मेरी इन बातोंको कभी भी इधर-उधर शास्त्रोंमें व्यक्त मत करना। मैं भक्तका भाव लेकर भक्तिरसका आस्वादन करूँगा तथा परम दुर्लभ सङ्कीर्त्तनको प्रकाशित करूँगा। अन्य-अन्य अवतारोंके समय जितने भक्त थे, उन सभीको व्रजरसमें निमज्जित कर दूँगा। मेरा हृदय श्रीराधिकाके प्रेमसे वशीभूत है, मैं उन्हींके भाव तथा अङ्गकान्तिको लेकर प्रकट होऊँगा। मेरी सेवा करके श्रीराधाको किस सुखकी प्राप्ति होती है, मैं राधाभाव लेकर उस सुखका आस्वादन करूँगा। आजसे ही तुम मेरे शिष्यत्वको प्राप्त करोगे तथा हरिदासके रूपमें निरन्तर मेरी सेवा करोगे।' इतना कहकर श्रीमन् महाप्रभु अन्तर्धान हो गये तथा ब्रह्मा मूर्च्छित होकर गिर पड़े। (पुनः चेतनता प्राप्त करके विह्वल

होकर कहने लगे—) 'हा गौराङ्ग! हे दीनबन्धो! हे भक्तवत्सल! मुझे कब आपके श्रीचरणकमलोंकी प्राप्ति होगी?'"

अतएव उपरोक्त उपाख्यानसे यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रीमन् महाप्रभुके परिकर नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
ही हैं।

इस प्रसङ्गके उपसंहारमें श्रील वृन्दावनदास ठाकु
श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीके वचनोंको उद्धृत किया जा रहा है, यथा—

केह बले,—'चतुर्मुख जेन हरिदास।'
केह बले,—'प्रह्लादेर जेन परकाश॥'

सर्वमते महाभागवत हरिदास।
चैतन्य गोष्ठीर सङ्गे जाहार विलास॥

(चै॰ भा॰ म॰ १०/६-७)

यद्यपि कोई-कोई कहते हैं कि हरिदास चतुर्मुख ब्रह्मा हैं, तो कोई मानते है कि वे प्रह्लादके प्रकाश हैं, तथापि सभीका एक मत यही है कि श्रीमन् महाप्रभुके पार्षदोंके साथ विहार करनेवाले श्रील हरिदास ठाकु

सत्य सत्य हरिदास-जगत-ईश्वर।
चैतन्यचन्द्रेर महा-मुख्य अनुचर॥

(चै॰ च॰ आ॰ १६/१४२)

यह सत्य है, सत्य है कि श्रील हरिदास ठाकु
ईश्वर श्रीचैतन्य चन्द्रके एक महान् एवं मुख्य अनुचर हैं।

द्वितीय अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

आविर्भाव

श्रील हरिदास ठाकु
खुलना जिलेके अन्तर्गत बूढ़न नामक गाँवमें आविर्भूत हुए थे, जो कि वर्त्तमानमें बांगलादेशमें है। श्रीमन् महाप्रभु १४०७ शकाब्द (१४७६ ई०) में आविर्भूत हुए। अतएव श्रील हरिदास ठाकु

श्रीईश्वर पुरीपादसे दीक्षाग्रहणरूपी लीलाभिनयके उपरान्त ही श्रीमन् महाप्रभुने कैशोर अवस्था (१० से १५ वर्षकी आयु) में सङ्कीर्त्तन विलास आरम्भ किया था तथा उसी समय ही श्रील हरिदास ठाकु
इससे यही अनुमान लगता है कि श्रील हरिदास ठाकु
लगभग ५० वर्षकी आयुमें श्रीमन् महाप्रभुके सङ्गी बने थे।

श्रीमन् महाप्रभुकी इच्छासे श्रील हरिदास ठाकु
बहुत पहले आविर्भूत हुए थे। कलियुग पावनावतारी श्रीमन् महाप्रभुके सङ्गी होनेसे पहले ही श्रील हरिदास ठाकु
नाम-महिमा प्रकाशक अनेक लीलाएँ की थी। वास्तवमें श्रीमन् महाप्रभुने ही श्रील हरिदास ठाकु
नामकी महिमाका प्रचार करवाया था।

आजकल कोई-कोई कहते हैं कि श्रील हरिदास ठाकु
जन्म ब्राह्मण कु
देहान्तके बाद किसी यवन दम्पत्तिने उनका पालन-पोषण किया था, इसलिए उन्हें यवन हरिदास कहा जाता है। किन्तु यह बात सम्पूर्ण रूपसे गलत है। ऐसा प्रतीत होता है कि

किसी जाति गोसाईंने अपने किसी अपस्वार्थकी सिद्धिके लिए ही ऐसा कहना प्रारम्भ किया होगा तथा उसीकी बातको आधार करके धीरे-धीरे अनेक लोग भ्रमित होकर ऐसा कहने लगे।

श्रील हरिदास ठाकु

श्रीचैतन्यलीलाके व्यास श्रील वृन्दावन दास ठाकु स्वरचित श्रीचैतन्यभागवत आदि-खण्ड (१६/२३७-२४०) में स्पष्ट रूपसे लिखा है—

"जाति, कु
जन्मिलेन नीचकु

"अर्थात् (जागतिक सत्-असत् कर्मोंके फलस्वरूप बद्धजीव उच्च-नीच योनिमें जन्म ग्रहण करता है, उच्च अथवा नीच जातिमें उत्पन्न होना केवल जीवोंके कर्म-फल-भोगका दिग्दर्शनमात्र करानेवाला ही है। किन्तु पारमार्थिक विचारसे) जाति और वंश आदिका कोई मूल्य नहीं है—इसी परमसत्यको जगत्में प्रकाशित करनेके लिए ही मङ्गलमय भगवान्की मङ्गलमय इच्छाके अनुसार ही श्रील हरिदास ठाकु
हुए थे।

"अधम-कु
तथापि से-ई से पूज्य—सर्वशास्त्रे कय॥

"अर्थात् अधम कु
भगवान् विष्णुका भजन करता है, तो वह पूज्य ही हैं—सभी सात्त्वत-शास्त्र उच्च स्वरसे ऐसा गान करते हैं।

"उत्तम-कु
कु

"अर्थात् सत्-कर्म करनेके फलस्वरूप उत्तमकु
ग्रहण करनेपर भी श्रीकृष्णभजन नहीं करनेवालेके लिए

नरककी प्राप्ति होना अवश्यम्भावी है। उसका उच्च कु
नरक जानेसे उसकी रक्षा नहीं कर सकता।

"ऐई सब वेद–वाक्येर साक्षी देखाइते।
जन्मिलेन हरिदास अधम–कु

"अर्थात् उपरोक्त वेद–वाक्योंकी सत्यताको प्रदर्शित करनेके लिए ही श्रील हरिदास ठाकु
किया।"

यहाँ यह कहना भी असङ्गत नहीं होगा कि श्रीब्रह्माने स्वयं ही श्रीगौर–अवतारके समय नीचकु
करनेके लिए भगवान्से प्रार्थना की थी, ताकि उन्हें पुनः अहङ्कारके कारण गौरलीलाके दर्शनसे वञ्चित न होना पड़े।

गृह–त्याग

यद्यपि श्रील हरिदास ठाकु
थे, तथापि बाल्यकालसे ही उनकी स्वाभाविक रूपमें हरिनाममें बहुत रुचि थी। बचपनमें ही उनके माता–पिता परलोक सिधार गये थे। अतः ये अपने घर तथा गाँवको त्यागकर यशोहर जिलेके एक गाँव बेनापोलमें आ गये। उस समय इन्होंने किशोर अवस्थाको पारकर युवा अवस्थामें प्रवेशमात्र किया था। बेनापोलके जङ्गलमें ही वे एक निर्जन स्थानमें कु
प्रतिदिन अपतित रूपसे तीन लाख हरिनाम करते थे तथा तुलसीकी सेवा करते थे अर्थात् नित्यप्रति तुलसीको जल प्रदान करते थे, उनकी परिक्रमा तथा स्तुति आदि करते थे।

पारमार्थिक जीवनके आरम्भसे ही विषयोंके प्रति सम्पूर्ण रूपसे उदासीन

श्रील हरिदास ठाकु
घर जाकर भिक्षा करते थे। देह यात्राके लिए इस भोजनके

अतिरिक्त किसी भी अन्य वस्तुके संग्रहके लिए वे तनिक भी प्रयास नहीं करते थे। उनका पूरा समय भजन करनेमें ही व्यतीत होता था। भजनमें उनकी प्रगाढ़ निष्ठा, उनकी निष्किञ्चनता तथा उनकी वैष्णवताके कारण सभी लोग उनके प्रति बहुत श्रद्धा और सेवाकी भावना रखते थे।

तृतीय अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी स्वरचित श्रीचैतन्य-चरितामृतमें वर्णन करते हैं—

“हरिदासेर गुणगण—असंख्य, अपार।
केह कोन अंशे वर्णि' नाहि पाय पार॥

(चै॰ च॰ अ॰ ३/९४)

“श्रील हरिदास ठाकु
कोई भी उनके गुणोंको सम्पूर्ण रूपसे वर्णन करनेमें समर्थ नहीं है। अतः जो कोई भी उनके गुणोंका वर्णन करता है, वह मात्र आंशिक रूपमें ही उनके गुणोंका वर्णन कर पाता है, क्योंकि उनके गुण-महिमाका अन्त ही नहीं है।

“चैतन्यमङ्गले श्रीवृन्दावन दास।
हरिदासेर गुण किछु करियाछेन प्रकाश॥

(चै॰ च॰ अ॰ ३/९५)

“श्रील वृन्दावन दास ठाकु
समयमें श्रीचैतन्यभागवतके नामसे प्रसिद्ध ग्रन्थ) में श्रील हरिदास ठाकु

श्रीचैतन्यभागवतमें अवर्णित चरित्रोंका ही श्रीचैतन्यचरितामृतमें वर्णन

“सब कहा ना जाय हरिदासेर चरित्र।
केह किछु कहे करिते आपना पवित्र॥

(चै॰ च॰ अ॰ ३/९६)

"यद्यपि श्रील हरिदास ठाकु
वर्णन नहीं कर सकता, तथापि अपनेको पवित्र करनेके लिए ही किसी–किसी ने कु

"वृन्दावन दास जाहा ना कैला वर्णन।
हरिदासेर गुण किछु शुन, भक्तगण॥
(चै॰ च॰ अ॰ ३/९७)

"श्रील वृन्दावन दास ठाकु
हरिदास ठाकु
हरिदास ठाकु
भक्तगण! आप उन्हें सुनिये।"

ईर्ष्यालु रामचन्द्र खानकी मानसिक स्थिति

जिस समय श्रील हरिदास ठाकु
उस समय रामचन्द्र खान नामक एक व्यक्ति वहाँका जमींदार था। वह वैष्णव–विद्वेषी, धर्म–विद्वेषी तथा ईश्वर–विद्वेषी था। बेनापोलके लोगोंके द्वारा किये जा रहे श्रील हरिदास ठाकु
सम्मानको देखकर उसे ईर्ष्या होने लगी। वह विचार करने लगा—"मैं यहाँका जमींदार हूँ, परन्तु लोग मेरा सम्मान न कर इस वैष्णव वेशधारी दरिद्र मुसलमानका सम्मान कर रहे हैं। अतः यदि मैं किसी भी प्रकारसे इसे लोगोंके सामने नीचा दिखला दूँ, तो लोग इससे घृणा करने लगेंगे।" वास्तवमें अपनेसे श्रेष्ठ व्यक्तिका सुयश–सुनाम सहन करनेकी क्षमता बहुत कम लोगोंमें ही होती है। जिस प्रकार अधिकांश लोग किसीके मुखसे दूसरोंकी महिमा श्रवण करके मन–ही–मन उनका अनिष्ट करनेकी इच्छा पोषण करते हैं, कोई–न–कोई मिथ्या आरोप लगाकर जगत्–वासियोंके सामने उन्हें नीचा दिखलाना चाहते हैं, उदारचित्त होकर उनके गुणोंकी ओर दृष्टिपात न करके गिद्धकी भाँति बहुत उच्च स्थानपर बैठकर भी गन्दगीको ढूँढ़नेकी भाँति उनमें अवगुण

और त्रुटियाँ ढूँढ़नेका प्रयास करते हैं, उसी प्रकार रामचन्द्र खान भी अपने मनमें श्रील हरिदास ठाकु
प्रकारकी कु
वैष्णव-विद्वेषके फलस्वरूप उत्पन्न हुए वैष्णव-अपराधके कारण ही उसके मनमें आ रही थीं।

रामचन्द्र खानके द्वारा वेश्याके माध्यमसे श्रील हरिदास ठाकु

रामचन्द्र खान श्रील हरिदास ठाकु
क्योंकि जब तक वह उनका कोई दोष लोगोंको नहीं दिखायेगा, तब तक तो कोई भी उसकी बात नहीं सुनेगा। परन्तु गुणोंके भण्डार श्रील हरिदास ठाकु
उसे दिखलायी नहीं दिया, जिसके छलसे वह उन्हें लोगोंकी दृष्टिमें गिरा पाता। बहुत चेष्टा करनेपर भी जब वह सफल नहीं हुआ, तब अन्तमें उसने वेश्याओंको बुलाकर श्रील हरिदास ठाकु
किया। उसने श्रील हरिदास ठाकु
स्त्री-लोलुप समझा तथा मन-ही-मन विचार किया कि सुन्दरी मेनकाने केवल अपने घुघुरुँओंके शब्द द्वारा ही जब तपस्वी विश्वामित्रकी हजारों वर्षोंकी तपस्या भङ्ग कर दी थी, तब फिर इस दो दिनके वैरागी हरिदासका तो कहना ही क्या? ये वेश्याएँ तो हरिदासका अपमान करवानेमें अमोघ उपाय सिद्ध होगी, क्योंकि जगत्में देखा जाता है कि लोग धन-सम्पत्तिके बदले भी स्त्रीको प्राप्त करनेकी चेष्टा करते हैं, स्त्रीके कटाक्ष-बाणसे घायल होकर लोग इन्द्रके समान ऐश्वर्यकी भी तृणकी भाँति उपेक्षा करके स्त्रीके सङ्ग लाभरूपी औषधकी ही कामना करते हैं। यह सब विचारकर उसने वेश्याओंसे कहा—"मैं चाहता हूँ कि तुम सब हरिदासके वैराग्य-धर्मका नाश कर दो।"

चरित्रहीन युवती वेश्याका अभिमान

उन वेश्याओंके बीच लक्षहीरा नामकी एक सुन्दर युवती थी। वह अपने रूप तथा यौवनके गर्वमें चूर होकर अत्यधिक विश्वासके साथ कहने लगी—“मैं तीन दिनमें ही उस वैरागी हरिदासकी मतिका हरण कर लूँगी, उसके चित्तको चञ्चल बना दूँगी। मैं उसके चित्तको भजनसे हटाकर अपने प्रति आसक्त करा दूँगी।” उसकी बात सुनकर रामचन्द्र खान कहने लगा—“मैं अपने एक आदमीको भी तुम्हारे साथ भेज देता हूँ, जो तुम दोनोंको रङ्गे हाथों पकड़कर यहाँ ले आयेगा।” वेश्या कहने लगी—“पहले एकबार मेरे साथ उसका मिलन होने दो, दूसरी बार तुम्हारे आदमीको अपने साथ ले जाऊँगी।” वेश्याकी इस योजनाको रामचन्द्र खानने भी स्वीकार कर लिया।

वेश्याका श्रील हरिदास ठाकु

रात्रिके समय वह वेश्या सुन्दर ढंगसे सज-धजकर अत्यन्त उल्लसित होकर श्रील हरिदास ठाकु
पर पहुँच गयी। उस समय वे अपनी कु
होकर उच्च स्वरसे हरिनाम कर रहे थे। कु
आङ्गनमें तुलसीका पौधा लगा हुआ था। वेश्याने पहले तुलसीको प्रणाम किया। तत्पश्चात् उसने कु
जाकर श्रीहरिदास ठाकु
साक्षात् मूर्त्ति श्रील हरिदास ठाकु
माहात्म्यसे ही हो अथवा किसी अभिनयवशतः हो, तुलसीजी तथा वैष्णव प्रवर श्रील हरिदास ठाकु
अनजानेमें ही पापाचरण करनेवाली उस वेश्याने भक्तिके दो अङ्गोंका पालन कर लिया।

वेश्याके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

वह वेश्या श्रील हरिदास ठाकु
खड़ी हो गयी। फिर धीरे-धीरे वस्त्रोंको हटाकर अपने अङ्गोंको दिखाते-दिखाते द्वारपर ही बैठकर बहुत ही सुमधुर स्वरसे कहने लगी—“ठाकु
अभी-अभी युवावस्थामें प्रवेश किया है। ऐसी कौन स्त्री होगी, जो आपको देखकर अपने मनको वशमें कर ले। आपके रूप और यौवनको देखकर मेरा मन बहुत चञ्चल हो रहा है। आपका सङ्ग करनेके लिए मैं बहुत लालायित हूँ। मेरी ऐसी अवस्था हो गयी है कि आपसे सङ्ग किये बिना मैं जीवित नहीं रह सकती।”

श्रील हरिदास ठाकु
करनेका आश्वासन प्रदान

वेश्याकी बात सुनकर श्रील हरिदासने कहा—“मैं तुझे अवश्य ही अङ्गीकार करूँगा। परन्तु अभी मेरी नियमित नाम-संख्या पूर्ण नहीं हुई है। नाम-संख्या पूर्ण न होने तक मैं अन्य कोई भी कार्य नहीं करता। अतः जब तक मैं अपनी नाम-संख्या पूर्ण न कर लूँ, तब तक तुम यहीं बैठकर नामसङ्कीर्त्तन सुनो। नाम-संख्या पूर्ण होते ही मैं तुम्हारे मनकी अभिलाषाको पूर्ण करूँगा।”

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
करके उसके प्रति वैष्णवोचित कृपा ही की, अर्थात् उसे परम मङ्गलकारी श्रीहरिनाम श्रवण करनेका आदेश देकर भजनके एक मुख्य अङ्गको पालन करनेका परामर्श दिया। श्रील हरिदास ठाकु
बैठकर उनके द्वारा उच्चारित हरिनामको श्रवण करेगी, तो

इसके मनका मैल धुल जायेगा, हृदयसे काम-वासना सम्पूर्ण रूपसे दूर हो जायेगी तथा मेरी नाम-संख्याके पूर्ण होनेपर यह स्वयं ही मुझसे नामतत्त्वके विषयमें जिज्ञासा करेगी। उस समय मैं इसके निवेदनको स्वीकार करूँगा। इसलिए श्रील हरिदास ठाकु
होनेपर मैं तुझे अवश्य ही अङ्गीकार करूँगा, अर्थात् तुम्हें निष्कपट साधक जानकर स्वीकार करूँगा और उस समय तुम्हारे जो-जो प्रश्न अथवा संशय होंगे, उन सबका उत्तर प्रदान करूँगा। यदि सचमुच श्रील हरिदास ठाकु
वेश्याकी अभिलाषा पूरी करनेकी इच्छा होती, तो वे अपनी नाम-संख्याके पूर्ण होनेकी अपेक्षा न करते और न ही इस प्रकारके सुयोगको प्राप्त करके अपने नियमकी रक्षाकी बात ही स्मरण रख पाते। उनके लिए उस सुन्दर युवतीके समक्ष सारी रात बैठकर हरिनाम करना असम्भव हो जाता।

वेश्या द्वारा नामाचार्य श्रील हरिदासके द्वारा उच्चारित शुद्ध हरिनामका श्रवण तथा प्रातःकाल अपने स्थानपर प्रस्थान

श्रील हरिदास ठाकु
असमर्थ वह वेश्या उनके वचनोंके बाहरी अर्थको समझकर कु
पुनः उच्चस्वरसे हरिनाम करना आरम्भ कर दिया और वह वेश्या श्रील हरिदास ठाकु
श्रीहरिनामको सुनने लगी। प्रातःकाल हो आया, किन्तु श्रील हरिदास ठाकु
वह वेश्या वहाँसे उठकर चली गयी तथा रामचन्द्र खानसे जाकर बोली—"हरिदासने वचन दिया है कि आज वह अवश्य ही मेरा सङ्ग करेगा, अतः आज अवश्य ही उसके साथ मेरा मिलन होगा।"

दूसरी रात वेश्याका पुनः आगमन तथा श्रील हरिदास ठाकु
न करनेके लिए अनुरोध

दूसरी रातको वह वेश्या फिर श्रील हरिदास ठाकु
पहुँच गयी। श्रील हरिदास ठाकु
कहने लगे—"कल मेरे कारण तुम्हें बहुत कष्ट हुआ। सारी रात तुम्हें चुपचाप बैठ कर जागना पड़ा। तुम सो भी नहीं पायी। फिर मैं तुम्हारी अभिलाषाको भी पूरा नहीं कर पाया, जिससे तुम्हें बहुत ही कष्ट पहुँचा होगा। मैं ही तुम्हें प्राप्त हुए उस कष्टका कारण हूँ, अतः तुम मेरा अपराध ग्रहण मत करना।" यद्यपि वास्तवमें श्रील हरिदास ठाकु
वेश्याको हरिनाम-सङ्कीर्त्तनके श्रवणका सौभाग्य प्रदान करके उसका परम उपकार ही किया था, तथापि बाह्य रूपमें हुए उसके कष्टकी आशङ्का करके श्रील हरिदास ठाकु
उनका अपराध ग्रहण न करनेके लिए अनुरोध किया। इसके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
वैष्णवको अपने आचरण द्वारा प्राणीमात्रको किसी प्रकारका भी उद्वेग नहीं देना चाहिये तथा साथ-ही-साथ यह भी दिखलाया कि किसीका वास्तविक कल्याण चाहनेवालेको कितना अधिक उदार चित्तवाला बनना पड़ता है।

श्रील हरिदास ठाकु
श्रवण करनेका उपदेश प्रदान

श्रीहरिदास ठाकु
अङ्गीकार करूँगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आज मेरी नाम-संख्या अवश्य ही शीघ्र पूरी हो जायेगी। अतः तब तक तुम यहाँ बैठकर हरिनाम-सङ्कीर्त्तनका श्रवण करो। नाम-संख्याके पूर्ण होते ही तुम्हारी इच्छा भी पूर्ण हो जायेगी।"

श्रील हरिदास ठाकु

वह वेश्या रामचन्द्र खानके कहनेपर ही श्रील हरिदास ठाकु
ठाकु
ठाकु
खानसे मुँहमाँगी धन-सम्पत्ति इत्यादि प्राप्त होगी। वह सोचने लगी कि उस धन-सम्पत्तिसे उसकी सब प्रकारकी इच्छाएँ पूर्ण हो जायेंगी, किन्तु श्रील हरिदास ठाकु
दिलासा देते हुए कह रहे हैं—"चिन्ता मत करो, मेरी नाम-संख्याके पूर्ण होनेके साथ-ही-साथ तुम्हारी भी इच्छा पूर्ण हो जायेगी, अर्थात् जिस धन-सम्पत्तिको प्राप्त करके तुम अपनी सब प्रकारकी इच्छाओंको पूर्ण करनेकी अभिलाषा कर रही हो, मैं उस धन-सम्पत्तिको सम्पूर्ण रूपसे तिरस्कृत कर देनेवाली चिन्तामणि तुम्हें प्रदान करूँगा, जिससे तुम्हें कभी पुनः किसीके निकट कु
नहीं रह जायेगी।"

अजातशत्रु श्रील हरिदास ठाकु

धन्य हैं ऐसे श्रील हरिदास ठाकु
करनेकी अभिलाषासे आयी, उसके कल्याणके लिए भी इतनी अधिक चेष्टा। अतएव यदि कोई निष्कपट होकर ऐसे दयावान श्रील हरिदास ठाकु
करेगा, तब वे उसके लिए क्या करेंगे, यह चिन्तातीत है। किसीने सत्य ही कहा है कि दूधके भरे हुए बर्तनमें पत्थर मारनेसे अपने ऊपर दूधके छीटें ही पड़ते हैं। आज श्रीहरिरस मदिरामें मत्त श्रील हरिदास ठाकु
वेश्यापर भी हरिरसके छीटें पड़ने लगे। इसलिए आज वेश्या तुलसीको प्रणामकर द्वारपर ही बैठकर नाम सुननेके साथ-साथ बीच-बीचमें 'हरि-हरि' बोलने लगी।

शुद्ध हरिनामके श्रवणके फलस्वरूप वेश्याकी जिह्वापर श्रीनामका स्फु

श्रील हरिदास ठाकु
श्रवण करनेके फलस्वरूप वेश्या अनजानेमें ही कीर्त्तनरूपी भजनाङ्गका पालन करने लगी, जिसके फलस्वरूप उसका चित्त निर्मल होने लगा। वैष्णव दर्शन, तुलसीको प्रणाम, वैष्णवको प्रणाम, शुद्ध वैष्णवके मुखसे उच्चारित श्रीहरिनामके श्रवण, चलकर वैष्णवकी भजन-स्थलीमें आने तथा कु
समय वहाँपर वास करने आदिके फलस्वरूप श्रीहरिनाम उसकी जिह्वापर स्फु
सारी रात बीत गयी। जब सुबह होनेको आयी, तो वह वेश्या कु

श्रील हरिदास ठाकु
सङ्ग करनेका आश्वासन प्रदान

वेश्याको व्याकु
जानकर—"कहीं हरिदास मेरे साथ छल तो नहीं कर रहे", श्रील हरिदास ठाकु
छल नहीं कर रहा हूँ। मैंने एक महीनेमें एक करोड़ नाम जपरूपी यज्ञका सङ्कल्प लिया है, जो कि अब समाप्त होने ही वाला है। मेरा अनुमान था कि आज ही वह सङ्कल्प पूर्ण हो जायेगा, इसलिए मैं रातभर नाम करता रहा, फिर भी पूर्ण न कर सका। परन्तु मुझे पूर्ण विश्वास है कि कल निश्चित रूपसे मेरा नामका सङ्कल्प पूर्ण हो जायेगा। तब मैं स्वच्छन्द रूपसे तुम्हारा सङ्ग करूँगा।"

श्रील हरिदास ठाकु

ऐसा प्रतीत होता कि श्रील हरिदास ठाकु
सुनकर वेश्याने सोचा होगा कि श्रील हरिदास ठाकु

साथ अपने देह–इन्द्रिय–सङ्गकी बात कर रहे हैं, किन्तु श्रील हरिदास ठाकु
सकता। श्रील हरिदास ठाकु
करके उसके मनकी वासनाको पूर्ण करनेकी ही बात कही, किन्तु अब 'सङ्ग' करनेकी बात कर रहे हैं। सङ्ग अर्थात् (सम्+गम्+ड—सम् अर्थात् सम्यक्, गम् धातुका अर्थ प्राप्ति—) सम्पूर्ण रूपसे, चिरकालके लिए प्राप्त करूँगा।

श्रील हरिदास ठाकु
तक सम्भवपर नहीं होता, वह देहके साथ–साथ ध्वंस हो जाता है। किन्तु मैं उस वेश्याको भजनोन्मुख करके, उसे अपने नित्य प्रभुके दासके रूपमें प्रतिष्ठित करके, सब समयके लिए उससे अपना सम्बन्ध बना लूँगा। उसके हृदयसे कभी भी दूर नहीं होऊँगा।"

यदि आपत्ति हो कि इस विचारके अनुसार फिर श्रील हरिदास ठाकु
'कल सङ्ग करूँगा' ऐसा क्यों कहा? इसका समाधान यह है कि वेश्याके चित्तकी अवस्था अभी भी इस प्रकारके सङ्गके अनुकूल नहीं हुई थी। यद्यपि उपरोक्त भजनाङ्गोंका पालन करनेसे उसके पाप दूरीभूत हो गये थे, प्रारब्ध–पाप–वासनाकी जड़ भी उखड़ गयी थी, तथापि पाप–वासनाकी छाया अभी भी उसके चित्तमें थी। जिस प्रकार किसी पेड़को जड़ सहित उखाड़ फेंकनेपर भी वह पेड़ कु
सूखता है, उसी प्रकार वेश्याके मनसे जागतिक भोग–पिपासा प्राप्त करनेकी अभिलाषा अभी भी पूरी तरहसे दूर नहीं हुई थी। अतएव अभी उसे 'सङ्ग'–प्रदान करनेमें कु
इसलिए श्रील हरिदासने उससे कहा—"कल स्वच्छन्दतापूर्वक तुम्हारा सङ्ग करूँगा।"

वेश्याके मनका दृढ़ विश्वास

श्रील हरिदास ठाकु
गयी और रामचन्द्र खानके पास जाकर बोली—"आज तो अवश्य ही हरिदासके साथ मेरा मिलन होगा।" रातको पुनः वह श्रील हरिदास ठाकु
भाँति उसने तुलसी एवं श्रील हरिदास ठाकु
किया। उसे आया देखकर श्रील हरिदास ठाकु
नाम-संख्या पूर्ण होनेवाली ही है, आज मैं तुम्हारी इच्छा अवश्य ही पूर्ण करूँगा।" श्रील हरिदास ठाकु
वचनको सुनकर वेश्या वहीं उनकी कु
तथा नामसङ्कीर्त्तन श्रवण तथा 'हरि-हरि' उच्चारण करते-करते उसकी पूरी रात बीत गयी।

साधुसङ्गके प्रभावसे वेश्याकी अपने प्रति घृणा

यद्यपि आज भी अन्य दिनोंकी भाँति सम्पूर्ण रात्रि बीत गयी, परन्तु आज प्रातः होते ही श्रील हरिदास ठाकु
सङ्गके प्रभावसे, उनके सान्निध्यसे वेश्याका मन परिवर्त्तित हो गया। उसके हृदयसे इन्द्रिय-तृप्तिकी वासना दूर हो गयी। उसे अपने आचरणके लिए आत्म-ग्लानि होने लगी। अपने द्वारा किये गये कार्योंके कारण उसका हृदय पश्चातापकी अग्निमें दग्ध होने लगा। उसके मनमें तीव्र खेद होने लगा—"मैंने एक दुष्ट, कामुक तथा प्रतिष्ठाकामी व्यक्तिके कहनेपर श्रील हरिदास ठाकु
परदुःखदुःखी साधुको जगत्-वासियोंके समक्ष लज्जित करनेकी योजना बनायी। मुझपर धिक्कार है! धिक्कार है!" यह सब विचार करके उसका हृदय काँपने लगा।

वेश्याके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
श्रीचरणोंमें कृपा-याचना

वह रोते-रोते श्रील हरिदास ठाकु
पड़ी तथा कहने लगी—"मैं तो रामचन्द्र खानके कहनेपर आपको पतित करनेकी अत्यधिक घृणित वासना लेकर आयी थी। मुझसे बहुत बड़ा अपराध हो गया है। वेश्या बनकर मैंने बहुत-से पाप किये हैं। मैं बहुत पतित हूँ, मैं पशुसे भी गयी बीती हूँ, आप कृपा करके इस अधमका उद्धार कीजिये। आपके चरणोंमें मेरी यही प्रार्थना है।"

ईश्वर-विद्वेषी रामचन्द्र खानके प्रति श्रील हरिदास ठाकु

उस वेश्याकी बात सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
रामचन्द्र खानके प्रति उपेक्षा युक्त वचन कहने लगे—"रामचन्द्र खानके द्वारा रचाये गये षड़यन्त्रका मुझे पहलेसे ही पता था। किन्तु मैं जानता हूँ कि वह मूर्ख है, अज्ञ है, वह क्या कर रहा है तथा उसका क्या फल होगा, वह इस विषयमें कु
नहीं जानता है। इसलिए मुझे उसके द्वारा किये गये इस कार्यसे कोई दुःख नहीं है। मैं तो पहले ही दिन इस स्थानको छोड़कर कहीं और चला जाता, परन्तु केवल तुम्हारे उद्धारके लिए ही मैं तीन दिन तक यहाँपर रहा।"

श्रील हरिदास ठाकु
उद्धारकी प्रेरणाका स्रोत

ऐसा प्रतीत होता है कि एकान्तिक नामपरायण श्रील हरिदास ठाकु
करनेके लिए ही परम-करुण भक्तवत्सल भगवान्‌ने स्वयं ही श्रील हरिदास ठाकु
दी थी।

महत् व्यक्तिकी कृपाका प्रभाव

इस उपाख्यानसे यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि श्रील हरिदास ठाकु
कृपाके प्रभावसे अत्यधिक पापी व्यक्ति भी इस भवसागरसे तर सकते हैं तथा नामके माधुर्यका आस्वादन करके अपने जीवनको सफल बना सकते हैं।

वेश्याके द्वारा अपने उद्धार हेतु प्रार्थना

तब वह वेश्या अपने उद्धार हेतु प्रार्थना करते हुए कहने लगी—“हे महाशय! मेरे कर्त्तव्यके विषयमें कृपापूर्वक मुझे कु
क्लेशसे छुटकारा मिल जाये।”

श्रील हरिदास ठाकु
सर्वस्व त्याग करनेका उपदेश

वेश्याकी बात सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
अपने घरकी समस्त वस्तुएँ ब्राह्मणोंको दान कर दो और स्वयं इस कु
जप करना और तुलसीकी सेवा करना। ऐसा करनेपर अति शीघ्र ही तुम्हें श्रीकृष्णके चरणकमलोंकी प्राप्ति होगी तथा श्रीकृष्णके चरणकमलोंकी प्राप्तिके आनुषङ्गिक फलस्वरूप तुम्हारा भव-बन्धन भी अपने आप ही दूर हो जायेगा।”

श्रील हरिदास ठाकु

ऐसा कहकर उन्होंने उस वेश्याको ‘हरिनाम मन्त्र’ प्रदान किया और स्वयं हरि-हरि बोलते हुए उस स्थानको छोड़कर अन्यत्र चले गये। स्वरचित (चै० च० अ० ३/१७८ के) अनुभाष्यमें श्रीश्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ‘प्रभुपाद’ लिखते हैं—“शिष्यका सर्वस्व गुरुदेवको प्राप्य होनेपर भी वैष्णव-गुरु शिष्यके गृह-वित्तादि प्राकृत मल समूहको स्वयं

ग्रहण नहीं करते। जो दक्षिणा ग्रहण करते हैं, वे दक्षिणा–मार्ग (दक्षिण–मार्ग) द्वारा यम–भवनमें पहुँचते हैं। वैष्णव–गुरु वैसे यम भवनके यात्री नहीं हैं, वे उत्तरा–मार्ग (उत्तर–मार्ग) के पथिक हैं। इसलिए कर्मी–ब्राह्मण आदिको प्राकृत वैभवसमूह आदि देनेकी व्यवस्था है। वैष्णव–गुरु शिष्यके हरि–विमुखताको उत्पन्न करनेवाले भोग्य विषय–वैभव स्वयं ग्रहण करके शिष्यका आनुगत्य अथवा मुखापेक्षा[१] नहीं करते। परन्तु वैसे वैभवको हरि विमुखताका कारण जानकर उसका अवश्य ही त्याग करते हैं। शिष्यको प्राकृत–अभिमानसे मुक्त कराना तथा उसके द्वारा परित्यक्त प्राकृत मलको स्वयं ग्रहण न करना ही सदाचारी वैष्णव गुरुका कर्त्तव्य है—ठाकु
हरिदासकी यही शिक्षा है।”

वेश्याके द्वारा गुरुकी आज्ञाका पालन

तब उस वेश्याने अपने श्रीगुरुदेवकी आज्ञानुसार घर जाकर अनेक यत्नसे एकत्रितकी हुई अपनी सारी सम्पत्ति अपने भविष्यकी चिन्ता न करके ब्राह्मणोंको दान कर दी तथा स्वयं अपना सिर मुँड़वाकर केवल एक वस्त्र पहनकर श्रील हरिदास ठाकु
नित्यप्रति तीन लाख हरिनाम करके परम तृप्ति अनुभव करने लगी। वह नित्यप्रति तुलसीकी सेवा करती। तथा यदि उसे अनायास ही कु
अन्यथा भूखी ही रह जाती।

नाम साधनके फलस्वरूप इन्द्रिय जय, सिद्धिलाभ तथा प्रेमका उदय

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
शुद्ध नाम साधनके फलसे कु

---

[१] मुखकी ओर ताकना।

इन्द्रियाँ वशमें हो गयीं तथा उसके हृदयमें कृष्णप्रेम उत्पन्न हो गया।

प्रसिद्धा वैष्णवी हैल परम-महान्ती।
बड़-बड़ वैष्णव ताँर दर्शनेते जान्ति॥
(चै॰ च॰ अ॰ ३/१८१)

वह एक परम महान वैष्णवीके रूपमें चारों ओर प्रसिद्ध हो गयी तथा बड़े-बड़े वैष्णव भी उसके दर्शनके लिए आने लगे।

एक वेश्याके ऐसे परिवर्त्तित चरित्रको देखकर लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ तथा वे श्रील हरिदास ठाकु
करने लगे। कहाँ तो रामचन्द्र खानने श्रील हरिदास ठाकु
अपमानित और कलङ्कित करनेके लिए प्रयास किया था और कहाँ हुआ उसका ठीक विपरीत! वास्तवमें जो लोग निष्कपट होकर भगवान्‌का भजन करते हैं, किसी भी प्रकारसे कोई उनका कु

वैष्णव-अपराधका वर्णन

यथार्थ वैष्णव किसीका अपराध ग्रहण नहीं करते, वे तो स्वयंको वैष्णव ही नहीं मानते। यदि कोई उन्हें दुःख-कष्ट भी पहुँचाता है, तो वे उन कष्टोंको अपने ही कर्मोंका फल मानकर कष्ट देनेवाले व्यक्तियोंसे द्वेष नहीं करते। परन्तु भक्तवत्सल भगवान् अपने भक्तके प्रति अपराध करनेवालेको कभी भी क्षमा नहीं करते। सब प्रकारसे निर्दोष एवं दूसरोंके उपकारमें रत अपने भक्तोंके प्रति किये गये अपराधको भगवान् कभी भी सहन नहीं कर सकते। इसलिए भक्तोंके चरणोंमें अपराधके फलसे जैसा अकल्याण और सर्वनाश होता है, वैसा अन्य किसी भी प्रकारसे नहीं होता। वैष्णव-अपराधका फल कभी-कभी तो तुरन्त मिलता है, और कभी कु

रामचन्द्र खानके असुर होनेका प्रतिपादन तथा वैष्णव-अपराधके फलसे रामचन्द्र खानमें वैष्णव-विद्वेषकी वृद्धि

श्रील हरिदास ठाकु खानका जो अपराध हुआ था, उस अपराधरूप बीजने क्रमशः वर्द्धित होते-होते एक बहुत बड़े वृक्षका रूप धारण कर लिया। वैसे तो रामचन्द्र खान स्वभावसे ही अवैष्णव था, परन्तु अब श्रील हरिदास ठाकु करनेके कारण वह असुरके समान ही हो गया। भगवान् और उनके भक्तोंके विरुद्ध आचरण करना ही असुरका स्वभाव होता है। श्रील प्रभुपाद (चै॰ च॰ अ॰ ३/१४५ के) स्वरचित अनुभाष्यमें लिखते हैं, "जिस प्रकार ब्राह्मण कु जन्म लेनेपर भी विष्णुके चरणोंमें अपराध करनेके कारणसे विश्वश्रवाका पुत्र रावण 'असुर' कहलाया था, उसी प्रकार भक्तके चरणोंमें अपराधी होकर रामचन्द्र खान भी समाजमें असुरके समान प्रतिपन्न [स्थापित] हुआ। अब तो वह सदैव वैष्णवधर्मकी निन्दा करने लगा और वैष्णवोंका अपमान करने लगा। बहुत समय तक इस प्रकारके अपराधोंको करनेके कारण उसे बहुत ही भयानक फल प्राप्त हुआ।"

रामचन्द्र खानके घरपर पाषण्ड-दलनकारी श्रीनित्यानन्द प्रभुका आगमन

एक बार सर्वज्ञ श्रीनित्यानन्द प्रभु जो साक्षात् श्रीबलदेव ही हैं, गौड़देशमें प्रेमभक्तिका प्रचार तथा पाषण्ड-दलन करते-करते रामचन्द्र खानके घरमें उपस्थित होकर उसके दुर्गामण्डपमें (दुर्गाजीकी पूजाके स्थानपर) बैठ गये। उनके साथ बहुत-से दूसरे वैष्णव भी थे जिससे दुर्गामण्डपके सामनेका आङ्गन भर गया।

रामचन्द्र खानके द्वारा श्रीनित्यानन्द प्रभुकी अवमानना

सपरिकर श्रीनित्यानन्द प्रभुको आया देखकर रामचन्द्र खानने अन्दरसे अपने एक सेवकको कु
बाहर भेजा। सेवकने श्रीनित्यानन्द प्रभुको आकर कहा—"महात्माजी! मुझे रामचन्द्र खानने भेजा है। उन्होंने कहा है कि यह जमींदारका घर है, किसी साधारण गृहस्थका नहीं। यहाँपर आपको रहनेके लिए स्थान नहीं मिलेगा। चलो, किसी गृहस्थके घरमें आपको स्थान दिला दूँ। आपके साथ बहुत लोग हैं। आप लोगोंके लिए यह स्थान छोटा पड़ेगा। अतः ग्वालेकी बहुत बड़ी गौशाला ही आप लोगोंके लिए अच्छा स्थान है। चलो! मैं आप सब लोगोंको वहाँ छोड़ आऊँ।"

अक्रोध-परमानन्द श्रीनित्यानन्द रायका क्रोध तथा भविष्यवाणी

रामचन्द्र खानके सेवककी बात सुनते ही श्रीनित्यानन्द प्रभु अत्यन्त क्रोधित हो गये तथा उस दुर्गामण्डपसे उठकर बाहर आ गये। जो अपराध रामचन्द्र खानने श्रील हरिदास ठाकु
यहाँपर उसका दण्ड देनेके लिए ही आये थे। वे क्रोधमें भरकर अट्टहास सहित भविष्यवाणी करते हुए कहने लगे—"रामचन्द्र सत्य ही कह रहा है। वास्तवमें यह घर मेरे रहने योग्य नहीं है। जो म्लेच्छ हैं, जो गायका वध करते हैं, यह घर उनके ही रहने योग्य है।"

सपरिकर नित्यानन्द प्रभुके द्वारा विष्णु-वैष्णव विद्वेषीके स्थानका परित्याग

इतना कहकर श्रीनित्यानन्द प्रभु क्रोध सहित अपने परिकरोंके साथ उस वैष्णव-विद्वेषीके घरका परित्याग करके वहाँसे चले गये। रामचन्द्र खानको दण्ड देनेके लिए

श्रीनित्यानन्द प्रभु उस गाँवमें भी नहीं रहे, जिसमें रामचन्द्र खान रहता था।

रामचन्द्र खानकी पाषण्डताकी चरमसीमा

श्रीनित्यानन्द प्रभुके जानेके बाद रामचन्द्रखानने अपने मनमें विचार किया कि सपरिकर श्रीनित्यानन्दके आगमनसे उसका घर अपवित्र हो गया है, अतः उसने अपनी अत्यधिक पाषण्डताका परिचय देते हुए अपने सेवकोंको आदेश दिया कि जहाँपर वह संन्यासी बैठा था, उस स्थानको खोदे और उस मिट्टीको दूर फेंककर उस स्थानको और समस्त आङ्गनको गोबरसे लीपकर पवित्र करे। सेवकोंने ऐसा ही किया, परन्तु वैष्णव विरोधी असुर स्वभाववाले रामचन्द्र खानका मन फिर भी प्रसन्न नहीं हुआ।

रामचन्द्र खानको विष्णु–वैष्णव विद्वेषके भीषण फलकी प्राप्ति

रामचन्द्र खान जमींदार था, परन्तु वह दस्युवृत्तिके कारण राजाको कर नहीं दिया करता था। इससे क्रु
मुसलमान राजाने अपने मुसलमान वजीरको कु
साथ उसके घरमें 'कर' संग्रह करनेके लिए भेजा। उस वजीरने आकर उसी दुर्गा–मण्डपमें डेरा डाला और वहींपर गायोंको मारकर उसीके घरमें गायका मांस पकाया। उसने रामचन्द्र खान और उसके स्त्री–पुत्रोंको बाँध दिया। इस प्रकार तीन दिन तक वह उसी दुर्गामण्डपमें गायोंका वध करता रहा और उसीके घरमें मांस पकाकर खाता रहा। केवलमात्र उसके घरको ही नहीं, बल्कि तीन दिन तक वह उस सारे गाँवको ही लूटता रहा। इस प्रकार रामचन्द्र खानकी जाति–धन–जन आदि सबकु
गाँव बहुत समय तक उजड़ा हुआ पड़ा रहा। इस प्रकार

एक रामचन्द्र खानके अपराधका फल सम्पूर्ण गाँवको भोगना पड़ा अर्थात् एक असत् व्यक्तिके सङ्गके फलस्वरूप सम्पूर्ण गाँवके लोगोंको दुःख हुआ। शास्त्र कहते हैं—

महान्तेर अपमान जे देश-ग्रामे हय।
एक जनार दोषे सब देश उजाड़य॥
(चै॰ च॰ आ॰ ३/१६३)

अर्थात् जिस देश अथवा गाँवमें महापुरुषका अपमान होता है, एक व्यक्तिके दोषसे वह सम्पूर्ण देश अथवा सम्पूर्ण गाँव ही उजड़ जाता है।

इतना भयङ्कर है वैष्णव-अपराध! रामचन्द्र खानने पहले श्रील हरिदास ठाकु
बोया था, उसीके फलस्वरूप उसकी अखण्ड गुरुतत्त्व स्वयं श्रीनित्यानन्द प्रभुके प्रति भी द्वेषबुद्धि हो गयी, और अन्ततः उसका सर्वनाश हो गया।

चतुर्थ अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

सप्तग्रामके अन्तर्गत चाँदपुरमें श्रील हरिदास ठाकु

बेनापोलसे श्रील हरिदास ठाकु
त्रिवेणीके निकट चाँदपुर नामक एक गाँवमें आ गये। हिरण्य और गोवर्धन मजूमदार नामक दो भाई उस गाँवके जमींदार थे। उनके पुरोहितका नाम बलराम आचार्य थे। ये बलराम आचार्य श्रील हरिदास ठाकु
श्रील हरिदास ठाकु
निर्जनमें एक पर्णकु
बलराम आचार्यके घरमें भिक्षा ग्रहण करते थे।

श्रील हरिदास ठाकु

दास गोस्वामीके श्रीमन् महाप्रभुकी प्राप्तिके कारण

गोवर्धन मजूमदारके एकमात्र पुत्रका नाम रघुनाथ था। जिस समय श्रील हरिदास ठाकु
समय यही रघुनाथ, जो बादमें श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके अति प्रिय परिकर श्रीरघुनाथदास गोस्वामीके नामसे प्रसिद्ध हुए, बहुत छोटे थे और विद्याध्ययन कर रहे थे। बालक रघुनाथ समय–समयपर श्रील हरिदास ठाकु
श्रील हरिदास ठाकु
श्रील हरिदास ठाकु
श्रीचैतन्य महाप्रभुको प्राप्त करनेका कारण बनी।

श्रीबलराम आचार्यकी प्रार्थनासे हिरण्य तथा गोवर्द्धन मजूमदारकी सभामें श्रील हरिदास ठाकु

हिरण्य और गोवर्धन मजूमदारके घरमें नित्यप्रति पण्डितोंकी सभा लगती थी, जिसमें भागवत आदि शास्त्रोंकी चर्चा होती थी। एक दिन बलराम आचार्यने श्रील हरिदास ठाकु
सभामें उपस्थित होनेके लिए प्रार्थना की, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। जब बलराम आचार्य श्रील हरिदास ठाकु
ठाकु
ठाकु
भाई खड़े हो गये। तत्पश्चात् दोनोंने श्रील हरिदास ठाकु
चरणोंमें गिरकर प्रणाम किया तथा अत्यधिक सम्मानपूर्वक उन्हें बैठनेके लिए आसन प्रदान किया। उस सभामें बड़े-बड़े पण्डित, अनेक ब्राह्मण तथा सज्जन (साधु) लोग बैठे हुए थे। हिरण्य और गोवर्धन स्वयं भी बहुत बड़े पण्डित थे। वहाँ बैठे हुए अधिकांश व्यक्ति श्रील हरिदास ठाकु
महिमा जानते थे। जब उन सबने पञ्चमुख होकर अर्थात् अत्यन्त आनन्दपूर्वक बहुत प्रकारसे श्रील हरिदास ठाकु
महिमा उन दोनों भाइयोंको सुनायी, तब वे दोनों सुनकर बहुत आनन्दित हुए।

श्रील हरिदास ठाकु
नामतत्त्वका विचार

वहाँ उपस्थित प्रायः सभी व्यक्ति जानते थे कि श्रील हरिदास ठाकु
आज उनका दर्शन करते ही पण्डितोंने नामकी महिमापर विचार करना आरम्भ कर दिया। कु
लगे—"हरिनामसे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं" तथा कु
पण्डित कहने लगे—"हरिनामसे मुक्तिकी प्राप्ति होती है।" वास्तवमें वे सभी नामाभासको ही शुद्धनाम समझते थे।

श्रील हरिदास ठाकु

उन दोनों पक्षोंके विचारको सुनकर श्रील हरिदास ठाकु बोले—"ये दोनों अर्थात् पापक्षय और मुक्ति—हरिनामके फल नहीं है। हरिनामके फलस्वरूप तो श्रीकृष्णके चरणकमलोंके प्रति प्रेम उत्पन्न होता है। श्रीमद्भागवत (११/२/४०) में वर्णित है—

"एवं व्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः।
हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः॥

"अर्थात् प्रेम लक्षण भक्तियोगसे भगवत्-सेवाव्रतधारी साधुपुरुषोंके हृदयमें एकान्तप्रिय श्रीभगवान्‌के नामसङ्कीर्त्तनसे अनुराग और प्रेमका अङ्कुर उदित हो आता है। उनका चित्त द्रवित हो जाता है। वे साधारण लोगोंकी स्थितिसे ऊपर उठ जाते हैं। लोक लज्जा छोड़कर कभी हँसने लगते हैं, तो कभी फूट-फूटकर रोने लगते हैं। कभी ऊँचे स्वरसे भगवान्‌को पुकारने लगते हैं, तो कभी मधुर स्वरसे उनके गुणोंका गान करने लगते हैं और कभी उन्हें रिझानेके लिए नृत्य भी करने लगते हैं।

श्रील हरिदास ठाकु

तत्त्वकी व्याख्या

"शास्त्रोंके प्रमाणोंसे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मुक्ति और पापनाश हरिनामके आनुषंगिक फलमात्र हैं, मुख्य फल नहीं। जो बिना किसी चेष्टाके प्राथमिक उद्देश्यके साथ-ही-साथ अपने आप ही हो जाते हैं, उन्हें आनुषङ्गिक कहते हैं।" इसे ठीकसे समझानेके लिए श्रील हरिदास ठाकु
उच्चारण किया—

"अहं संहरदखिल सकृदुदयादेव सकल लोकस्य।
तरणिरिव तिमिर जलधिं जयतिजगन्मङ्गलहरेर्नामा॥"

(पद्यावली श्लोक संख्या १६)

इस श्लोकका उच्चारणकर श्रील हरिदास ठाकु
उपस्थित पण्डितोंसे श्लोकका अर्थ करनेके लिए कहा। किन्तु सभी पण्डित बोले—"आप ही इसका अर्थ सुनाइये।" यह सुनकर श्रील हरिदास कहने लगे—"जिस प्रकार सूर्यके उदित होनेके आरम्भमें ही अर्थात् सूर्य निकलनेसे पहले ही उसके आभाससे अन्धकार दूर हो जाता है और भूत-प्रेत-चोर आदिसे होनेवाला भय भी दूर हो जाता है तथा उदित होनेपर धर्म-कर्म आदि सबकु
शुद्धनामके उदित होनेके आरम्भमें ही पाप आदिका क्षय हो जाता है तथा शुद्धनामके उदित होनेपर श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें प्रेम उदित होता है। अतएव जो हरिनाम सूर्यकी भाँति उदित होकर जीवोंकी पाप-राशिको सम्पूर्ण रूपसे नष्ट कर देते हैं, वह जगत् मङ्गलकारी श्रीहरिनाम जययुक्त हों।

"नामाभाससे ही पापनाश होता है, इसका प्रमाण श्रीमद्भागवतमें अजामिल हैं। मुक्ति तो हरिनामका एक तुच्छ फल है जो नामाभाससे ही प्राप्त हो जाता है। श्रीभगवान्के द्वारा दिये जानेपर भी शुद्ध भक्त मुक्ति स्वीकार नहीं करते।"

नाममें अर्थवाद करनेवाले गोपाल चक्रवर्तीके द्वारा क्रोधपूर्वक श्रील हरिदास ठाकु

गोपाल चक्रवर्ती नामक एक पण्डित हिरण्य और गोवर्धन मजूमदारका कर्मचारी था और अत्यन्त सुन्दर नवयुवक था—"नामके आभाससे ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है तथा समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं," बिना किसी आनुगत्यके बहुत-से शास्त्र अध्ययन करनेवाला गोपाल श्रील हरिदास ठाकु
होकर नाममें अर्थवाद करते हुए अवज्ञापूर्वक श्रील हरिदास ठाकु
इस भावुकका सिद्धान्त अर्थात् शास्त्रोंकी मीमांसा तो सुनो!

करोड़ों जन्मोंतक ब्रह्मज्ञानके अनुशीलनसे भी जो मुक्ति सहज ही नहीं मिलती, जिसकी अपनी कोई विचार शक्ति नहीं है, दूसरेंकी बात सुनकर बहुत आसानीसे विचलित हो जानेवाला यह भावुक कह रहा है कि ऐसी दुर्लभ मुक्ति नामके आभाससे अनायास ही मिल जाती है।"

श्रीहरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु

बातोंमें तुम संशय क्यों कर रहे हो? ये वचन मेरे नहीं, बल्कि शास्त्रोंके हैं। यदि तुम कहो कि जब नामाभाससे ही मुक्तिकी प्राप्ति होती है, तब फिर भक्त उसे ग्रहण क्यों नहीं करते? और क्यों इतना कष्ट करके भक्तिका साधन-भजन करते हैं? तो सुनो! भक्तिके सुखके सामने मुक्तिका सुख अत्यन्त तुच्छ और हेय है, इसीलिए भगवान्के देनेपर भी भक्त मुक्तिको ग्रहण नहीं करते।

भक्तिके साथ मुक्तिकी तुलना सम्भवपर नहीं

"त्वत्साक्षात्करणाह्लादाविशुद्धा स्थितस्य मे।
सुखानि गोष्पदायन्ते ब्राह्मण्यपि जगद्गुरो॥

(हरिभक्तिसुधोदय १४/७६)

"श्रीप्रह्लाद महाराजने प्रार्थना करते हुए भगवान् श्रीनृसिंहदेवसे कहा—हे जगद्गुरो (भगवान्)! साक्षात् रूपमें आपका दर्शनकर मैं विशुद्ध आनन्दके जिस समुद्रमें डूब रहा हूँ, उसके समक्ष सभी प्रकारके सुख यहाँ तक कि मुक्तिका सुख भी ऐसा प्रतीत हो रहा है, जैसे गायके खुरसे बने हुए गड्ढेमें भरा हुआ जल। अर्थात् जिस प्रकार उस खुरसे बने हुए गड्ढेमें भरे हुए पानीकी समुद्रसे तुलना सम्भव नहीं है, उसी प्रकार भक्तिके सुखके साथ किसी भी प्रकारके सुखकी तुलना सम्भव नहीं है।"

गोपाल चक्रवर्ती तथा श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
ब्राह्मण क्रोधपूर्वक बोला—"यदि तुम्हारे कहे अनुसार नामके आभाससे ही मुक्ति न होती हो, तो ऐसा निश्चित जानो कि मैं तुम्हारी नाक काट दूँगा।"

श्रील हरिदास ठाकु
नामाभाससे मुक्ति न होती हो, तो यह निश्चित जानो कि मैं अवश्य ही स्वयं अपनी नाक काट दूँगा।"

सभासदोंके द्वारा गोपाल चक्रवर्तीको धिक्कार तथा बलराम आचार्य द्वारा भर्त्सना और अभिशाप प्रदान

नाम-माहात्म्यकी अवज्ञा तथा परम भागवत श्रील हरिदास ठाकु
हाहाकार करने लगे। हिरण्य और गोवर्धन मजूमदार उस पाषण्डी ब्राह्मणको धिक्कार देने लगे। बलराम आचार्य भी क्रोधित होकर उससे कहने लगे—"अरे! इधर-उधरकी बात लेकर अपना पाण्डित्य दिखानेवाले मूर्ख तार्किक! तू भक्तिकी महिमा क्या जानता है? तूने श्रील हरिदास जैसे सिद्ध महापुरुषका अपमान किया है। इसके फलस्वरूप अवश्य ही तेरा सर्वनाश होगा। तेरा कल्याण कभी भी सम्भव नहीं है।" उसी क्षण मजूमदारने उस अभिमानी ब्राह्मणको अपने घरसे निकाल दिया।

सभ्य व्यक्तियों द्वारा श्रील हरिदास ठाकु क्षमा-प्रार्थना तथा अदोषदर्शी वैष्णव-ठाकु

इस घटनासे कु
जानेके लिए उठ खड़े हुए। यह देखकर हिरण्य, गोवर्धन तथा उपस्थित सभी पण्डित उनके श्रीचरणकमलोंमें गिर पड़े। तब श्रील हरिदास ठाकु

हुए कहने लगे—"जो कु
दोष नहीं है। वास्तवमें वह ब्राह्मण अज्ञ है, अतः इसमें उसका भी कोई दोष नहीं है। उसका हृदय तर्कनिष्ठ है। परन्तु भगवान्‌का नाम तर्कसे अतीत है, अर्थात् तर्कके द्वारा नामकी महिमाको नहीं जाना जा सकता। अतः वह नामकी महिमाको कैसे जान सकता है? आप लोग शान्त होकर प्रसन्न मनसे अपने-अपने घर जायें। श्रीकृष्ण सबका कल्याण करें। मेरे विषयमें आप लोग लेशमात्र भी दुःखी न होवें।" ऐसा कहकर अदोषदर्शी श्रील हरिदास ठाकु
गये।

नाममें अर्थवाद तथा वैष्णव-अवज्ञाका भीषण फल

हिरण्य और गोवर्धनने उस अभिमानी ब्राह्मणको सर्वदाके लिए अपने घर आनेसे मना कर दिया। इस घटनाके ठीक तीसरे दिन ही उस ब्राह्मणको कु
बहुत ऊँची और अत्यधिक सुन्दर नाक कु
गिर गयी। उसके हाथ और पैरोंकी अङ्गुलियाँ जो चम्पकपुष्पकी कलि जैसी बहुत ही सुन्दर थी, वह भी कु
यह देखकर लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ। सभी लोग श्रील हरिदास ठाकु

भगवान् और भक्त अर्थात् विष्णु और वैष्णवका स्वभाव

यद्यपि परम दयालु श्रील हरिदास ठाकु
अपराध नहीं लिया, तथापि भगवान्‌ने उसे उसके अपराधका फल भोग कराया। भक्तोंका स्वभाव ही है कि वे अज्ञ व्यक्तियोंके दोषोंको क्षमा कर देते हैं और उनके कल्याणकी ही चिन्ता करते हैं। परन्तु भगवान्‌का स्वभाव है कि वे कभी लेशमात्र भी अपने भक्तोंकी निन्दा सहन नहीं कर सकते।

श्रील हरिदास ठाकु

ब्राह्मणके दुःखके विषयमें सुनकर श्रील हरिदास ठाकु मनमें भी बहुत दुःख हुआ। वे बलराम पुरोहितको अपने हृदयकी सारी बातें कहकर वहाँसे शान्तिपुर चले आये।

पञ्चम अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
यशोहर जिलेके बूढ़न ग्राममें यवनकु
उनकी कृपासे यशोहर जिलेमें अनेक व्यक्ति सुकृति प्राप्त करके श्रीकृष्णकीर्त्तनमें श्रद्धा युक्त हुए थे। उनके आविर्भावसे पूर्व यशोहरमें श्रीकृष्णकीर्त्तन-कारियोंका अकाल पड़ा हुआ था, किन्तु उन्होंने आविर्भूत होकर उस कीर्त्तनके अकालको दूर कर दिया था। कु
श्रील हरिदास ठाकु
कु
शान्तिपुरके निकट स्थित फु
शान्तिपुरमें श्रील अद्वैताचार्य प्रभु भी रहते थे। जब श्रील हरिदास ठाकु
उन्होंने श्रीअद्वैताचार्य प्रभुको अत्यधिक श्रद्धापूर्वक दण्डवत्-प्रणाम किया। श्रीअद्वैताचार्यने भी उन्हें प्रेमसे गले लगाकर उनका सम्मान किया।

श्रीअद्वैताचार्यने श्रील हरिदास ठाकु
गङ्गाके तटपर निर्जनमें वास करनेके लिए उन्हें एक गुफा तैयार करवाकर दी तथा वे श्रील हरिदास ठाकु
श्रीमद्भागवत और श्रीमद्भगवद्गीताके भक्तिपूर्ण अर्थोंका श्रवण करवाने लगे। श्रील हरिदास ठाकु
रहकर हरिनाम करने लगे। नित्यप्रति श्रीअद्वैताचार्य उन्हें

अपने घरपर ही बुलाकर भोजन करवाते थे तथा दोनों मिलकर श्रधेकृष्णकी कथाओंका आस्वादन करते थे।

श्रील हरिदास ठाकु

एक दिन श्रील हरिदास ठाकु
आचार्य! मैं आपसे कु
मुझे प्रतिदिन किस उद्देश्यसे भोजन कराते हैं? यद्यपि इस शान्तिपुरमें बहुत बड़े-बड़े कु
आप उन्हें भोजन न देकर मेरा इतना आदर क्यों करते हैं? ऐसा करते समय क्या आपको किसी प्रकारका कोई संकोच नहीं होता? क्या आपको अपने इस व्यवहारके कारण लोक-समाजका भय भी नहीं है? यद्यपि आपके आलौकिक आचरणके विषयमें कु
तथापि मैं कहे बिना रह भी नहीं पा रहा हूँ। अतएव मेरी यह प्रार्थना है कि आप कृपा करके वैसा ही कीजियेगा, जिससे लोक-समाजमें आपका असम्मान, अनादर न हो।"

जगद्‌गुरु लोकशिक्षक श्रीअद्वैताचार्य प्रभुके सात्वत-शास्त्र-सम्मत वचन

आचार्य कहेन,—"तुमि ना करिह भय।
सेइ आचरिब, जेई शास्त्रमत हय॥

तुमि खाइले हय कोटि ब्राह्मण-भोजन।
एत बलि' श्राद्धपात्र कराइला भोजन॥

(चै॰ च॰ अ॰ ३/२१९-२२०)

यह सुनकर हँसते हुए जगद्‌गुरु लोकशिक्षक श्रीअद्वैताचार्य प्रभुने निरपेक्ष सात्वत-शास्त्र सम्मत वचनोंका स्मरण करते हुए कहा—"आप भयभीत न होवें। मैं वैसा ही आचरण करूँगा, जैसा शास्त्रोंका मत है। आपके भोजन करनेसे करोड़ों ब्राह्मणोंका भोजन करना हो जाता है।" इतना कहकर श्रीअद्वैताचार्यने उन्हें श्राद्ध-पात्र प्रदान किया।

अनुकूल-सङ्गका प्रभाव

अपने समान भाव और रुचियुक्त स्निग्ध शुद्धभक्त श्रील हरिदास ठाकु
आनन्दकी सीमा न रही। वे प्रेमसे हुँकार करने लगे अर्थात् अपने आनन्दकी बातको भाव-विभोर होकर प्रबल भावसे व्यक्त करने लगे। श्रील हरिदास ठाकु
श्रीअद्वैताचार्यके सङ्गके प्रभावसे श्रीगोविन्द-रस-समुद्र[१] की तरङ्गोंमें निमज्जित हो जाते थे अर्थात् कृष्णभक्ति-रससिन्धुके प्रबल प्रवाहमें डूब जाते थे।

जगत्में श्रीमन् महाप्रभुको अवतरित कराने हेतु श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
गुफामें वास करके श्रीनामसङ्कीर्त्तन करते। श्रीपाद अद्वैताचार्य प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु
हुआ। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे परम पवित्र भागीरथी और यमुनाकी भाँति समस्त जगत्की कालिमाको दूर करनेके लिए ही दोनों अवतरित हुए हो। दोनोंका उद्देश्य एक ही था कि हरिविमुख जगत्में त्रितापसे जर्जरित जीवोंकी रक्षाके लिए

---

[१] श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकु
१६/२१ के स्वरचित गौड़ीय-भाष्यमें लिखते हैं, “बहुत-से लोग मानते हैं कि श्रील हरिदास ठाकु
गोविन्द-रसास्वादनमें कोई प्रवेश नहीं था। किन्तु, प्राकृत-सहजिया लोगोंका ऐसा विश्वास अत्यन्त भ्रमपूर्ण है। श्रीनाम ही चिन्तामणि तथा रस-विग्रह कृष्ण हैं। श्रीनाम उच्चारणके प्रभावसे ही कृष्णरस आस्वादित होता है, दूसरे किसी साधनके द्वारा कृष्णरस आस्वादनकी सम्भावना ही नहीं है। कृष्णनाम-रसज्ञ ठाकु
प्रधान शिक्षक हैं। प्राकृत-सहजिया भावुक सम्प्रदायने नामापराधवशतः जड़रसमें प्रमत्त होनेके कारण अप्राकृत नाम रसका कोई सन्धान ही नहीं पाया है।”

अभिन्न व्रजेन्द्रनन्दन श्रीगौरसुन्दरको जगत्‌में किस प्रकार प्रकटित कराया जाये। परमदयालु श्रीअद्वैताचार्य प्रभु गङ्गाजल तथा तुलसी द्वारा भगवान् श्रीविष्णुकी आराधनामें मग्न थे तथा श्रील हरिदास ठाकु
करनेमें तन्मय थे।

दुईजनेर भक्त्ये चैतन्य कैला अवतार।
नाम-प्रेम प्रचार कैला जगत उद्धार॥

(चै॰ च॰ अ॰ ३/२२४)

श्रील अद्वैताचार्य प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
भक्तिके प्रभाव अर्थात् इन दोनोंके आह्वानसे ही श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुने अवतरित होकर नाम-प्रेम प्रचार करके जगत्‌का उद्धार किया।

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
उच्चस्वरसे 'हरे कृष्ण, हरे कृष्ण' कहते हुए विचरण करते थे। श्रील हरिदास ठाकु
विरक्त थे तथा उनका श्रीमुख कृष्णनामसे परिपूर्ण होनेके कारण धन्य था। वे क्षण भरके लिए भी कृष्णनाम करना नहीं छोड़ते थे। भक्तिरसमें डूबे रहनेके कारण वे प्रत्येक क्षणमें अनेकानेक भाव मूर्त्तियोंको धारण करते थे। कभी तो अपने-आपसे नृत्य करने लग जाते तथा कभी मत्त सिंहकी भाँति जोरकी हुँकार भरते हुए गर्जन करने लगते। कभी उच्चस्वरसे क्रन्दन करते, तो कभी अत्यधिक उच्चस्वरसे अट्टहास करते हुए हँसने लगते तथा कभी मूर्च्छित होकर गिर पड़ते। एक क्षणमें अलौकिक शब्द कहकर किसीको पुकारने लगते तथा अगले ही क्षण उस अलौकिक शब्दकी सुन्दर रूपसे व्याख्या करने लगते। अश्रुपात, रोमाञ्च, हास्य, मूर्च्छा, प्रस्वेद आदि प्रेमभक्तिमें उदित होनेवाले जितने भी

विकार हैं, सभी-के-सभी श्रील हरिदास ठाकु
समय नृत्य आरम्भ करते ही उनमें प्रवेश कर जाते थे। प्रेमसे कीर्त्तन करते समय श्रीहरिदास ठाकु
ऐसी धारा बहती थीं, जिससे उनका श्रीअङ्ग पूरी तरहसे भीग जाता था। अत्यधिक नास्तिक भक्तिहीन पाषण्डी भी उनकी ऐसी अवस्थाको देखकर चमत्कृत हो उठते थे। उनके अद्भुत कलेवरमें पुलक आदिको देखकर ब्रह्मा और शिव भी आश्चर्य चकित हो जाते थे।

श्रील प्रभुपाद स्वरचित गौड़ीय-भाष्य (श्रीचैतन्यभागवत आदि १६/२२-३२) में लिखते हैं, "श्रील हरिदास ठाकु
अवस्था श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु पूर्व लहरी ३/११ (में वर्णित अवस्था जैसी थी)—"क्षान्तिरव्यर्थकालत्वं विरक्तिर्मानशून्यता। आशाबन्धः समुत्कण्ठा नामगाने सदा रुचिः॥ आसक्तिस्तद्गुणाख्याने प्रीतिस्तद् वसतिस्थले। इत्यादयोहनुभावाः स्युर्जाते भावाङ्कुरे जने॥" तथा "एवंव्रतः स्वप्रिय नाम-कीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः। हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मादवन् नृत्यति लोकबाह्यः॥" अर्थात् प्रेमलक्षण-भक्तियोगके द्वारा भगवान्की सेवा करनेका व्रत धारण करनेवाले भक्त अपने एकान्त-प्रिय भगवान्के नामसङ्कीर्त्तनमें जातरुचि और विगलित-हृदय होकर लोकापेक्षा न रखते हुए कभी तो उच्चस्वरसे हँसते है, कभी रोते हैं, कभी कातरस्वरसे पुकारते हैं, कभी गाते हैं और कभी उन्मत्तकी भाँति नृत्य करने लगते हैं।

श्रील हरिदास ठाकु
जिह्वा सदैव कृष्णनाम ग्रहण करनेमें ही व्यस्त रहती थी। नामका उच्चारण करनेवाली उनकी जिह्वाका अद्भुत सौन्दर्य था। उनकी जिह्वा तथा वे स्वयं सम्पूर्ण रूपसे जड़भोगोंके प्रति उदासीन थे। जो—भोगी होते हैं, उनकी जिह्वापर कृष्णनाम कभी भी नृत्य नहीं करते। षड्रस अर्थात् छः प्रकारके रसमय भोजनको करनेमें ही जो व्यस्त हैं—विषय

सुखोंको प्राप्त करनेके लोभ अथवा आशासे जो विक्षिप्त चित्त होकर इधर-उधर भ्रमण करते रहते हैं, उनमें कभी भी भगवान्‌के नामको ग्रहण करनेकी रुचि नहीं देखी जाती। कृष्णनामको ग्रहण नहीं करनेवाले फल्गु त्यागियोंका दल भी भोगी लोगोंकी भाँति हरिनाम भजनके प्रति उदासीन रहता है। ठाकु
जड़विषय सुखके प्रति सम्पूर्ण रूपसे उदासीन थे—यही उनकी सर्वश्रेष्ठता थी।

श्रील हरिदास ठाकु
किसी प्रकारकी उदासीनता या आलस्य आदिको प्रश्रय नहीं देते थे। वे अनेक प्रकारसे सर्वक्षण कृष्णभक्तिरसमें निमग्न रहते थे।

श्रील हरिदास ठाकु
रक्त, माँस, चमड़ी आदिके पिण्डकी भाँति जड़ नहीं था। उनके दिव्य कलेवरमें श्रीनाम प्रभुकी सेवाके फलस्वरूप अनेक प्रकारके शुद्ध-सात्विकभाव लक्षित होते थे। साधारण कर्मी लोग जिस प्रकार अपने जड़शरीरके स्वास्थ्यके प्रति ध्यान देने जाकर कृष्णानुशीलनसे विमुख होते हैं, सेवोन्मुख पार्षद-वैष्णवोंके श्रीअङ्गमें उसके ठीक विपरीत शुद्ध सात्विक भाव समूहोंका प्रचण्ड नृत्य विद्यमान रहता है।"

षष्ठ अध्याय

जीव मोहनी साक्षात् मायादेवीके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

श्रौतपन्था-द्वारा ही अप्राकृत अनुभूति सम्भवपर

श्रील हरिदास ठाकु
हुए श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी स्वरचित श्रीचैतन्यचरितामृत (अ॰ ३/२२५-२२६) में वर्णन करते हैं—

आर अलौकिक एक चरित्र ताँहार।
जाहार श्रवणे लोके हय चमत्कार॥

तर्क ना करिह, तर्कागोचर ताँर रीति।
विश्वास करिया शुन करिया प्रतीति॥

अब मैं श्रील हरिदास ठाकु
चरित्रका वर्णन करने जा रहा हूँ, जिसे सुनकर सभी आश्चर्य चकित हो जाते हैं। [मैं यह निवेदन करता हूँ कि] इस चरित्रके श्रवणमें कोई भी किसी प्रकारका तर्क-वितर्क नहीं करे, क्योंकि श्रील हरिदास ठाकु
है। अतएव सब भक्त विश्वासपूर्वक उसका श्रवण कीजिये।

श्रील हरिदास ठाकु

एक दिन श्रील हरिदास ठाकु
भावविह्वल होकर उच्चस्वरसे हरिनाम कर रहे थे। अपूर्व शोभामयी चाँदनी रात थी तथा चाँदनीसे दसों दिशाएँ निर्मल हो रही थीं। चन्द्रमाकी किरणें गङ्गामें पड़नेके कारण गङ्गाकी लहरें झल-मल कर रही थीं। गुफाके द्वारपर लीपे हुए

चबूतरेके ऊपर तुलसी विराजमान थीं। गुफाके सौन्दर्यको देखकर स्वाभाविक रूपमें ही लोगोंका मन आकर्षित हो जाता था।

मायादेवीका आगमन

उसी समय मन-मोहनी अति सुन्दर एक स्त्री आँगनमें उपस्थित हुई। उसके अङ्गोंसे निकलनेवाली कान्तिके द्वारा वह स्थान और भी अधिक शोभायमान हो गया। उसके अङ्गोंसे निकलनेवाली सुगन्धसे दसों दिशाएँ सुगन्धित हो गयीं। वह अनेक प्रकारके मणिमय आभूषणोंसे सुसज्जित थी। उसके आभूषणोंकी मधुर झँकार कानोंको अपनी ओर आकर्षित कर लेनेवाली थी। उस मोहनीने धीरे-धीरे आगे बढ़कर पहले तुलसीको प्रणाम किया। तत्पश्चात् तुलसीकी परिक्रमाकर वह गुफाके द्वारपर पहुँची।

मायादेवीके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु करने हेतु मधुर वचनोंका प्रयोग

मायादेवीने हाथ जोड़कर श्रील हरिदास ठाकु
वन्दनाकी तथा द्वारपर ही बैठकर वीणाकी ध्वनिको भी निन्दित कर देनेवाली मधुरसे भी मधुर वाणीसे कहने लगी—"हे हरिदास! तुम तो समस्त जगत्‌के बन्धु हो तथा बहुत ही रूपवान और परम गुणवान हो। तुम्हारे रूप और गुणोंसे मुग्ध होकर ही मैं तुम्हारे सङ्गकी प्राप्तिकी आशासे तुम्हारी शरणमें आयी हूँ। अतः मुझपर दयाकर मुझे स्वीकार करो। दीनोंपर दया करना तो साधुओंका स्वभाव ही होता है।" ऐसा कहकर वह श्रील हरिदास ठाकु
जगानेके लिए अनेकों प्रकारसे ऐसे हाव-भाव दिखाने लगी कि जिन्हें देखकर बड़े-बड़े ऋषि-मुनियोंका मन भी विचलित हो जाये। परन्तु उसके हाव-भावोंसे अचल, अटल, गम्भीर

चित्तवाले हरिदास ठाकु
हुआ, बल्कि उन्हें उसपर दया ही आ गयी।

नामसङ्कीर्त्तन यज्ञके प्रति श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
संख्यापूर्वक किये गये नामसङ्कीर्त्तनको महायज्ञ मानकर नित्यप्रति उसमें दीक्षित होता हूँ। जब तक मेरी नाम-संख्या पूर्ण न हो, तब तक मैं कोई भी कार्य नहीं करता—यही मेरा नियम है। आज अभी तक मेरी नाम-संख्या पूर्ण नहीं हुई है, अतः तुम द्वारपर बैठकर प्रतीक्षा करो और हरिनाम सुनो। नाम-संख्याके पूर्ण होते ही मैं तुम्हारी इच्छा अवश्य ही पूरी करूँगा।" ऐसा कहकर श्रील हरिदास ठाकु
हरिनाम करने लगे तथा वह स्त्री भी द्वारपर बैठकर नाम सुनने लगी। इस प्रकार श्रील हरिदास ठाकु
करते-करते सारी रात बीत गयी। जब प्रातःकाल हुआ, तो वह स्त्री उठकर चली गयी। इस प्रकार वह लगातार तीन दिन तक आती रही और ऐसे-ऐसे हाव-भाव दिखाती रही जिससे श्रीब्रह्माका मन भी मोहित हो जाये। परन्तु श्रीकृष्णनाममें आविष्ट श्रील हरिदास ठाकु

नाम प्रभुके एकान्तिक सेवक भोक्ता-भावसे रहित श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
दिखाना अरण्य-रोदनकी भाँति ही व्यर्थ हुआ, अर्थात् जिस प्रकार निर्जन जङ्गलमें रोनेपर कोई भी उसे नहीं सुनता उसी प्रकार उस रमणीके हाव-भाव देखकर भी श्रील हरिदास ठाकु
बीतनेवाली थी, तब वह स्त्री श्रील हरिदास ठाकु
बोली—"हे महाशय! आप तीन दिनसे लगातार मुझे झूठा

आश्वासन दे रहे हैं कि नाम समाप्त होते ही आप मेरी इच्छा पूर्ण करेंगे। परन्तु रात-दिन नाम करनेपर भी अभी तक आपकी निर्धारित नाम-संख्या पूर्ण नहीं हुई है।”

श्रील हरिदास ठाकु
नियम बना रखा है, उसे कैसे तोड़ दूँ?” यह सुनकर उस रूपवती स्त्रीने श्रील हरिदास ठाकु
और बोली—“प्रभो! मैं मायादेवी हूँ। मैं यहाँपर आपकी परीक्षा लेने ही आयी थी। ब्रह्मा आदि सभी जीवोंको मोहित कर देनेवाली मैं आज आपसे पराजित हो गयी।”

मायादेवीके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
हरिनाम हेतु प्रार्थना

मायादेवीने आगे कहा—“मैं आपके मनमें लेशमात्र भी विकार नहीं उत्पन्न कर सकी। आप महाभागवत हैं। आपके दर्शनसे तथा आपके श्रीमुखसे कृष्णनाम श्रवण करके मेरा चित्त निर्मल हो गया है। अब तो मेरी भी हरिनाम करनेकी इच्छा हो रही है। अतः कृपापूर्वक आप मुझे हरिनाम प्रदान करके कृतार्थ कीजिये।” मायादेवीने उत्कण्ठित होकर और भी कहा—

“चैतन्यावतारे बहे प्रेमामृत वन्या।
सब जीव प्रेमे भासे पृथिवी हैल धन्या॥

ऐ वन्याय ये ना भासे सेई जीव छार।
कोटिकल्पे तबे ताँर नाहिक निस्तार॥

(चै॰ च॰ अ॰ ३/२५२-२५३)

“श्रीचैतन्य महाप्रभुके अवतार लेनेसे (जगत्‌में) प्रेमामृतकी बाढ़ बहने लगी है, जिससे सब जीव इसमें निमज्जित होकर प्रेम प्राप्त कर रहे हैं और समस्त पृथ्वी धन्य-धन्य हो गयी है। इस कृष्ण-प्रेमामृतकी बाढ़में जो जीव सराबोर नहीं होते

हैं, उनका जीवन वृथा है, करोड़ों कल्पों तक भी उन जीवोंका उद्धार नहीं हो सकता।

"बहुत समय पहले मैंने श्रीशिवसे रामनाम ग्रहण किया था, परन्तु आज आपके सङ्गके प्रभावसे मेरे मनमें कृष्णनामके प्रति लोभ उत्पन्न हो गया है। मुक्तिके लिए तारकब्रह्म 'राम' नामके रूपमें आविर्भूत होते हैं अर्थात् 'राम' नामके जपसे जीवोंको मुक्तिकी प्राप्ति होती है। किन्तु 'कृष्ण' नाम पारक अर्थात् केवल मुक्ति देकर ही शान्त नहीं होते, बल्कि प्रेमदान भी करते हैं। अतः आप कृपापूर्वक मुझे कृष्णनाम प्रदान कर धन्य करें, जिससे कि मैं भी प्रेमामृतकी बाढ़में बह जाऊँ।" ऐसा कहकर वह श्रील हरिदास ठाकु
करने लगी।

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
दीक्षा प्राप्त करके मायादेवीका प्रस्थान

कृपासिन्धु श्रील हरिदास ठाकु
उपदेश दिया। विश्व विमोहिनी मायादेवी वैष्णव-ठाकु
सम्पूर्ण रूपसे पराजित हुई थी, अतएव जिस प्रकार स्पर्शमणिके संयोगसे लोहा स्वर्ण बन जाता है, उसी प्रकार मायादेवीने साधुसङ्गके प्रभावसे भोग-लालसाको त्यागकर निःश्रेयस प्रदानकारी कृष्णनामका कीर्त्तन करते-करते अत्यधिक आनन्दपूर्वक प्रस्थान किया।

सर्वेन्द्रियके द्वारा कृष्णानुशीलन करनेवालेपर मायाका प्रभाव असम्भव

निष्कपट और निरपराध होकर निरन्तर हरिनाम ग्रहण करनेवाले व्यक्तिको किसी भी प्रकारके जागतिक प्रलोभनके द्वारा मङ्गलमय हरिभक्तिके पथसे कोई भी डिगा नहीं सकता, यहाँ तक कि स्वयं मायादेवी भी आकर उन्हें पतित नहीं

कर सकती। नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
ज्वलन्त उदाहरण हैं।

शुद्धभक्त नित्य कृष्ण-भोग्य हैं। वे कभी भी मायाके द्वारा मोहित नहीं होते। माया भोक्ता नहीं है। गीतामें भगवान्‌ने मायाको 'मम माया' कहा है अर्थात् माया भी एकमात्र भोक्ता श्रीकृष्णकी भोग्या है। जो व्यक्ति एकान्तिक रूपमें भगवान्‌की शरण ग्रहण करता है, वह मायासे पार पा जाता है। विष्णु और वैष्णव—मायातीत हैं। श्रील हरिदास ठाकु
जब कोई अपनी समस्त इन्द्रियों द्वारा कृष्णदास्यका अनुशीलन करता है, तब मायादेवी अपना जितना भी जाल क्यों न बिछाएँ, उसका वह प्रयास हिमालयको एक छोटे-से पत्थरसे मारकर गिरानेके समान निष्फल हो जाता है।

अप्राकृत विश्वास ही श्रेय-प्राप्तिका कारण

श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने स्वरचित श्रीचैतन्य-चरितामृतमें इस प्रसङ्गके अन्तमें कहा है—"मायादेवीने श्रील हरिदास ठाकु
इसे असम्भव मानकर विश्वास नहीं करते। किन्तु मैं इस बातपर विश्वास करनेका कारण बताता हूँ, जिसे सुनकर सबको अवश्य ही विश्वास हो जायेगा। श्रीचैतन्यदेवके अवतारके समय श्रीकृष्ण प्रेममें लुब्ध होकर श्रीब्रह्मा, श्रीशिव तथा सनकादि भी पृथ्वीपर अवत्तीर्ण हुए थे तथा वे सब कृष्णनाम प्राप्तकर नृत्य करते थे और प्रेमकी बाढ़में सराबोर होते थे। श्रीनारद, श्रीप्रह्लाद तथा श्रीलक्ष्मी आदि भी कृष्णप्रेम प्राप्त करनेके लिए मनुष्य देहमें पृथ्वीपर प्रकट हुए थे तथा प्रेमका आस्वादन करते थे। औरोंकी तो बात ही क्या है—स्वयं श्रीकृष्ण व्रजेन्द्रनन्दन भी तो इसी प्रेमका आस्वादन करनेके लिए श्रीकृष्णचैतन्यके रूपमें अवतीर्ण हुए थे। उनकी

शक्तिकी छाया—मायादेवी यदि प्रेमकी भिक्षा कर रही है, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? अर्थात् कु
इसका कारण यह है कि महत्-पुरुषोंकी कृपाके बिना कभी भी किसीको प्रेमकी प्राप्ति नहीं हो सकती।”

सप्तम अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

नित्यमुक्त महापुरुष श्रील हरिदास ठाकु

काजीकी जाति–बुद्धि

फु

ब्राह्मण थे, वे सभी श्रील हरिदास ठाकु

भक्तिपूर्ण विकारोंका दर्शनकर मुग्ध हो जाते तथा कर्मकाण्डकी अकर्मण्यताको समझकर अपने द्वारा किये जानेवाले कृत्योंको धिक्कार देने लगते। उनकी श्रील हरिदासके प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न हो गयी। श्रील हरिदास ठाकु

निरन्तर उच्चस्वरसे श्रीहरिनाम–सङ्कीर्त्तन करते हुए सर्वत्र विचरण करते थे। यहाँ तक कि मार्गमें चलते समय भी उच्चस्वरसे हरिनाम करते थे। यह देखकर वहाँके काजीसे यह सहन नहीं हुआ कि मुसलमान होकर हरिदास हिन्दुओंके भगवान्का कीर्त्तन करे। उसके अनुसार यवन कु

लेनेपर भी यवनोंके आचरणके प्रतिकूल आचार और विचार ग्रहण करके श्रील हरिदास ठाकु

था। अतएव उसे दण्ड देना आवश्यक था।

जड़ीय देश–काल–पात्रके अतीत विद्वदनुभवसे युक्त निर्ग्रन्थ भागवत परमहंस वैष्णव ठाकु

अधीन समझकर जाति–बुद्धिके कारण उनके द्वारा किये जा रहे पारमार्थिक वैकु

देश–काल–पात्रसे दूषित शासनके अधीन करनेकी चेष्टा करते हुए वह बङ्गालके मुसलमान बादशाहके पास गया तथा

उसने श्रील हरिदास ठाकु
मुसलमान होकर हिन्दुओंके धर्मको अपना रहा है। अतः आप अतिशीघ्र उसे यहाँ बुलवाकर दण्ड प्रदान कीजिये, नहीं तो उसकी देखादेखी अन्यान्य मुसलमान भी हिन्दू-धर्मकी ओर आकर्षित हो जायेंगे।" उस पापीकी बात सुनकर भक्तिविद्वेषी पापमति बादशाहने तुरन्त अपने सिपाहियोंको आदेश दिया—"हरिदासको पकड़कर यहाँ ले आओ।"

श्रील हरिदास ठाकु
सिपाहियोंका फु

बादशाहका आदेश पाकर सिपाही अतिशीघ्र श्रील हरिदास ठाकु
श्रील हरिदास ठाकु
भगवत्-कृपासे महिमान्वित निर्भीक श्रील हरिदास ठाकु
किसी भयके 'कृष्ण-कृष्ण' कहते हुए तुरन्त अपनी इच्छासे ही उनके साथ चल पड़े तथा बादशाहके सम्मुख उपस्थित हुए।

कृष्णेर प्रसादे हरिदास महाशय।
यवनेर कि दाय, कालेरो नाहि भय॥

(चै॰ भा॰ आ॰ १६/३९)

श्रीकृष्णकी कृपासे श्रील हरिदास महाशयको यवन बादशाहका तो कहना ही क्या, स्वयं कालका भी भय नहीं था।

अम्बुयाके निवासियोंमें श्रील हरिदास ठाकु
दर्शनके लिए उत्कण्ठा

श्रील हरिदास ठाकु
तथा उनके दिव्य कलेवरमें आविर्भूत होनेवाले प्रेमके विकारोंके विषयमें वहाँके निवासियोंने पहलेसे ही श्रवण किया था, इसलिए आज श्रील हरिदास ठाकु

विषयमें श्रवण करके तथा उनके दर्शन प्राप्तिकी सम्भावनासे उन सबका हृदय आनन्दसे भर गया। किन्तु, साथ–ही–साथ ठाकु
पकड़कर ले आया है, ऐसा जानकर वे अत्यधिक दुःखी भी हुए। वे जानते थे कि मुसलमान बादशाह बहुत ही क्रूर और भक्ति विद्वेषी है, अतः वह अवश्य ही श्रील हरिदास ठाकु जैसे परमभक्तको भीषण यातनाएँ देगा।

श्रील हरिदास ठाकु
रक्षकोंसे प्रार्थना

श्रील हरिदास ठाकु
जेलमें बन्द कैदियोंके कानोंमें पहुँची, तो वे सब उदारचित्त बन्दी जेलमें ही आनन्दसे नृत्य करने लगे। वे जानते थे कि श्रील हरिदास ठाकु
दर्शनमात्रसे ही सभी कष्ट तुरन्त दूर हो जाते हैं। अतः उन्हें यह दृढ़ विश्वास था कि आज श्रील हरिदास ठाकु दर्शनसे उनके भी सभी कष्ट दूर हो जायेंगे। मन–ही–मन ऐसा विचार करके उन्होंने जेलके रक्षकोंसे हाथ जोड़कर विनती की—“अरे भाईयो! जब श्रील हरिदास ठाकु सिपाही लोग बादशाहके पास ले जायेंगे, तो कृपापूर्वक हमें भी उनका दर्शन करनेकी अनुमति दे देना।” रक्षकोंने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। अतः वे सभी लोग श्रील हरिदास ठाकु

श्रीहरिदास ठाकु

कु
वही आ पहुँचे। कैदियोंको देखकर श्रील हरिदास ठाकु उनपर कृपा करनेकी इच्छा हो गयी। अतः वे उन कैदियोंके सामने खड़े हो गये। आजानुलम्बित भुजाओं, कमल जैसे नेत्र

तथा सबके मनको हरण करनेवाले अनुपम मुखचन्द्रवाले श्रील हरिदास ठाकु
श्रद्धापूर्वक उन्हें प्रणाम किया। प्रणाम करते ही सभी कैदियोंके हृदयमें कृष्णभक्तिके विकार उत्पन्न हो आये। वे लोग आनन्दसे क्रन्दन करने लगे। उनकी अवस्था देखकर अहैतुकी कृपालु श्रील हरिदास ठाकु
आशीर्वाद देते हुए बोले—“अभी जैसी अवस्थामें हो, वैसी अवस्थामें ही रहो।” उनके आशीर्वादका अर्थ न समझकर कैदीलोग दुःखी हो गये तथा मन-ही-मन चिन्ता करने लगे—“ये तो बहुत ही निर्दयी व्यक्ति है।”

उन्हें दुःखी देखकर तथा उनके मनकी अवस्था समझकर श्रील हरिदास ठाकु
समझाते हुए कहा—“मैंने तुमलोगोंको जो आशीर्वाद दिया है, उसका वास्तविक अर्थ नहीं जाननेके कारण ही तुमलोग दुःखी हो रहे हो। अतएव एकाग्रचित्तसे उसके अर्थका भलीभाँति विचार करो। मैं कभी भी किसीको ऐसा आशीर्वाद नहीं देता, जिससे किसीका अमङ्गल हो। मैंने कहा—‘अभी जैसी अवस्थामें हो, वैसी ही अवस्थामें रहो’—इसका अर्थ यह है कि इस समय जैसे तुम सभीका मन श्रीकृष्णमें है, सब समय वैसे ही रहे। अर्थात् अभी तुम जिस प्रकारसे कृष्णनाम और कृष्णका चिन्तन कर रहे हो, तुम सभी मिलकर निरन्तर ऐसे ही करते रहो। इस समय तुमलोगोंमें किसीके प्रति हिंसा करनेकी और किसीको कष्ट पहुँचानेकी वृत्ति नहीं है। अतएव तुम सभी कातर स्वरसे ‘कृष्ण-कृष्ण’ कहकर उनका चिन्तन करो। तुम्हें भगवदनुशीलनका सुअवसर प्राप्त हुआ है।” दुःसङ्गके फलसे कृष्णनामके विस्मृत हो जानेकी सम्भावना हेतु दुःसङ्गका निषेध करते हुए श्रील हरिदास ठाकु
कि जेलसे छूटकर दुष्टोंके सङ्गमें जानेसे तुमलोगोंका मन

पुनः मलिन हो जाये। ध्यान रखना कि जब तक जीवोंकी विषय-भोगकी चेष्टा प्रबल रहती है, तब तक उसकी कृष्ण-भजन करनेकी सम्भावना नहीं रहती।

"यह निश्चित जानो कि श्रीकृष्ण विषयी व्यक्तिसे बहुत दूर हैं। विषयभोगोंमें आविष्ट मन ही समस्त प्रकारके जञ्जालोंकी जड़ है। स्त्री-पुत्र आदि सब कु
तथा साक्षात् कालस्वरूप है। सौभाग्यसे ही किसी सुकृतिशाली व्यक्तिको साधुसङ्ग प्राप्त होता है, जिससे उसके उपदेशोंको श्रवणकर तथा उसकी कृपा प्राप्तकर विषयीका मन विषयोंसे हट जाता है तथा वह श्रीकृष्णका भजन करना आरम्भ कर देता है। अतः मेरे आशीर्वादका उद्देश्य यह नहीं था कि तुम सदाके लिए जेलमें ही पड़े रहो। मेरे कहनेका उद्देश्य था कि तुमलोग सदैव विषयोंको भूलकर 'हरि-हरि' बोलो। तुम्हें सदैव ऐसे साधुओंका सङ्ग प्राप्त हो, जिनके सङ्गसे तुम सदैव कृष्णानुशीलनमें निमग्न रहो। साधुसङ्ग तथा भगवान्‌का नाम करनेका सुयोग तुम्हें सब समय प्राप्त होता रहे—मैंने छलपूर्वक ऐसा ही कहा था। अतः मेरा आशीर्वाद सुनकर लेशमात्र भी दुःखी मत होना। सब जीवोंके प्रति मेरी दया-दृष्टि है। मैं आशीर्वाद देता हूँ कि श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें तुम्हारी दृढ़ भक्ति हो। तुमलोग चिन्ता मत करो, दो-तीन दिनमें ही तुम सभी जेलसे छूट जाओगे। परन्तु इसका विशेष ध्यान रखना कि पुनः दुःसङ्गवशतः तुम्हारे हृदयसे कृष्णभक्ति दूर न हो जाये। स्थूलदेहकी स्वाधीनताके सुख अथवा पराधीनताके दुःखरूपी भोगकी चिन्ताको छोड़कर सदैव कृष्णनाम उच्चारण करना।"

अमन्दोदया[१] करनेवाले दयाके सागर वैष्णव ठाकु
आर्शीवाद सचमुच दीन-हीन व्यक्तियोंके लिए किसी भी

---

[१] जो दया कभी अमन्द अर्थात् अकल्याण न उत्पन्न करे, उसे अमन्दोदया कहते है।

अवस्थामें अशुभजनक हो ही नहीं सकता। वह तो सभी परिस्थितियोंमें परम कल्याणकारी ही होता है।

यवन बादशाहके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु प्रश्न तथा परामर्श प्रदान

कैदियोंपर कृपा करनेके बाद श्रील हरिदास ठाकु बादशाहके पास आ गये। श्रील हरिदास ठाकु
उज्ज्वल देहके अत्यधिक मनोहर अद्भुत तेजको देखकर बादशाहने परम आदरपूर्वक उन्हें बैठनेके लिए आसन प्रदान किया। श्रील हरिदास ठाकु
उच्चारित हो रहा था। श्रील हरिदास ठाकु
किये जा रहे अप्राकृत वैकु
देखकर उसमें सङ्कीर्ण जाति-बुद्धि करते हुए वह बादशाह नम्रतापूर्वक पूछने लगा—"मैं जानना चाहता हूँ कि किस कारणसे तुम्हारा अधःपतन हुआ है। यवनकु
सर्वोत्तम कु
तुम्हारा यवनकु
तुमने निकृष्ट हिन्दुओंके आचरणको स्वीकार किया है? हिन्दु हमारेसे निम्न-जातिके हैं, इसलिए हम उनके द्वारा स्पर्श किये गये भोजन तकको भी नहीं खाते। और तुम हो कि उनके साथ मिलते-जुलते हो तथा खान-पानका भी कोई विचार नहीं करते। तुमने बहुत प्रतिष्ठित कु
है, उत्तम-जातिसे निम्न-जातिमें अधःपतित होना उचित नहीं है। तुम हिन्दुओं जैसा आचरण करके अपनी जाति और धर्मका उल्लङ्घन कर रहे हो। अतः मरनेके पश्चात् तुम्हारा उद्धार कैसे होगा? क्या कभी इस विषयमें भी कोई चिन्ता की है? मुझे लगता है कि तुमने कभी भी इन सब बातोंपर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया होगा। अतः मैं तुम्हें परामर्श देता हूँ कि इन सब बातोंको न जाननेके कारण

अनजानेमें ही तुम्हारेसे जो पाप हो गये है, उन्हें नष्ट करनेके लिए तुम्हें कलमा[१] उच्चारण करना चाहिये।”

यवन बादशाहके प्रश्नका उत्तर देते हुए श्रील हरिदास ठाकु

मायाके द्वारा मोहित बादशाहके ऐसे वचन सुनकर—“अहो विष्णुमायाका कैसा प्रभाव है?” ऐसा कहकर अहैतुकी दया करनेवाले श्रील हरिदास ठाकु
ईश्वरतत्त्वका वर्णन करते हुए कहने लगे—“अरे बाप! परमेश्वर—एक, नित्य, अद्वितीय तथा सभी जीवोंके प्रभु हैं। हिन्दु-मुस्लिम, बालक-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, सभीका ईश्वर एक ही है। ईश्वरके तत्त्वसे अनभिज्ञ हिन्दु और अहिन्दु यवन, दोनों ही केवल ईश्वरके नाममें पृथक् बुद्धि करके भिन्न-भिन्न ईश्वरोंकी कल्पना करते हैं तथा परस्परके प्रति अज्ञतामूलक विरोध प्रदर्शित करते हैं। किन्तु जब उस वैषम्य और मतभेदको परित्याग करके निरपेक्ष भावसे यवनोंके शास्त्र कु
किया जाये, तब ईश्वरतत्त्वमें इस प्रकारकी कोई भेद-दृष्टि गोचर नहीं होती। अतएव निष्कर्ष यह है कि सबका एक ही ईश्वर है। हिन्दुओं और मुसलमानोंके अनुसार केवल उनके नामका ही भेद है। कु
रूपसे विचार करनेपर यह स्पष्ट हो जाता है कि ईश्वर एक ही हैं। ईश्वर निर्मल शुद्ध वस्तु हैं। ईश्वर अविनाशी और नित्यकाल ही स्थितिशील वस्तु हैं। ईश्वर साम्प्रदायिक भावसे खण्डित नहीं हो सकते। ईश्वरका कभी क्षय अथवा ह्रास नहीं होता। अतएव वे यवन अथवा हिन्दु सभी जातिके जीवोंके हृदयमें ही अन्तर्यामी परमात्माके रूपमें प्रकटित होकर अवस्थान करते हैं। यवनके हृदयमें जिस ईश्वरका

---

[१] महोम्मद धर्म ग्रहण करनेके लिए कु

अधिष्ठान होता है, हिन्दुओंके हृदयमें भी वही ईश्वर ही अधिष्ठित होते हैं।

"जीव अनादि कालसे ईश्वरसे विमुख होनेके कारण अशुद्धमति वाला होकर अर्थात् जड़ीय देश-काल-पात्रमें अनित्य प्रतीतिवशतः अपने आपको भोक्ता मानकर ईश्वर सेवासे विमुख हो जाता है। जिसके फलस्वरूप वह हृदयमें स्थित परिपूर्ण अन्तर्यामी ईश्वर अर्थात् परमात्म-वस्तुको सब प्रकारसे परिपूर्ण अखण्ड वस्तु न जानकर अपने समान खण्ड वस्तु मानकर भ्रान्त हो जाता है। किन्तु ऐसी अवस्थामें भी यदि वह कल्पित भोग और त्यागमूलक ज्ञानको परित्याग कर दे, तो भक्तिके प्रभावसे वह भगवान्को एकमात्र सेव्य-वस्तुके रूपमें जान सकता है।

"वही अखण्ड, अव्यय, नित्यशुद्ध ईश्वर बद्धजीवोंके प्रयोजक-कर्त्ता विधाता बनकर जिसे जिस प्रकारकी योग्यता प्रदान करते हैं, बद्धजीव वैसी योग्यताको प्राप्त करके मनोधर्मका अनुकरण करते हुए विभिन्न कर्मोंका अनुष्ठान करता है। अर्थात् त्रिभुवनमें स्थित सभी प्राणियोंको वे ईश्वर जैसी प्रेरणा प्रदान करते हैं, सभी वैसा ही करते हैं। संसारमें उन ईश्वरके नाम, गुण आदिका सभी धर्मोंके लोग अपने धर्मशास्त्रोंके मतके अनुसार गुणगान करते हैं तथा भावग्राही भगवान् जनार्द्दन भी उसी रूपमें उनके भावोंको ग्रहण करते हैं। यदि कोई एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तिके भावका तिरस्कार करके उसके प्रति हिंसा करता है, तब वैसी हिंसाके द्वारा परमेश्वर की ही हिंसा होती है। अतएव एक जीवके लिए किसी दूसरे जीवके प्रति हिंसा करना उचित नहीं है। यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्तिके हृदगत भावोंको बलपूर्वक परिवर्त्तित करके अपने व्यक्तिगत सङ्कीर्णभावसे उसको परिचालित करनेका प्रयत्न करता है, तब वह केवल परधर्मकी निन्दा ही नहीं, बल्कि सभी धर्मोंके प्रतिपाद्य ईश्वरके प्रति ही हिंसा

करता है। ईश्वरकी सेवा और हिंसा—ये दो पृथक्-पृथक् विचार हैं। यदि किसीकी बुद्धि ईश्वरकी सेवाको ही 'हिंसा' मानकर भ्रान्त हो, तो वह ईश्वर-सेवा विमुख होकर भक्तोंके प्रति ही हिंसा कर बैठता है। भगवान्के प्रति प्रीतिहीन होनेसे जीव कभी तो अन्याभिलाषी, कभी कर्मी, कभी हठयोगी, कभी निर्भेद ब्रह्मका अनुसन्धान करनेवाला, तो कभी राजयोगी बन बैठता है। वैसे जीवोंके नित्य मङ्गलके लिए उन्हें मुकु
ईश्वर-सेवाके विरुद्ध तथा अन्यान्य इन्द्रिय सुखमय कार्योंमें लगानेपर उनके प्रति हिंसा करना होता है, जिसका सभीको अवश्य ही त्याग करना चाहिये।

श्रील हरिदास ठाकु
करनेका' कारण प्रस्तुत करना

"ईश्वरने मेरे चित्तमें जिस प्रकारकी प्रेरणा दी है, मैं उसी प्रकारके चित्तवाला होकर ही भगवत्-सेवाके कार्यमें नियुक्त हूँ। भगवान् जिसके प्रति जैसी कृपा करते हैं, वह उसी प्रकारसे ही भगवान्के सेवा-कार्यमें अग्रसर हो सकता है।

"मैं जिस प्रकार यवनकु
इच्छावशतः ब्राह्मणोचित-धर्म विष्णुसेवामें रत हुआ हूँ, उसी प्रकार कोई ब्राह्मण कु
अपनी ब्राह्मणताका परित्याग करके अपने मनोधर्मकी रुचिके अनुसार वेद-विरुद्ध-समाजके शास्त्रोंकी आज्ञाका पालन कर सकता है। अतः इस विषयमें हिन्दुलोग भी क्या कर सकते हैं? जीव अपनी-अपनी रुचि तथा प्रेरणा आदि कर्मोंके द्वारा चालित होकर जो-जो करता है, उसीके द्वारा ही उसे समुचित दण्ड अथवा पुरस्कार प्राप्त होता है। अतएव उसे अलगसे दण्ड देनेकी कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। जिसके पूर्वजन्मोंके जैसे संस्कार होते हैं, उसीके अनुसार उसके

हृदयमें श्रद्धा उत्पन्न होती है। अतः इस विषयमें आप या हिन्दूलोग कु
दिखलाकर किसीको उसकी श्रद्धाके अनुसार धर्म ग्रहण करनेसे रोका जाये, तो यह सर्वथा अनुचित है। हे महाशय! आप मेरी बातोंपर अच्छी प्रकारसे विचार कीजिये। उसके बाद भी यदि आपको लगे कि मैंने कोई दोष किया है, तो आप अवश्य ही मुझे दण्ड प्रदान कीजिये।"

श्रील हरिदास ठाकु
बादशाहको उत्तेजित करना

श्रील हरिदास ठाकु
वचनोंको सुनकर बादशाह और वहाँपर उपस्थित सभी मुसलमान सन्तुष्ट हो गये। केवल वही एक पापी काजी, जिसने बादशाहसे हरिदास ठाकु
नहीं हुआ। बादशाहके मनको बदला हुआ देखकर, वह क्रोधसे जल उठा और बादशाहको उत्तेजित करता हुआ कहने लगा—"आप इसकी बातोंमें न आइये। आप इसे आदेश दीजिये कि यह हिन्दुओंके भगवान्‌का नाम लेना, हिन्दुओंके घरोंमें जाना और खाना बन्द करे तथा कु
एवं अल्लाहका नाम लेना आरम्भ कर दे। यदि यह आपकी आज्ञाका पालन करनेके लिए सहमत न हो, तो आप इसे अवश्य ही दण्ड दीजिये, नहीं तो यह दुष्ट दूसरोंको भी अपने ही जैसा बना देगा। इस प्रकार हमारा मुस्लिम धर्म सङ्कटमें पड़ जायेगा।"

बादशाहके द्वारा हरिदास ठाकु
स्वीकार करने हेतु प्रार्थना

धर्मान्ध काजीकी बात सुनकर बादशाह कु
बहुत नम्रतापूर्वक बोले—"भैया! यदि तुम कु

अल्लाहका नाम लेना स्वीकार कर लो, तो चिन्ताकी कोई बात नहीं है, तुम्हें कोई कु

न कहनेपर भी ये काजी लोग बादमें तुम्हें दण्ड देंगे। उस समय तुम्हें मजबूर होकर दण्डके भयसे अपना मुस्लिम धर्म स्वीकार करना ही पड़ेगा। अतः इससे तो अच्छा यह है कि तुम अभी सहर्ष मुस्लिम धर्मको पुनः स्वीकार कर लो, व्यर्थमें अपमानित होनेका क्या लाभ है?"

श्रील हरिदास ठाकु

श्रीनाम प्रभुके प्रति अचला श्रद्धा ज्ञापित

बादशाहके वचन सुनकर श्रील हरिदास ठाकु

होकर बोले—"भगवान्‌की जैसी इच्छा है, वैसा ही होगा। उनकी इच्छाके बिना कोई कु

एकमात्र ईश्वर ही जीवको उसके कर्मोंके अनुसार अच्छा या बुरा फल प्रदान करते हैं। परन्तु अज्ञानी जीव व्यर्थमें मिथ्या अहङ्कार करता है कि मैं फल देनेवाला हूँ। जीव तो केवल माध्यम है, वास्तवमें इच्छा तो भगवान्‌की ही होती है। अतः यदि भगवान्‌की इच्छा मुझे दण्ड देने की है, तो मुझे दण्ड स्वीकार है।"

श्रीहरिनाम-कीर्त्तनमें निष्ठाके मूर्त्तविग्रह सत्यस्वरूप श्रील हरिदास ठाकु

आदर्श और स्वाभीष्ट श्रीनाम प्रभुके प्रति अचला श्रद्धा और प्रपत्ति ज्ञापन करते हुए कहने लगे—"इतना निश्चित है कि

"खण्ड-खण्ड हइ देह जाय यदि प्राण।
तबु आमि वदने ना छाड़ि हरिनाम॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/९४)

"भले ही मेरे शरीरके टुकड़े-टुकड़े भी हो जायें, चाहे प्राण ही क्यों न चले जायें, परन्तु तब भी मैं अपने मुखसे हरिनाम करना बन्द नहीं करूँगा।

श्रील हरिदास ठाकु

"माता-पितासे प्राप्त यह जड़देह चिरस्थायी नहीं है। कृष्णसेवासे विमुख प्राण, जो इस समय विषय-सुखमें मग्न हैं, वह भी विनाशी तथा परिवर्त्तनशील हैं, किन्तु श्रीभगवान्का नाम तथा भगवान् नित्य हैं और कभी भी एक-दूसरेसे पृथक् नहीं है। मायिक वस्तुओंका नाम जिस प्रकार मनुष्योंके द्वारा कल्पित होता है, वैकु
नामी भगवान् एक ही वस्तु हैं। अतएव नाम-सेवाको परित्याग करके मैं कभी भी अपने स्थूल-सूक्ष्म शरीरोंके प्रति आस्था स्थापित नहीं कर सकता। जीवमात्र ही भगवान्का दास है, अर्थात् 'वैष्णव' है। वैष्णवोंका श्रीहरिनाम ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य कोई भी कार्य नहीं है। साधन और सिद्ध, दोनों अवस्थाओंमें ही नाम-सेवा ही जीवोंका एकमात्र कृत्य है, उसे परित्याग करके मैं कभी भी मानव-कल्पित सामाजिक आचरण ग्रहण नहीं करूँगा। इसके लिए समाज अथवा शासक लोग मुझे जितना भी दण्ड क्यों न दें, उसे मैं प्रसन्नतापूर्वक बिना किसी विरोधके स्वीकार कर लूँगा। नित्य हरिसेवन परित्याग करके मैं कभी भी अनित्य विषय-सुखकी ओर धावित नहीं होऊँगा। श्रौतपथका अवलम्बन करके मैंने जिस वैकु
कृष्ण-सङ्कीर्त्तनके अतिरिक्त मेरा और कोई भी कृत्य नहीं है। देह और मन, ये दोनों शरीर 'मुझ शरीरी'—आत्मासे पृथक् हैं, क्योंकि 'मैं'—नित्य वस्तु हूँ, किन्तु देह और मन—अनित्य वस्तुएँ हैं।"

श्रील हरिदास ठाकु

बादशाहके समक्ष प्रस्ताव

श्रील हरिदास ठाकु
बादशाहने काजीसे पूछा, "अब इसका क्या करना चाहिये?"

श्रौतपन्थी वैकु

ठाकु

उद्देश्यसे उनके विरुद्ध श्रुतिविरोधी असुर काजी हिंसाका अवलम्बन करते हुए बोला—“बिना कु

बाईस बाजारोंमें मारते-मारते तब तक घूमानेका आदेश दीजिये, जब तक इसके प्राण न निकल जायें। बाईस बाजारोंमें मारते हुए घुमानेपर भी यदि यह जीवित रहेगा, तो मैं मानूँगा कि यह कोई निष्कपट सिद्ध पुरुष है तथा सत्य कह रहा है। और यदि यह मर गया, तब तो इसे इसके किये का उपयुक्त दण्ड ही मिला है, ऐसा समझना चाहिये।” प्रहरियोंको बुलाकर काजीने तर्जन-गर्जन करते हुए कहा—“इसे बाईस बाजारोंमें घुमाते-घुमाते कोड़ेसे इतना मारना कि इसके प्राण निकल जायें। इसने मुसलमान होकर हिन्दुधर्म ग्रहणकर भयङ्कर पाप किया है, अतएव मरनेपर ही इसका उद्धार हो सकता है। जो यवन स्वधर्मका परित्याग करके हिन्दुओंके धर्म और आचरणको ग्रहण करता है, मृत्यु अथवा प्राण दण्ड ही उनके लिए विहित दण्ड है। यवन होनेपर भी हिन्दुत्व ग्रहण करनेसे अधिक पाप और कोई नहीं है, मृत्युदण्ड ही उस पापका एकमात्र प्रायश्चित्त है।”

बादशाहके द्वारा प्रहरियोंको हरिदास ठाकु
बाजारोंमें ले जाकर मारनेका आदेश

पाषण्डी काजीकी बात सुनकर पापी बादशाहने भी सहमत होते हुए ऐसा ही करनेका आदेश दे दिया। आदेश प्राप्तकर दुष्ट पहरियोंने श्रील हरिदास ठाकु

और अत्यधिक क्रोधित होकर चारों ओरसे घेरकर उन्हें एक बाजारसे दूसरे बाजार तथा दूसरे बाजारसे तीसरे बाजारमें बुरी तरहसे मारते-मारते घुमाने लगे। जो वैष्णवोंसे विद्वेष करते हैं, उनके पापका घड़ा शीघ्र ही भर जाता है। पाषण्डी काजी

और उसके कहे अनुसार बादशाह, दोनोंमें श्रील हरिदास ठाकु
महापापी थे। उनके जिन सेवकोंने उनकी अधीनताको स्वीकार करके श्रील हरिदासको पकड़ लिया तथा प्रहार करने लगे, वे भी पापियोंके सङ्ग–दोषसे दुष्ट बन गये। यद्यपि प्रहरी श्रील हरिदास ठाकु
श्रील हरिदास ठाकु
हुए हरिनाम कर रहे थे। नामरसमें डूबे रहनेके कारण उन्हें लेशमात्र भी कष्ट अनुभव नहीं हो रहा था। श्रीकृष्णमें ही अपने चित्तको सम्पूर्ण रूपसे निमग्न कर देनेवाले प्रसन्नात्मा श्रील हरिदास ठाकु
रहित होकर उन दुष्टोंकी इच्छानुसार आगे बढ़ते जा रहे थे।

श्रील हरिदास ठाकु
जन समाजकी अवस्था

श्रील हरिदास ठाकु
मार खाते हुए देखकर भक्तिमान लोगोंका हृदय दुःखसे फटने लगा। रोते–रोते कोई कहने लगा कि अवश्य ही थोड़े समयमें इस राज्यका सर्वनाश होनेवाला है, क्योंकि यहाँपर ऐसे महापुरुषको इतनी निर्दयतापूर्वक अकारण ही पीटा जा रहा है। श्रील हरिदास ठाकु
देखकर कोई असन्तुष्ट व्यक्ति बादशाह और काजीको क्रोधित होकर अभिशाप देने लगा, तो कु
होकर श्रील हरिदास ठाकु
मारनेके लिए तैयार हो गये। अन्य कु
हरिदासके प्राणोंकी रक्षाके लिए प्रहरियोंके समक्ष कृपा–भिक्षा करने लगे तथा कु
पकड़ लिये तथा रोते–रोते कहने लगे—"भाइयो! आपलोग इन्हें धीरे–धीरे मारो, बदलेमें हम आप लोगोंको बहुत–सा धन

प्रदान करेंगे।" परन्तु इतना सुननेपर भी उन भक्तद्रोही, घृणित, निर्मम-हृदयवाले पापियोंका हृदय नहीं पिघला, बल्कि वे क्रोधित होकर उन्हें और भी जोर-जोरसे पीटने लगे।

महाभागवत श्रील हरिदास ठाकु
स्वाभाविक सहनशीलता

श्रीकृष्णकी कृपासे श्रील हरिदास ठाकु
भयङ्कर मारसे लेशमात्र भी कष्ट नहीं हो रहा था। जिस प्रकार दैत्य हिरण्यकशिपुके आदेशपर असुरोंके द्वारा प्रह्लादको अनेक प्रकारके कष्ट दिये जानेपर भी प्रह्लादजीका बाल भी बाँका नहीं हुआ था, ठीक उसी प्रकार आज इन दुष्टोंके भयङ्कर प्रहारोंसे श्रील हरिदास ठाकु
नहीं हुआ।

महाभागवतोंमें ऐसी सहिष्णुता स्वाभाविक होती है। वे भगवत्-सेवामें सब समय इतना अधिक निमग्न रहते हैं कि भगवत्-बहिर्मुख जगत्-वासियोंका कटु-व्यवहार उन्हें किसी प्रकारका उद्वेग देनेमें समर्थ नहीं होता। श्रीगौरसुन्दरने इसलिए अपने श्रीशिक्षाष्टकमें कहा है कि जो व्यक्ति वृक्षसे भी अधिक सहनशील होंगे, वे ही हरनाम-सङ्कीर्त्तन करनेमें समर्थ होंगे, दूसरे नहीं। यदि साधक असहिष्णु होगा, तब वह हरिकीर्त्तन करनेमें समर्थ नहीं होगा। जगत्में असंख्य स्थानोंपर देखा गया है कि सब प्रकारके मङ्गलको प्रदान करनेवाली सत्यकथाके प्रचारक हरिकीर्त्तन करनेवालोंपर भगवत्-बहिर्मुख जनगण बिना किसी कारणके अन्यायपूर्वक आक्रमण करते हैं तथा उनके हरिकीर्त्तनमें रत मुखको बन्द करनेके लिए अनेक प्रकारकी कु
मद, धन और जड़-विद्याके मदमें प्रमत होकर भगवत्-विमुख समाज एकमात्र वास्तव सत्य-वस्तु हरिके सङ्कीर्त्तनको सब प्रकारसे बाधा देनेके लिए सदैव यत्न करता है।

श्रील हरिदास ठाकु
भगवान्से प्रार्थना

जिन सत्यस्वरूप नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
करनेसे ही भयङ्कर कष्ट स्वयं नष्ट हो जाते हैं, तब फिर वे कष्ट श्रील हरिदास ठाकु
अतः प्रहरियों द्वारा किये जानेवाले भीषणसे भी अति-भीषण प्रहारोंसे श्रील हरिदास ठाकु
हुआ, बल्कि उन्हें तो उन दुष्टोंकी चिन्ता ही लगी हुई थी। यह ठीक भी है, क्योंकि जो भागवत-वैष्णवोंके विरुद्ध आचरण करते हैं, उन सब अपराधियोंके मङ्गलविधान तथा उद्धारके लिए साधुजन उन्हें अत्यधिक दयाका पात्र मानकर हृदयमें बहुत दुःख अनुभव करते हैं। ईसामसीह और हजरतके चरित्रमें भी ऐसा ही देखा जाता है।

श्रील हरिदास ठाकु
भगवान् इन्हें क्षमा नहीं करेंगे। अतः इनकी क्या गति होगी? इसकी चिन्ता करनेसे उनका हृदय द्रवित हो गया तथा वे भगवान्से प्रार्थना करने लगे—"हे श्रीकृष्ण! आप इन सबको क्षमा करना। मेरे कारण आप इन्हें दण्ड प्रदान नहीं करना।"

श्रील हरिदास ठाकु
आश्चर्यचकित होना तथा बादशाहके भयसे रक्षा हेतु प्रहरियोंकी श्रील हरिदास ठाकु

यद्यपि श्रील हरिदास ठाकु
हेतु भगवान्से प्रार्थना कर रहे थे, परन्तु वे निर्दय पापी लोग निर्दयतापूर्वक उन्हें पीटते-पीटते बाजारोंमें घुमाते जा रहे थे। क्षण-प्रतिक्षण उनका क्रोध बढ़ता जा रहा था तथा वे श्रील हरिदास ठाकु
प्रहार कर रहे थे। इतने भयङ्कर रूपसे मारनेपर भी श्रील हरिदास ठाकु

चिह्न नहीं देखा, तो अपने-अपने आसुरिक प्रयत्नकी पराजय तथा विफलता देखकर वे विस्मित होकर परस्पर कहने लगे—"क्या ऐसी भयङ्कर मार खाकर भी कोई मनुष्य जीवित रह सकता है? इससे पहले भी हमने बहुत लोगोंको ऐसा दण्ड दिया है। हमारे भयङ्कर प्रहारोंसे कोई एक बाजारमें, तो कोई दो बाजारोंमें मर गया। आज इसे मारते-मारते हमने बाईस बाजारोंमें घुमाया, परन्तु इतनी मार खाकर भी यह मरा नहीं, बल्कि आनन्दित हो रहा है। इसके मुखपर दुःखका किञ्चिन्मात्र भी चिह्न नहीं, बल्कि मुस्कराहट है। अतः अवश्य ही यह कोई 'जिन्दा-पीर' अर्थात् अलौकिक-शक्तिसम्पन्न सिद्धपुरुष है।" ऐसा विचारकर वे श्रील हरिदास ठाकु
कहने लगे—"हे हरिदास! तुम्हारे कारण आज हम सबका सर्वनाश होगा। हमारे इतना मारनेपर भी तुम्हारे प्राण नहीं निकले, अतः ऐसा सुनकर काजी क्रोधके वशीभूत हो हम सबके प्राण ले लेगा।"

श्रील हरिदास ठाकु

ध्यानमें निमग्न होकर स्वेच्छापूर्वक श्वास-प्रश्वास बन्द

अपने ऊपर प्रहार करनेवाले असुरोंके अनुचरोंकी क्रूर काजीके भावी कोपसे रक्षा करनेके लिए निर्मत्सर श्रील हरिदास ठाकु
मेरे जीवित रहनेसे ही तुम लोगोंका अकल्याण हो सकता है, तो देखो! मैं अभी मर जाता हूँ।" ऐसा कहकर वे श्रीकृष्णके ध्यानमें ऐसे निमग्न हो गये कि उनका शरीर निश्चेष्ट हो गया, और-तो-और उनका श्वास-प्रश्वास भी बन्द हो गया। यह देखकर प्रहरी आश्चर्यमें पड़ गये। वे उन्हें उठाकर ले गये और बादशाहके द्वारपर जाकर डाल दिया।

काजीके द्वारा श्रीहरिदास ठाकु
गङ्गामें फैंकनेका निर्देश

श्रील हरिदास ठाकु
आदेश दिया—“जाओ इसे समाधि दे दो।” यह सुनकर काजी बोला, “यदि इसे समाधि देंगे, तो इसकी अच्छी गति होगी। अनेक जन्मोंके सौभाग्यसे इसने मुस्लिम कु
भी हिन्दुधर्मको ग्रहण करके जैसा घृणित कार्य किया है, उसके लिए इसे गङ्गामें फेंक देना ही उचित होगा, जिससे इसकी रुह (आत्मा) चिरकालके लिए तड़फती रहे।”

श्रील हरिदास ठाकु

काजीके वचनोंको सुनकर सभी यवन श्रील हरिदास ठाकु
परन्तु श्रील हरिदास ठाकु
पड़े रहे। जब श्रील हरिदास ठाकु
उसी समय भगवान् विश्वम्भरने उनके शरीरमें अधिष्ठित होकर अपने आपको प्रकाशित किया। जब श्रीविश्वम्भर ही उनके शरीरमें अधिष्ठित हो गये, तब किसकी शक्ति थी, जो श्रील हरिदास ठाकु
यवन चारों ओरसे श्रील हरिदास ठाकु
करने लगे, परन्तु वे तो विशाल स्तम्भकी भाँति निश्चल पड़े रहे। श्रीकृष्णके ध्यानानन्दरूपी समुद्रमें निमग्न रहनेके कारण श्रील हरिदास ठाकु
तो यह भी नहीं जानते थे कि वे कहाँ हैं—अन्तरीक्षमें, पृथ्वीपर या फिर गङ्गामें। जिस प्रकार सब समय भगवान्‌के स्मरणमें डूबे रहनेके कारण प्रह्लाद महाराजको लेशमात्र भी बाह्यज्ञान नहीं रहता था, उसी प्रकार भगवान्‌को निरन्तर हृदयमें धारण करनेवाले श्रील हरिदासके लिए भी ऐसा सब कु

नाम-भजनके प्रभावको जगत्में प्रकाशित करने हेतु श्रील हरिदास ठाकु

वास्तवमें किसीका ऐसा सामर्थ्य नहीं था कि कोई श्रील हरिदास ठाकु
श्रीहनुमानजीने ब्रह्मास्त्रका सम्मान रखनेके लिए स्वयं इन्द्रजितका बन्धन स्वीकार किया था, ठीक उसी प्रकार जगत्‌को सर्वोत्तम सहिष्णुताके आदर्शकी शिक्षा प्रदान करनेके लिए श्रील हरिदास ठाकु
किया। इसके द्वारा उन्होंने यह भी दिखलाया कि भक्तिविरोधी अन्याभिलाषी, कर्मी और मायावादी सम्प्रदाय भक्तोंके प्रति जितना भी अत्याचार क्यों न करें, तथापि भक्त भगवान्‌के नाम-भजनको कभी भी परित्याग नहीं करते। यदि कोई दृढ़तापूर्वक हरिनामका आश्रय लेता है, तो किसीका सामर्थ्य नहीं है कि कोई उसका अनिष्ट कर सके। नाम प्रभु स्वयं अवश्य ही उसकी रक्षा करते हैं। अतएव कु
प्राप्त करनेपर उपरोक्त कारणोंसे श्रील हरिदास ठाकु
यवनोंको 'जैसा वे चाहते थे,' वैसा करने दिया। अन्यथा जिसके रक्षक स्वयं गोविन्द हैं, ऐसे श्रीहरिदास ठाकु
गङ्गामें फेंक सकता था?

सत्य सत्य हरिदास-जगत-ईश्वर।
चैतन्यचन्द्रेर महा-मुख्य अनुचर॥
(चै० च० आ० १६/१४२)

यह सत्य है, सत्य है कि श्रील हरिदास ठाकु
ईश्वर श्रीचैतन्यचन्द्रके एक महान और मुख्य अनुचर हैं।

श्रील हरिदास ठाकु

यद्यपि यवन आश्चर्यचकित थे कि कितने समयसे अनेक उपाय करके भी जिन्हें थोड़ा-सा हिलानेमें भी वे समर्थ नहीं हो पा रहे थे, अब बिना किसी विशेष प्रयासके वे श्रील

हरिदास ठाकु
फिर उन्होंने श्रील हरिदास ठाकु
दिया। कृष्णप्रेममें डूबे हुए श्रील हरिदास ठाकु
हुए जा रहे थे। कु
उनको सम्पूर्ण बाह्यज्ञान हुआ अर्थात् उनकी प्रेममूर्च्छा भङ्ग हुई तथा वे परमान्दित होते हुए गङ्गाके तटपर आ लगे। वहाँसे उच्चस्वरसे हरिनाम करते-करते वे फु
गये। अब उनके शरीरपर एक भी घाव नहीं था, बल्कि उनके शरीरसे पहलेसे भी अधिक तेज निकल रहा था। उन्हें जीवित देखकर लोगोंके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा। जङ्गलमें आगकी भाँति चारों ओर यह समाचार फैल गया कि यवनोंके हाथों मर जानेपर गङ्गामें फेंक दिये जानेके उपरान्त भी श्रील हरिदास ठाकु
शक्तिको देखकर सभी यवनोंके हृदयसे उनके प्रति हिंसा करनेकी भावना दूर हो गयी तथा सभीके मनका मैल दूर हो गया। उन्हें मुक्तपुरुष समझकर जिस किसीने पूज्यबुद्धिसे उनके चरणोंमें विनीत भावसे प्रणाम किया, उनका भवबन्धन दूर हो गया।

बादशाहके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
बादशाहके पास पहुँचा, तो वे भी दौड़े-दौड़े आये तथा श्रील हरिदास ठाकु
हुए कहने लगे—"वास्तवमें ही आप 'महापीर' [अर्थात् सिद्धपुरुष] हैं। योगी और ज्ञानी तो केवलमात्र मुखसे ही बोलते हैं कि वे सिद्ध-पुरुष हैं, किन्तु आपको तो वास्तवमें सिद्धि प्राप्त हो चुकी है। आपका दर्शन करनेके लिए ही मैं यहाँपर आया हूँ। कृपाकर आप मेरे समस्त अपराधोंको क्षमा करें। आपके लिए तो शत्रु और मित्र सभी समान हैं।

आपको पहचाननेकी शक्ति तो त्रिभुवनमें किसीकी भी नहीं है, फिर मैं तो एक तुच्छ मनुष्य हूँ, इसीलिए आपकी महिमा न जानकर ही मुझसे आपके चरणोंमें भयङ्कर अपराध हो गया है। अब आप गङ्गाके तट अथवा निर्जन गुफामें कहीं भी अपनी इच्छानुसार रह सकते हैं तथा कु
हैं, आपको कोई भी बाधा नहीं पहुँचायेगा। अत्यधिक घृणित महापराधी मेरे जैसे व्यक्तिके अक्षम्य अपराधके लिए आप मुझपर कृपादृष्टि करके मुझे क्षमा कीजिये।”

वैष्णव ठाकु

अहो! महाभागवत परमहंस वैष्णव ठाकु
अलौकिक महिमा! ठाकु
रहित जिस बादशाहने पहले अत्यधिक क्रोधके वशीभूत होकर उन्हें कठोर दण्ड प्रदान करनेके उद्देश्यसे अपने प्रहरियोंके माध्यमसे अपने पास बुलाया था, वही विष्णु-वैष्णव विरोधी महापापी व्यक्ति ही अन्तमें श्रील हरिदास ठाकु
क्षमा और सहिष्णुताके ज्वलन्त अलौकिक आदर्शको देखकर अत्यधिक विस्मित तथा मुग्ध हो गया। वह श्रील हरिदास ठाकु
करने लगा। केवल इतना ही नहीं, वह पाषण्डी महापराधी अनुतापकी अग्निमें दग्ध होकर अपने द्वारा किये गये अपराधोंके लिए क्षमा-याचना करनेके बाद उनके चरणकमलोंकी वन्दना तक करनेके लिए बाध्य हुआ।

श्रील हरिदास ठाकु
ब्राह्मणोंके द्वारा उन्हें शुद्धभक्तके रूपमें स्वीकार करना

बादशाह और अन्यान्य मुसलमानोंपर कृपाकर श्रील हरिदास ठाकु
ब्राह्मणोंकी सभामें उपस्थित हुए। सङ्कीर्ण-साम्प्रदायिकता और

सामाजिक भक्ति-विद्वेषवशतः कोई-कोई नामधारी ब्राह्मण श्रील हरिदास ठाकु
करते थे, किन्तु अब उनकी अद्भुत अलौकिक शक्तिकी बात सुनकर सभी मर्यादासम्पन्न ब्राह्मणोंने उन्हें शुद्धभक्तके रूपमें स्वीकार किया तथा उनका दर्शन करते ही सभी बहुत आनन्दित होकर जोर-जोरसे हरिनामकीर्त्तन करने लगे। हरिकीर्त्तन सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
लगे। उनके शरीरमें अश्रु, पुलक, हास्य, मूर्च्छा और हुँकार आदि अष्टसात्विकभाव दिखायी देने लगे। प्रेमरसमें निमग्न होकर श्रील हरिदास ठाकु
जिसे देखकर ब्राह्मण अत्यधिक आनन्दित होने लगे। कु
क्षण पश्चात् श्रील हरिदास ठाकु
सभी ब्राह्मण भी उन्हें चारों ओरसे घेरकर बैठ गये।

श्रील हरिदास ठाकु

द्वारा दिये गये भगवत्-निन्दाके श्रवणके फलके रूपमें स्वीकार करना

श्रील हरिदास ठाकु
सामान्य बद्धजीव मानकर दीनतापूर्वक कहने लगे—"हे ब्राह्मणगण! मुझे दण्ड मिला, उसके लिए आप दुःखी मत होना। वास्तवमें यह दण्ड मुझे मेरे अपराधके कारण ही मिला। मैंने जो भगवान्‌की निन्दा सुनकर भयङ्कर अपराध किया था, भगवान्‌ने मुझे उसीका ही फल दिया है। यह तो भगवान्‌की विशेष कृपा है कि उन्होंने मुझे थोड़ा दण्ड देकर ही क्षमा कर दिया, नहीं तो भगवान्‌की निन्दा सुननेका फल तो कु
दण्ड दिया है, ताकि मैं पुनः ऐसा कार्य कभी भी न करूँ।"

श्रील हरिदास ठाकु
यथार्थ अर्थ बतलाते हुए ॐ विष्णुपाद श्रील भक्तिसिद्धान्त

सरस्वती गोस्वामी 'प्रभुपाद' ने स्वरचित (चै॰ भा॰ आ॰ १६/२६६ के) गौड़ीय-भाष्यमें लिखा है—"(श्रील हरिदास ठाकु

प्राचीन कर्मोंके दोषके कारण ही भगवत्-विमुखताके दण्डस्वरूप भगवत्-विरोधमयी बातें सुननी पड़ी थीं। मैंने सहिष्णुता धर्मका पालन करते हुए भगवत्-विद्वेषी व्यक्तियोंकी कर्कश वाणीको श्रवण करके उसका यथोचित प्रतिकार नहीं किया था, इसीलिए भगवान्‌ने मेरे प्रति इस प्रकारके दण्डका विधान किया है।

भक्त तथा भगवान्‌की निन्दाको श्रवण करके कु कहना, सहिष्णुता नहीं कपटता

"जो भक्त तथा भगवान्‌के प्रति विद्वेषपूर्ण बातें श्रवण करके भी अपने आपको सहिष्णु दिखानेके लिए उनका प्रतिकार करनेके लिए प्रयत्न नहीं करता, उनके लिए भगवान् कठोर दण्डका विधान करते हैं। प्राकृत-सहजिया सम्प्रदाय हरि-गुरु-वैष्णवोंकी निन्दा श्रवण करके भी अपनी घृणित जघन्य कपटताको 'वैष्णवाचार' प्रतिपादित करनेका जो प्रयास करता है, उससे उनके लिए भीषण दुर्दशा प्राप्त करना अवश्यम्भावी है।

"ठाकु

आदर्श थे, किन्तु कपटी प्राकृत-सहजिया-सम्प्रदाय ठाकु

हरिदासके सहिष्णुता-धर्मका कृत्रिम अनुकरण करता है, जिससे उन्हें अनेक प्रकारके क्लेशोंकी प्राप्ति होती है।

"महाभागवत परमहंस-वैष्णव स्वयं निन्दादिशून्य हृदयवाले होते हैं, दूसरोंके द्वारा किये जानेवाले निन्दा-प्रशंसा-प्रजल्प-चर्चा आदिके विषयमें उनका तनिक भी ध्यान नहीं रहता, किन्तु प्राकृत-सहजिया वैसी उच्च अवस्थाको प्राप्त न कर पानेपर भी जब महाभागवत-वैष्णवोंका अनुकरण करनेकी चेष्टा

करते हैं, तब उनके द्वारा किया गया वैसा आचरण घृणित कपट आचरण ही कहलाता है। इसलिए उन्हें अवश्य ही दुःखभोग करना पड़ता है। यह बात कपटी प्राकृत-सहजियोंको समझानेके लिए ही श्रील हरिदास ठाकु
द्वारा भोगे जानेवाले कर्मफलकी बात उठायी। प्राकृत-सहजिया कर्मफलके अधीन हैं, किन्तु हरिनामका उच्चारण करनेवाले मुक्तकु
नहीं है। श्रील रूप गोस्वामीपादने भी अपने नामाष्टकके चतुर्थ श्लोकमें ऐसा ही कहा है—

"यद्ब्रह्मसाक्षात् कृतिनिष्ठयापि विनाशमायाति बिना न भोगैः।
अपैति नाम स्फु

"अर्थात् ब्रह्मकी साक्षात्कार-निष्ठा द्वारा भी बिना भोगे प्रारब्धकर्म कभी भी नष्ट नहीं होते; किन्तु हे नाथ! जिह्वाके अग्रभागमें आपके श्रीनामकी स्फूर्तिमात्र (नामाभास) से ही वह प्रारब्धकर्म समूल नष्ट हो जाते हैं—वेद भी इसी बातका कीर्त्तन करते हैं।

विष्णु तथा वैष्णवोंकी निन्दा श्रवण करना महापराध

"विष्णु और वैष्णवोंकी निन्दा श्रवण करके जो मूढ़मति 'तरोरपि सहिष्णु' श्लोकके वास्तविक तात्पर्यके विरुद्ध कृत्रिम मृदुता अथवा सहिष्णुताका भान करके अपने आपको उन्नत तथा उदार-चरित्र दिखाकर 'बहादुरी' प्रदर्शित करते है, वास्तवमें वे उनके महापराधका फल है, ऐसा जानना चाहिये। अपनी जड़ प्रतिष्ठाके संग्रहरूपी इन्द्रिय तर्पणमयी चेष्टाको हरिभजन नहीं समझना चाहिये। इसलिए जगद्गुरु ठाकु
हरिदासने कपट-दैन्यका अभिनय करनेवाले मूर्ख प्राकृत-सहजियोंके महादोषको लक्ष्य करके जगत्में लोकशिक्षाके निमित्त दैन्यपूर्वक कहा—'हरि-गुरु-वैष्णवोंकी निन्दाको श्रवण करनेवाले महापराधी मैंने जब भगवत्-निन्दाको श्रवण करके उसका कोई विरोध

नहीं किया, तब यदि हरि–गुरु–वैष्णव मेरे प्रति और भी अधिक दण्डका विधान करते, तभी ठीक होता। किन्तु भगवान् परम दयालु हैं, मेरे प्रति प्रहरियोंके अमानुषिक अत्याचार रूपी बहुत कम दण्डका विधान करके उन्होंने मुझे उस विष्णु–वैष्णव निन्दासे उत्पन्न अपराधसे मुक्त करके अत्यधिक अमन्दोदय दयाका ही परिचय प्रदान किया है तथा उसीमें ही मुझे अत्यधिक सुख तथा सन्तोषकी प्राप्ति हुई है। श्रीमद्भागवत (१०/१४/८) में वर्णित 'तत्तेनुकम्पा' श्लोकके अर्थ और तात्पर्यको विकृत करके मैंने जो प्रतिकार नहीं किया, वही मेरे लिए महादोष बन गया।'

"शास्त्रोंमें लिखा है कि भगवान्की निन्दा श्रवण करके जो पाषण्डी उसका विरोध नहीं करता, उसे मरनेके बाद महायन्त्रणामय कु

"अनुकरण करनेवाले प्राकृत–सहजिया–सम्प्रदायको लक्ष्य करके उन्हें शिक्षा देनेके उद्देश्यसे ही श्रील हरिदास ठाकु कह रहे हैं—'अब मैं भविष्यमें कभी भी 'तृणादपि सुनीचता' के आवरणमें और 'तरोरपि सहिष्णुता' की छलनामें स्वयं वैष्णवाभिमानी होकर विष्णु–वैष्णव निन्दाको श्रवण नहीं करूँगा। इस बार मुझे यथेष्ट शिक्षा मिली है। भगवान् परम दयालु हैं, मुझे मेरे द्वारा किये गये बहुत बड़े अपराधकी बहुत कम सजा देकर उन्होंने मुझे शिक्षा दी है।' नामापराधी प्राकृत सहजिया–सम्प्रदाय दुर्दैववशतः ठाकु
द्वारा कही गयी इन सब बातोंका वास्तविक तात्पर्य अथवा सारमर्म नहीं समझ सकता।

"वैष्णवोंसे विद्वेष करनेसे अत्याचारियोंकी जो दुर्दशा होती है, पापी–पाषण्डी यवनोंकी भी थोड़े ही दिनोंमें वही अवस्था हुई। स्कन्दपुराणके—'हन्ति निन्दति वै द्वेष्टि वैष्णवान्नाभिनन्दति। क्रु
हिंसा करते हैं, निन्दा करते हैं, द्वेष करते हैं, वैष्णवोंके

दर्शनकर प्रणाम नहीं करते, वैष्णवोंके प्रति क्रोध प्रकाश करते हैं तथा वैष्णवोंके दर्शनसे आनन्दित नहीं होते—ये छह प्रकारके लोग अधःपतित हो जाते हैं]—इस अव्यर्थ शास्त्र-शासनके अनुसार कु

करनेवाले) यवन बसन्त और विसूचिका आदि महाव्याधियोंसे ग्रस्त होकर सवंश नष्ट हो गये।"

अष्टम अध्याय

अजातशत्रु श्रील हरिदास ठाकु

(विषधर सर्पका उपाख्यान)

श्रील हरिदास ठाकु

निरन्तर श्रीकृष्ण स्मरण

श्रील हरिदास ठाकु
बैठकर एकान्तमें दिन–रात कृष्णका स्मरण करते हुए तीन लाख नाम जप करते थे। जगद्गुरु वैष्णवाचार्य–मुक्तकु
शिरोमणि ठाकु
रूप, गुण, परिकर–वैशिष्ट्य और लीलाकी अभेद बुद्धिसे स्वयं कृष्णनामके कीर्त्तन–श्रवण द्वारा श्रीकृष्णलीलाको स्मरण करनेकी लोक शिक्षा प्रदान की है। जो निरपराध रूपमें श्रीनामके श्रवण और उच्च कीर्त्तनको त्यागकर जड़ेन्द्रिय–तर्पणके उद्देश्यसे संसार–वासनासे ग्रस्त अपने अशुद्ध भोगमय चित्तसे लीला–स्मरणका कृत्रिम अनुकरण प्रदर्शित करते हैं, उनकी ऐसी लीला–स्मरणकी अनुकरणमयी चेष्टा भगवत्–सेवासे विमुख होनेके कारण विषय भोग–पिपासा मात्र है।

शुद्ध नामके प्रभावसे श्रील हरिदास ठाकु
कु

श्रील हरिदास ठाकु
वैकु
ठाकु
श्रीहरिनामकी कीर्त्तन द्वारा आराधना करने लगे, वह "जे–दिन गृहे भजन देखि, गृहेते गोलोक भाय"—इस महाजन–लिखित

वचनके अप्राकृत तात्पर्यके विचारानुसार अप्राकृत नामस्वरूप नामी कृष्णके लीलास्थली शुद्धसत्त्वमय वैकु
प्रतीत होने लगी।

श्रील हरिदास ठाकु
विषसे होनेवाली जलनकी अनुभूति

उस गुफाके भीतर एक बहुत बड़ा और भयङ्कर नाग रहता था। उसके विषकी ज्वाला इतनी तीव्र थी कि वहाँपर श्रील हरिदास ठाकु
दर्शनके लिए आनेवाले लोगोंके शरीरमें ऐसी भयङ्कर जलन होने लगती थी, जिसे वह सहन नहीं कर पाते थे। यद्यपि वे लोग विषकी ज्वालाके कारण वहाँ अधिक देर तक बैठ नहीं पाते थे, परन्तु श्रील हरिदास ठाकु
भी अनुभव नहीं करते थे। सभी ब्राह्मण लोग मिलकर विचार करने लगे—"इस गुफामें आते ही ऐसी तीव्र जलन क्यों आरम्भ हो जाती है?" उसी गाँवमें कु
थे, जिन्हें विषकी जानकारी थी। जब उन्हें वहाँपर लाया गया, तो उन्होंने आते ही बता दिया कि "इस गुफाके भीतर एक महा विषधर सर्प रहता है। उसके विषसे ही यह तीव्र ज्वाला निकलती है।"

ब्राह्मणों द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
छोड़ने हेतु प्रार्थना

ऐसा सुनकर वे सभी लोग श्रील हरिदास ठाकु
लगे—"हरिदासजी! इस गुफाके भीतर महा-भयङ्कर विषधर सर्प रहता है। उसके विषकी ज्वाला हमसे सहन नहीं होती है। यह गुफा आपके रहने योग्य नहीं है, अतः आप किसी अन्य स्थान पर रहें तो अच्छा होगा, क्योंकि भयङ्कर विषधर सर्पके साथ एक ही स्थानपर रहना बहुत ही हानिकारक हो सकता है, वह कभी भी आपका अनिष्ट कर सकता है।"

द्वितीयाभिनिवेश-जनित भयसे रहित महाभागवत श्रील हरिदास ठाकु

एकान्तिक रूपमें नाममें निष्ठ महाभागवत श्रील हरिदास ठाकु
चाहते हुए कहने लगे—"मैं तो बहुत दिनोंसे इस गुफामें रह रहा हूँ, परन्तु आज तक मुझे ऐसा अनुभव नहीं हुआ कि यहाँपर शरीरमें जलन होती है। यद्यपि मुझे सर्पके विषकी ज्वालासे किसी प्रकारकी कोई असुविधा नहीं है, तथापि दुःखका विषय तो यही है कि आप सभी उस ज्वालाको सहन नहीं कर पाते हैं। अतएव यदि आपलोग चाहते हैं कि मैं यह स्थान त्याग दूँ, तो आप सभीके हित तथा सन्तोषके लिए ही मैं कह रहा हूँ कि यदि सचमुचमें इसके भीतर नाग महाशय निवास करते हैं और यदि वे कल तक यहाँसे न चले गये, तो मैं ही यह स्थान त्याग दूँगा। अतः आपलोग शान्त और निर्भीक होकर भगवान्‌का गुण-गान कीजिये।"[१] यह सुनकर सब लोग शान्त होकर एकाग्र मनसे श्रीकृष्णका गुण-गान करने लगे।

नाग द्वारा स्वेच्छापूर्वक गुफाका त्याग

श्रील हरिदास ठाकु
रखनेवाले उन सभी लोगोंके मनसे नागका भय सम्पूर्ण रूपसे दूर हो गया तथा वह श्रील हरिदास ठाकु

---

[१] श्रील प्रभुपाद स्वरचित (चै० भा० आ० १६/१८६-१८८ के) गौड़ीय-भाष्यमें लिखते हैं—"श्रील हरिदास ठाकु
राजर्षियों, महर्षियों, देवर्षियों तथा ब्रह्मर्षियोंके प्रति कहे गये श्रील परीक्षित् महाराजके निम्नलिखित वचन स्मरण हो आते हैं—'द्विजमुनिके पुत्र शृङ्गिके द्वारा प्रेरित तक्षक आकर मुझे दंशन करे, कोई हानि नहीं, किन्तु आप सभी कृष्णेतर अन्य समस्त प्रजल्पमयी कथाओंका परित्याग करके सर्वक्षण हरिकथाका गान करते रहिये।'"

निकलनेवाली मङ्गलमयी कृष्णकथाका अपने कानरूपी दोनोके द्वारा पान करते हुए अत्यधिक आनन्दमें निमग्न हो गये। उसी समय वहाँपर एक आश्चर्यजनक घटना घटी। श्रील हरिदास ठाकु
जाऊँगा', उस नागने स्वयं ही उस स्थानको त्यागनेका निश्चय कर लिया। सबके देखते-ही-देखते वह सर्प धीरे-धीरे अपने बिलसे बाहर निकला और गुफासे बाहरकी ओर चल पड़ा। वह बहुत ही अद्भुत और महा भयङ्कर सर्प था। उसके शरीरपर पीली, सफेद एवं नीली धारियाँ थी तथा उसके सिरपर एक महामणि जगमगा रही थी। उसे देखकर ही सभी लोग भयभीत होकर 'कृष्ण-कृष्ण' कहने लगे। सर्पके जाते ही गुफासे निकलनेवाली विष-ज्वाला भी समाप्त हो गयी।

श्रील हरिदास ठाकु

ब्राह्मणोंकी उनके प्रति अत्यधिक श्रद्धा

श्रील हरिदास ठाकु
अद्भुत प्रभावसे महाभयानक सर्पको बाहर जाते देखकर योग-विभूतिप्रिय कृष्णभक्ति-विमुख नास्तिक ब्राह्मणोंकी भी उनके प्रति श्रद्धा हो गयी। कर्मफल-बाध्य यमके दण्डके भागीदार शौक्र ब्राह्मण सोचते थे कि जिस प्रकार सामान्य जीव प्रारब्ध-पापोंके फलस्वरूप निम्न कु
करते हैं, उसी प्रकार श्रील हरिदास ठाकु
प्रारब्ध-पापोंके फलस्वरूप यवनकु
अतएव वे हम पुण्यवान ब्राह्मणोंसे निकृष्ट है। किन्तु आज श्रील हरिदास ठाकु
सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण मानने लगे।

महाभागवत श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
है कि उनके प्रभावसे विषधर सर्प गुफा छोड़कर चला गया। उनकी तो दृष्टिमात्रसे ही अविद्याका बन्धन खुल जाता है तथा भगवान् भी उनके वचनोंका कभी उल्लङ्घन नहीं करते।

वास्तवमें प्राणियोंको उद्वेग देनेवाले हरि–विमुख भोगासक्त परहिंसक व्यक्ति ही सर्पके दंशन द्वारा नाशको प्राप्त होते हैं, परन्तु ठाकु
असीम प्रभाव होता है कि वैसे भयानक विषधर सर्प भी उन्हें किसी प्रकारका भय अथवा उद्वेग प्रदान नहीं कर सकते, अपितु उनके सर्वजन हितकर आदेशका सदैव नतमस्तक होकर पालन करते हैं।

जिनके प्रति श्रील हरिदास ठाकु
निरपराध होकर शुद्ध नामके आश्रयमें अनुक्षण हरिसेवापरायण होते हैं, फलस्वरूप उनकी भोगबुद्धिकी मूल बीज स्वरूपिणी अविद्या जड़से नष्ट हो जाती है। श्रील हरिदास ठाकु
कृपा और उनकी सेवाके प्रभावसे भगवान् भी उनके वशीभूत हो जाते हैं।

नवम अध्याय

श्रील हरिदास ठाकुर

सपेरेमें अधिष्ठित नागराज वासुकीका उपाख्यान

एक दिन एक विशिष्ट व्यक्तिके घरमें एक सपेरा आया। सपेरेमें विष-दन्त-रहित सर्पके दंशनके साथ-साथ मन्त्रके प्रभावसे सर्पोंके अधिष्ठातृ देवता नागराज वासुकीका आवेश हो गया। मृदङ्ग तथा मँजीरेकी ध्वनिके साथ गाये जानेवाले गीत तथा सपेरेके द्वारा जपे जा रहे मन्त्रकी शक्तिके प्रभावको देखकर सभी मन्त्र-मुग्ध हो रहे थे।

दैवयोगसे श्रील हरिदास ठाकुरके द्वारा किये जा रहे नृत्यका दर्शन

दैवयोगसे श्रील हरिदास ठाकुर भी वहाँ उपस्थित हुए और एक ओर खड़े होकर उस दृश्यको देखने लगे। देखते-ही-देखते मन्त्रके प्रभावसे उस सपेरेके शरीरमें अधिष्ठित नागराज वासुकी (विष्णुभक्त शेष—अनन्त) स्वयं उसके माध्यमसे उद्दण्ड नृत्य करने लगे। कालियदहमें कालिय सर्पके ऊपर चढ़कर अखिल कलाओंके गुरु भगवान् श्रीकृष्णने जिस प्रकार ताण्डव नृत्य किया था, उसी प्रकारकी भाव-भङ्गीको अवलम्बन करके सपेरा भी नृत्य करने लगा तथा कालिय नागके प्रति श्रीकृष्णने दण्डके छलसे जो अत्यधिक दया की थी, उस लीलासे सम्बन्धित एक गीत गाने लगा।

श्रीकृष्णकृपाकी महिमाके श्रवणसे श्रील हरिदास ठाकु

सपेरेके मुखसे श्रीकृष्णकी करुणाको सूचित करनेवाले गीतको सुनकर एक ओर खड़े हुए श्रील हरिदास ठाकु
हो गये तथा उद्दीपनके कारण अन्तर्दशाको प्राप्त करके मूर्च्छित हो गये। और-तो-और उनकी देहमें बाह्य-ज्ञानके लक्षण श्वास-प्रश्वास तक भी लक्षित नहीं हो रहे थे। कु
क्षणके पश्चात् जब उन्हें होश आया, तो वे हुँकार करते हुए आनन्दपूर्वक नृत्य करने लगे। महाभागवत वैष्णव ठाकु
श्रीहरिदासको कृष्णप्रेमके आवेशमें नृत्य करते देखकर अनन्तदेव आविष्ट सपेरा सम्भ्रमपूर्वक थोड़ी दूरीपर खड़ा हो गया तथा श्रद्धापूर्वक श्रील हरिदास ठाकु

श्रीकृष्णप्रेमके आवेशमें श्रील हरिदास ठाकु देहमें अष्टसात्विक विकार

श्रीकृष्णके प्रेमावेशमें ठाकु
पुलकान्वित अप्राकृत देहमें तन्मय होकर खल-सर्पकु
उत्पन्न अत्यधिक क्रूर कालिय नागके प्रति श्रीकृष्णके अतुलनीय कारुण्य गुणको श्रवण और स्मरण करते-करते भूमिपर लोट-पोट खाने लगे तथा क्रन्दन करने लगे।

दर्शकोंके द्वारा अपनी-अपनी देहपर श्रील हरिदास ठाकु

प्रेमाविष्ट होकर श्रील हरिदास ठाकु
करते देख सपेरा और उसके साथी उस गानको पुनः-पुनः गाने लगे। कु
रहा, फिर वह सपेरा आकर नृत्य करने लगा। श्रील हरिदास ठाकु
सभी लोग बहुत आनन्दित हुए। जहाँ-जहाँपर श्रील हरिदास

ठाकु
उठा-उठाकर श्रद्धापूर्वक अपने शरीरपर मलने लगे।

श्रील हरिदास ठाकु

अधम विप्रका उपाख्यान

लोगोंको इस प्रकार श्रील हरिदास ठाकु
लेते देखकर एक दुर्बुद्धिपरायण ढोंगी ब्राह्मण महाभागवत वैष्णव ठाकु
समझकर उनका अनुकरण करनेकी इच्छा करने लगा।

अनुकरण करनेवालोंकी चित्तवृत्ति

उस अधम विप्रने मन-ही-मन ऐसा विचार किया—"साधारण मूर्ख लोग अन्ध-विश्वासके कारण किसीके सामान्य नृत्य-गीत आदिका दर्शन और श्रवण करके अनेक प्रकारसे श्रद्धा प्रदर्शित करते हुए उसको बहुत सम्मान देते हैं। अहिन्दु-कु
उत्पन्न सामान्य एक हरिदास ठाकु
ही जब लोग श्रद्धापूर्वक इतना अधिक सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान कर रहे हैं, तब यदि हिन्दु जातिके सर्वोच्च ब्राह्मणवर्णमें उत्पन्न मैं यदि रङ्ग-मञ्चके अभिनेता जैसे कपटतापूर्वक वैष्णव ठाकु
आदिका कृत्रिम भावसे अनुकरण करते हुए नृत्य करूँ, तो मेरे सम्मान, पूजा तथा प्रतिष्ठामें कितनी वृद्धि होगी, इसका अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता।"

ढोंगी द्वारा मूर्च्छित होनेका छल

इस प्रकार विचार करके वह पाषण्डी-धर्मध्वजी-प्राकृत सहजिया प्रतिष्ठा प्राप्तिकी आशासे काँपते-काँपते हठात् भूमिपर गिर पड़ा तथा मूर्च्छित होनेका ढोंग करने लगा।

सपेरे द्वारा आदर्श शिक्षाका प्रदर्शन

उस ढोंगीकी कपटताको समझ जानेके कारण सपेरा अत्यधिक क्रोधित होकर उसे बेंतसे जोर-जोरसे पीटने लगा। वह उस पाषण्डीके सिर, हाथ, पैर आदि सभी अङ्गोंपर निर्दयतापूर्वक बेंत द्वारा लगातार कठोर प्रहार करने लगा। कु
कि मारता ही जा रहा था। जब बेंतकी मार उस ढोंगीके लिए असहनीय हो गयी, तो वह 'बाप-रे, माँ-रे, मरा-रे' कहते हुए उठकर भाग गया।

निर्बोध व्यक्तियोंके मनका संशय

सपेरा पुनः बिना किसी बाधाके निश्चिन्त होकर सुखपूर्वक नृत्य करने लगा। किन्तु सभी दर्शकोंके मनमें बहुत आश्चर्य हुआ। हाथ जोड़कर उन सभीने सपेरेसे पूछा, 'हे सपेरे! जब हरिदास ठाकु
मूर्च्छित हो गये थे, तब तो तुम हाथ जोड़कर एक ओर खड़े हो गये थे, परन्तु जब वैसी अवस्था इस ब्राह्मणकी हुई, तब तुमने उसे निर्दयता पूर्वक पीटना क्यों आरम्भ कर दिया?"

सपेरेकी देहमें अधिष्ठित अनन्तदेवके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
तथा निष्कपट और ढोंगीके भेदका वर्णन

लोगोंकी बात सुनकर सपेरेकी देहमें अधिष्ठित अनन्तदेव सपेरेके मुखके माध्यमसे सभीको कहने लगे—"तुमलोगोंने जो प्रश्न किया है, उसका उत्तर अति रहस्यपूर्ण है। वह कहने योग्य न होनेपर भी मैं तुमलोगोंसे कह रहा हूँ। श्रील हरिदास ठाकु
श्रद्धापूर्वक उनकी चरणधूलि ली। यह देखकर वह ढोंगी

ब्राह्मण भी प्रतिष्ठाकी आशासे मूर्च्छित होनेका नाटक कर रहा था। श्रील हरिदास ठाकु
शुद्ध भगवद्भक्त हैं और यह अधम विप्र घृणित प्राकृत सहजिया है। निष्कपट शुद्धभक्तके साथ मिथ्या प्रतिद्वन्द्विता करनेकी अभिलाषासे ही इस कपटी प्राकृत-सहजियाने श्रील हरिदास ठाकु
प्राकृत सहजिया तत्त्व-विचारसे अनभिज्ञ मर्ख लोगोंसे सहज ही प्राप्त होनेवाली जड़प्रतिष्ठाकी अभिलाषासे कपटपूर्ण चेष्टाएँ दिखलाकर महाभागवत वैष्णव ठाकु
द्वेष आदिके कारण कृत्रिम रूपसे उनका अनुकरण कर रहा था, इसलिए मैंने उसे उसके किये का प्रचुर दण्ड प्रदान किया है।

"ऐसे अधम विप्र जैसे कपटी-पाषण्डी लोग अपनेको बहुत बड़ा भक्त कहलवानेकी अपनी अभिलाषाकी पूर्त्तिके लिए लोगोंकी वञ्चना करके कृत्रिम प्रतिबिम्ब भावाभास प्रदर्शित करते हैं। जो महाभागवत वैष्णवोंकी अलौकिक क्रिया-मुद्राका कृत्रिम रूपसे अनुकरण करके 'भक्त' के रूपमें जड़प्रतिष्ठा प्राप्त करनेकी इच्छा करते हैं, वास्तवमें भगवान्‌के श्रीचरणकमलोंके प्रति उनकी किसी भी प्रकारकी सेवा-प्रवृत्ति नहीं होती। वे अपनी जड़-इन्द्रियोंकी तृप्तिके लिए ही कृष्णभक्त सजकर लोगोंको ठगते हैं। जहाँपर इस प्रकारके धर्मध्वजी, बकधर्मी नहीं हैं, वहींपर अकैतव कृष्णभक्ति है तथा जहाँपर यह सब दोष विद्यमान हैं, वहींपर दम्भ, कैतव और कृष्णसेवाके अतिरिक्त अन्यान्य उद्देश्य लक्षित होते हैं।

भक्तराज श्रील हरिदास ठाकु
अनर्थ-निवृत्ति और ढोंगीके नृत्यके दर्शनसे अनर्थ-वृद्धि

"सेवोन्मुख वैष्णवोंके कृष्णप्रेममय नृत्यके दर्शनसे दर्शकोंका भवबन्धन नष्ट होता है और प्राकृत-सहजियाकी कृत्रिम

क्रिया-मुद्राके दर्शनसे दर्शकोंके भवबन्धनका क्लेश और अधिक वर्धित होता है। वैष्णवोंके कृष्णेन्द्रिय प्रीति वाञ्छामय नृत्यके दर्शनसे वैष्णवोचित निष्कपट भावका ही उदय होता है तथा अनुकरण करनेवाले भण्ड (ढोंगी) की घृणित चेष्टा जगत्में कु

अप्राकृत नृत्य-लीला प्रदर्शित करते हैं, तब उनके निष्कपट-प्रेमके वशीभूत होकर उनके साथ श्रीकृष्ण सपरिकर नृत्य करते हैं। जगत्के सौभाग्यशाली जीव उस अप्राकृत-नृत्यके दर्शनसे बहुत जन्मोंके सञ्चित पापोंसे मुक्त होकर भक्ति उन्मुखी सुकृति प्राप्त करके शुद्ध होते हैं। ऐसे नृत्यसे ब्रह्माण्ड भी पवित्र हो जाता हैं।

नागराजके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
वास्तविक स्वरूपका उद्घाटन

"सत्य ही वे श्रीहरिके दास हैं, इसलिए उनका नाम श्रील हरिदास है। सदैव श्रीकृष्णचन्द्र उनके हृदयमें निवास करते हैं श्रील हरिदास ठाकु

तथा स्थावर और जङ्गम—सभीके उपकारी हैं। भगवान् जब-जब इस प्रपञ्चमें अवतरित होते हैं, तब-तब श्रील हरिदास ठाकु

भगवान्के नित्य परिकर हैं। साक्षात् भगवत्-पार्षद होनेके कारण श्रील हरिदास ठाकु

कोई अपराध नहीं किया। साधारण प्राकृत-मनुष्योंकी भाँति उनकी कृष्णसेवनमयी चेष्टा किसी भी अवस्थामें यहाँ तक कि स्वप्नमें भी विपथकी ओर नहीं जाती।

"तिलार्द्ध उँहान सङ्ग जे जीवेर हय।
से अवश्य पाय कृष्णपादपद्माश्रय॥

(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२३५)

"क्षणमात्रसे भी कम समयके लिए यदि किसी जीवको जन्म-जन्मान्तरोंके पुञ्ज-पुञ्ज महासौभाग्यके फलसे श्रील हरिदास ठाकु
भगवान्के चरणकमलोंकी प्राप्ति होती है।

"ब्रह्मा-शिवओ हरिदास-हेन भक्त-सङ्ग।
निरवधि करिते चित्तेर बड़ रङ्ग॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२३६)

"श्रील हरिदास ठाकु
प्राप्त करके धन्य होनेके लिए ब्रह्मा और शिव आदि देवता भी सदैव लालायित रहते हैं।

"जाति, कु
जन्मिलेन नीचकु
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२३७)

"प्राकृत सत्-असत् कर्मोंके फलसे बद्धजीव उच्च-नीच योनियोंमें जन्म ग्रहण करते हैं। उच्च अथवा नीच कु
जन्म ग्रहण करना केवल जीवोंके कर्मफल भोगका निदर्शनमात्र है। पारमार्थिक विचारसे जाति अथवा प्राकृत वंश, मर्यादाका कोई मूल्य नहीं है—इस परम सत्यको जगत्में सभीको अवगत करानेके लिए ही मङ्गलमय भगवान्की मङ्गल इच्छासे श्रील हरिदास ठाकु

"अधम-कु
तथापि से-ई से पूज्य—सर्वशास्त्रे कय॥

"अर्थात् अधम कु
भगवान् विष्णुका भजन करता है, तो वह पूज्य है—सभी सात्त्वत-शास्त्रोंका ऐसा ही कहना है।

"उत्तम-कु
कु

"अर्थात् सत्-कर्म करनेके फलस्वरूप उत्तम कु
ग्रहण करनेपर भी श्रीकृष्णका भजन नहीं करनेवालेके लिए नरककी प्राप्ति होना अवश्यम्भावी है। उसका उच्च कु
नरक जानेसे नहीं बचा सकता।

"ऐई सब वेद-वाक्येर साक्षी देखाइते।
जन्मिलेन हरिदास अधम-कु

"अर्थात् उपरोक्त वेद-वाक्योंकी सत्यताको प्रदर्शित करनेके लिए ही श्रील हरिदास ठाकु
किया।

"प्रह्लाद जेहेन दैत्य, कपि हनुमान।
ऐईमत हरिदास नीच-जाति नाम॥

हरिदासेर-स्पर्श वाञ्छा करे देवगण।
गङ्गा ओ वाञ्छेन हरिदासेर मज्जन॥

(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२४१-२४२)

"जिस प्रकार विष्णु-विद्वेषी दैत्यकु
पशुकु
निम्न यवनकु
थे। साधारणतः मनुष्य देवताओंका स्पर्श करके तथा गङ्गामें स्नानकर पवित्र होनेकी इच्छा करते हैं। किन्तु ब्रह्मा आदि देवता, यहाँ तक कि भगवान् विष्णुके चरणकमलोंसे निकली परम पवित्र भगवती गङ्गा भी महाभागवत-परमहंस-वैष्णवाचार्य-सर्वदेवमय श्रील हरिदास ठाकु
इच्छा करती हैं।

"स्पर्शेर कि दाय, देखिलेई हरिदास।
छिण्डे सर्वजीवेर अनादि कर्मपाश॥

(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२४३)

“श्रील हरिदास ठाकु
दर्शन करनेसे ही जीवोंकी अनादि अविद्याका बन्धन तत्क्षणात् खुल जाता है।

“हरिदास आश्रय करिबे जेई जन।
ताने देखिले ओ खण्डे संसार–बन्धन॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२४४)

“नामाचार्य श्रील हरिदासके प्रति जो अप्राकृत गुरुबुद्धि रख कर उनका आश्रय ग्रहण करते हैं, श्रील ठाकु हरिदासके वैसे भक्तोंको देखनेसे भी बद्धजीवोंका संसार–बन्धन खुल जाता है।

श्रील हरिदास ठाकु

वर्णन तथा नागराज आविष्ट सपेरेकी दैन्योक्ति

“तुम लोग बहुत ही सौभाग्यशाली हो, तुम्हारे द्वारा की गयी जिज्ञासाके फलस्वरूप ही आज मेरे मुखसे भगवद्भक्तका किञ्चित गुणगान कीर्त्तित और प्रकाशित हुआ है। यदि मैं सैकड़ों वर्षों तक सैकड़ों मुखोंसे ठाकु
गुणोंका गान करूँ, तब भी उनके गुणोंका अन्त नहीं पा पाऊँगा।

“मैं सत्य कह रहा हूँ कि यदि एक बार भी कोई वैष्णव ठाकु
अवश्य ही श्रीकृष्णके धामकी प्राप्ति होगी।”

ऐसा कहकर नागराज मौन हो गये। श्रील हरिदास ठाकु
हुए।

दशम अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

विषयी व्यक्तियोंमें सदैव हरि-विस्मृति वर्त्तमान रहती है। वे किसी-न-किसी उपायसे हरि-स्मरणमयी भक्तिसे बहुत दूर रहकर अपने इन्द्रिय-भोगोंमें प्रमत रहते हैं। श्रील हरिदास ठाकु
तृप्तिमें अत्यधिक प्रमत्त होनेके कारण सम्पूर्ण रूपसे विष्णुभक्ति-शून्य हो गये थे। यद्यपि शास्त्रोंमें नामकी अपार महिमाका गान किया गया है, परन्तु नास्तिक लोग शास्त्रोंका अध्ययन ही नहीं करते थे। श्रील हरिदास ठाकु
हरिनाम-सङ्कीर्त्तन कर रहे हैं तथा उनका क्या महान अभिप्राय है—इसे उस समय कोई भी नहीं समझ पाया, क्योंकि श्रीगौरसुन्दरने भी तब तक जगत्में कृष्णनाम-प्रेमरूपी भक्तिका प्रचार करना आरम्भ नहीं किया था।

लोगोंकी दुर्दशाका मुख्य कारण—जगद्बन्धु वैष्णवोंके प्रति अवज्ञा, विरोध तथा विद्वेष

हरिकथा-कीर्त्तनके अभावसे लोग विष्णुभक्तिशून्य हो गये थे, अतएव वैष्णवोंकी सर्वोच्च पदवीको नहीं समझ पानेके कारण ही वे वैष्णवोंके प्रति विद्वेष करते थे तथा उनकी अवज्ञा और उनका उपहास करते थे।

सभी सज्जन भक्तलोग दुःसङ्गको त्यागकर एकसाथ मिलकर निर्जन स्थानमें हरिनाम-सङ्कीर्त्तन करते थे, किन्तु भगवद्भक्तिके लेशसे भी रहित नास्तिक पाषण्ड़ियोंको यह भी सहन नहीं होता था, वे अत्यधिक क्रोधपूर्वक उन वैष्णवोंको

लक्ष्य करके उनपर व्यङ्ग करते हुए कहने लगते—“उदरभरण और जीविका अर्जन करनेके लिए ही अनेक प्रकारके छल करके उच्च-हरिनाम-कीर्त्तन करनेवाले इन सभी ब्राह्मणोंने भावुकोंके आसनको ग्रहण कर लिया है। अरे भाइयो! ये सब ढोंगी उच्चस्वरसे चिल्ला-चिल्लाकर जिस प्रकारसे भगवान्‌के नामका कीर्त्तन कर रहे हैं, यह शास्त्र विरुद्ध है। धर्मानुष्ठानकी आड़में अपने-अपने पेटको भरनेके अतिरिक्त इनका और कोई उद्देश्य नहीं है। इनके ऐसे अनुष्ठानके फलस्वरूप हमारे देशमें बहुत भयङ्कर अकाल पड़ जायेगा, अतएव भिक्षा-वृत्तिका प्रचलन करके ये लोग जगत्‌का अकल्याण ही करेंगे।”

कोई स्मार्त्त पाषण्डी कहता, “अभी चातुर्मास्यका समय है। भगवान् अभी चार महीनेके लिए सो रहे हैं। परन्तु ये ढोंगी लोग चिल्ला-चिल्लाकर उनका नाम ले रहे हैं। क्या यह उचित है? इनके चिल्लानेसे यदि भगवान्‌के विश्राममें बाधा पहुँची, तो वे बहुत क्रोधित हो जायेंगे। उनके क्रोधसे अवश्य ही अकाल पड़ जायेगा, इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है।” यह सुनकर कु

“यदि कभी अन्नका अभाव हुआ, या खाने-पीनेकी वस्तुओंका मूल्य बढ़ गया, तो हम इन्हें पकड़-पकड़कर पीटेंगे।” एक व्यक्ति जिसे एकादशीका कु

शास्त्रोंमें ऐसा कहा गया है कि एकादशीके दिन रातभर जागरण करना चाहिये तथा भगवान्‌का कीर्त्तन करना चाहिये। परन्तु एकादशीके अतिरिक्त दूसरे दिनोंमें इस प्रकार जोर-जोरसे कीर्त्तन करनेका क्या अर्थ है?” ऐसी दुष्प्रवृत्तिके लोग सोचते थे कि सब समय भगवान्‌को उच्चस्वरसे बार-बार पुकारनेका कोई फल नहीं है। जीव जब अपने किये गये कर्मोंके द्वारा आबद्ध है तथा ईश्वर भी जब कर्मोंके अधीन है, तब कर्मफल बाध्य जीव ईश्वरको पुकारकर केवल अपने पित्तकी ही वृद्धि करता है।

अभक्त और भक्तके मध्यवर्ती मीमांसक समाज इस प्रकारके अनेक प्रजल्प और विचार करता। इस प्रकारकी कई बातें जब वैष्णवोंके कानोंमें पहुँचतीं, तो वे बहुत ही दुःखी होते, परन्तु उन्होंने हरिसङ्कीर्त्तन करना बन्द नहीं किया। अन्याभिलाष, कर्म, योग और ज्ञान आदि चेष्टाओंकी आढ़में छिपी हुई भगवत्-सेवाकी छलना अथवा भगवत्-प्रतिकूल आचरणको कभी भी भक्ति नहीं कहा जा सकता। किन्तु ऐसे अभक्तिके विचारोंमे ही उस समयके लोगोंकी बहुत रुचि थी। देह और मनके धर्मने बद्धजीवोंको भक्तिपथसे विमुख करके उनके समक्ष विमल-भक्तिकी ज्वलन्त महिमाको अज्ञात कर दिया था।

वैष्णवोंकी प्रत्येक क्रिया—जगत्-वासियोंके परम मङ्गलका कारण

वास्तवमें भगवद्भक्तोंके प्रति ऐसा मिथ्या दोषारोपण करना कभी भी जीवके लिए मङ्गलप्रद नहीं है, बल्कि नरकका पथ दिखानेवाला है। भक्तलोग कीर्त्तनके माध्यमसे भगवान्की सर्वोत्तम सेवा करते हैं। वे अलास्यके कारण साधारण व्यक्तियोंके द्वारा उपार्जित धनके प्रति लोभके वशवर्ती होकर उसका कोई भी अंश ग्रहण अथवा भोग नहीं करते, बल्कि वे तो जनसाधारण द्वारा इन्द्रियोंकी तृप्तिके लिए सञ्चित द्रव्य आदिको हरिसेवाके कार्यमें नियुक्त करके उनका नित्य उपकार ही करते हैं।

विष्णुभक्ति विमुख लोगोंकी दुर्दशा देखकर श्रील हरिदास ठाकु

इस प्रकार सम्पूर्ण जगत्को भगवान् एवं भक्तिसे विमुख देखकर परम दयालु श्रील हरिदास ठाकु
दुःखित था। फिर भी वे निर्भीक होकर सर्वदा और सर्वत्र उच्चस्वरसे हरिनामका कीर्त्तन करते थे।

श्रील हरिदास ठाकु
कीर्त्तनकी ध्वनिको अनेक लोग अपनी–अपनी पाप–प्रवृत्तिके कारण सुननेकी अभिलाषा नहीं करते थे। भाग्यहीन व्यक्तिकी ही इस प्रकारकी दुष्प्रवृत्ति और अमङ्गल प्राप्तिकी इच्छा उत्पन्न होती है। यद्यपि प्रायः सम्पूर्ण समाज ही भक्तिके प्रतिकूल था, तब भी श्रील हरिदास ठाकु
श्रीकृष्णके निष्कपट–सेवक होनेके कारण द्वितीय अभिनिवेशसे उत्पन्न भयके लेशसे भी रहित थे। वे पापिष्ठ लोगोंसे अनेक प्रकारके विघ्न और बाधाओंको पाकर भी हरिसङ्कीर्त्तनसे कभी विमुख नहीं हुए।

एकादश अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु
माहात्म्यका वर्णन

वर्णके विचारसे जगत्‌में दो प्रकारकी प्रथाएँ

वर्णके विचारसे जगत्‌में दो प्रकारकी प्रथाएँ देखी जाती हैं—(१) शौक्र-विचार अर्थात् पितृपुरुषसे पुत्र आदि अधस्तन—इसमें साधारण विधि द्वारा वंशानुसार अपने-अपने पितृवर्णका परिचय प्राप्त किया जाता है। जैसे ब्राह्मणका पुत्र ब्राह्मण तथा वैश्यका पुत्र वैश्य। (२) व्यक्तिगत गुण और कर्मके विचारसे ही वर्णका निर्णय। जैसे रावणके ब्राह्मण कु उत्पन्न होनेपर भी उसके गुण और कर्मोंके अनुसार उसे असुर कहा जाता है, न कि ब्राह्मण।

सज्जन और दुर्जनकी परिभाषा

सज्जन और दुर्जनके भेदसे मनुष्योंका स्वभाव दो प्रकारका होता है। भगवान्‌की सेवामें नियुक्त वैष्णव ही सज्जन हैं तथा भगवान्‌की सेवासे विमुख दाम्भिक व्यक्ति ही पूर्व पुरुषोंके वंश-परिचयसे परिचित होनेपर भी सद्‌गुणोंसे रहित होनेपर 'दुर्जन' कहलाते हैं। यदि कोई ब्राह्मण कु भी दुष्कृतिके कारण सज्जनोंके प्रति हिंसा करता है, तो उसे भी 'दुर्जन' ही कहा जाता है। जो विष्णु, विष्णुभक्ति तथा विष्णुभक्तोंके प्रति विद्वेष करता है, वह मूर्ख दुर्जन समाजमें 'ब्राह्मण' कहलानेपर भी अपनी असुर प्रवृत्तिके कारण सज्जन समाजमें 'दुर्जन' ही कहलाता है।

दुर्जन नामापराधी नास्तिक विप्रका उपाख्यान

यशोहर जिलेके हरिनदी गाँवमें 'दुर्जन' कहलाने योग्य एक दुष्ट ब्राह्मण रहता था। एक दिन जब वह कु
साथ बैठा हुआ था, तब दैववश श्रील हरिदास ठाकु
सामनेसे निकले। भक्त-विद्वेषी उस दुष्टकी दृष्टि जैसे ही निरन्तर उच्चस्वरसे कृष्णनामका कीर्त्तन करनेवाले भगवान्के परमप्रिय भक्त श्रील हरिदास ठाकु
जलने लगा।

विप्र द्वारा उच्च हरिनाम-सङ्कीर्त्तनका विरोध

मूर्ख अनभिज्ञ पाषण्डी ब्राह्मणाधम श्रील हरिदास ठाकु
रोककर क्रोधपूर्वक कु
हरिदास! तूने यह सब क्या आरम्भ कर रखा है? क्या तुझे पता नहीं कि शास्त्रोंमें वर्णन है कि भगवान्के पवित्र नामको मन-ही-मन जपना चाहिये? किसी भी शास्त्रमें उच्चस्वरसे हरिनाम-सङ्कीर्त्तन करनेके लिए नहीं कहा गया है। अतः तुम्हारे द्वारा किया जानेवाला अनुष्ठान अवैध है। तुझे इस प्रकार जोरसे नाम करनेकी दुर्बुद्धि किसने दी? यहाँपर बड़े-बड़े पण्डित लोग हैं, इन सबके सामने तुम मुझे मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो।"

श्रील हरिदास ठाकु
मानद-धर्म और दैन्योक्ति

यह सुनकर महाभागवत श्रील हरिदास ठाकु
अमानी और मानद होकर दीनता और नम्रतापूर्वक कहने लगे—"नामकी महिमा तो आप जैसे परम पण्डित लोग ही जानते हैं, मुझे इसका तनिक भी ज्ञान नहीं है। फिर भी, एक बात यह है कि मैंने श्रीहरिनाम-कीर्त्तनके अतुलनीय माहात्म्यको स्वयं शास्त्रोंमेंसे तर्क-पन्था द्वारा नहीं सीखा है,

नामतत्त्वको जाननेवाले, शुद्धनामका उच्चारण करनेवाले भक्तोंके मुखसे ही सुना है।

उच्च हरिनाम-सङ्कीर्त्तनका श्रेष्ठत्व

श्रील हरिदास ठाकु
हूँ, आपलोगोंके समक्ष उसे कह रहा हूँ। उच्चस्वरसे हरिनाम करनेका फल मन-ही-मन हरिनाम करनेकी अपेक्षा सौगुणा अधिक है। अतः शास्त्रोंमें उच्चस्वरसे नाम करनेको दोष नहीं, बल्कि महान गुण बतलाया गया है। उच्चैः शतगुणं भवेत् अर्थात् उच्चस्वरसे नामका फल सौगुणा अधिक है।"
श्रील हरिदास ठाकु
लिखते हुए परमाराध्यतम श्रील प्रभुपाद स्वरचित (चै॰ भा॰ आ॰ १६/२७३ के) गौड़ीय-भाष्यमें लिखते हैं—"जो लोग महामन्त्र हरिनामको केवलमात्र 'जप्य' कहते हैं, वे शास्त्रोंके वास्तविक मर्मको धारण करनेमें असमर्थ है। 'हरे' 'कृष्ण' और 'राम'—ये तीन सम्बोधनात्मक पद 'जप्य' भी हैं और 'कीर्त्तनीय' भी हैं। भगवान्‌का नाम मन-मनमें भी किया जा सकता है तथा उच्चस्वरसे भी किया जा सकता है। उच्चस्वरसे कीर्त्तन करनेपर बहुत-से व्यक्ति भगवान्‌के नामको श्रवण कर सकते हैं। इसके द्वारा सभीका मङ्गल होता है। नाम श्रवण करना नवधाभक्तिका एक प्रधान अङ्ग है। साधुओंके उच्चस्वरसे हरिकीर्त्तन नहीं करनेपर किसीका भी श्रवण नामक भक्तिमें अधिकार नहीं हो सकता। इसलिए उच्च कीर्त्तन विरोधियोंका यह असत् कु

सत्य, त्रेता और द्वापर युगोंमें क्रमशः ध्यान, यज्ञ और अर्चनका अनुष्ठान करनेवालोंसे हरिनाम उच्चारण करनेवालोंको वैशिष्ट्य

"ध्यान, यज्ञ और अर्चन करनेमें श्रीनामका कीर्त्तन प्रायः अव्यक्त हैं, इसलिए कलियुगमें ध्यान, यज्ञ और अर्चनकी

विधियोंमें अनेक प्रकारके विवाद उपस्थित होते हैं। कलिहत जनगण जब पारमार्थिक व्यक्तियोंके हरिभजनमें बाधा देनेके लिए अग्रसर होते हैं, तब सत्य, त्रेता और द्वापरके अभिधेय ध्यान, यज्ञ और अर्चनका अनुष्ठान करनेवाले वे सज्जन व्यक्ति उनके साथ कु
उच्चारण करनेवाले व्यक्ति कलिहत जनगणकी कु
दूर करके उनके नित्यमङ्गलके उद्देश्यसे श्रीनामकी अनन्त महिमाका कीर्त्तन करते हैं। उसीसे ही कु
ग्रस्त चित्तवृत्तिको उपयुक्त औषधकी प्राप्ति होती है।"

विप्रके द्वारा उच्च हरिनाम-सङ्कीर्त्तनके अधिक फलके कारणकी जिज्ञासा

श्रील हरिदास ठाकु
बिगड़कर बोला—"तू कह रहा है कि उच्चस्वरसे नाम करनेका फल सौगुणा अधिक है। तो अब यह बता कि इसका कारण क्या है?"

श्रील हरिदास ठाकु
महिमाकी व्याख्या

सर्वशास्त्रोंमें निष्णात श्रील हरिदास ठाकु
शास्त्रोंकी अनेकानेक वाणियाँ स्फु
अत्यधिक आनन्दपूर्वक उच्चस्वरसे नामसङ्कीर्त्तन करनेकी महिमाकी व्याख्या करते हुए कहने लगे—"हे महाशय! इस विषयमें वेद, भागवत आदि शास्त्रोंमें जो कु
है, मैं उसे कह रहा हूँ। ग्रन्थराज श्रीमद्भागवतमें कहा गया है—

"यन्नाम गृह्णन्नखिलान् श्रोतृनात्मानमेव च।
सद्यः पुनाति किं भूयस्तस्य स्पृष्टः पदा हि ते॥
(श्रीमद्भा० १०/३४/१७)

"(सर्पदेहधारी सुदर्शन नामक विद्याधरने भगवान् श्रीकृष्णसे कहा था—) हे प्रभो! जिनका नामकीर्तन करके मनुष्य स्वयंको तथा उस नामको सुननेवाले सभी लोगोंको परम पवित्र करते हैं। यदि कोई उन्हीं आपके साक्षात् श्रीचरणोंके स्पर्शसे, पवित्र होकर सारे जगत्को पवित्र कर देगा—इस विषयमें और कु

"हे विप्र! साधु, भक्त अथवा वैष्णवके श्रीमुखसे श्रीकृष्णनाम श्रवण करनेमात्रसे ही श्रवणके इच्छुक जीवमात्रके कर्णरन्ध्रमें वह उच्चारित वैकु

बन्धनसे मुक्त कर देता है, क्योंकि वैकु

भोग-बुद्धि दूरकर उसमें वैकु

करता है। भगवान्का नाम ग्रहण करनेसे जीव जीवन्मुक्त होता है। बद्धजीवोंको संसार-बन्धनसे मुक्त होनेके लिए स्वयं ही मुक्त-पुरुषोंके निकट जाकर मन्त्र-दीक्षारूपी कृपा प्राप्त करनी चाहिये।"

श्रील हरिदास ठाकु

हुए कहने लगे—

"पशु-पक्षी-कीट-आदि बलिते ना पारे।
शुनिलेई हरिनाम तारा सब तरे॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२८०)

"हे विप्र! पशु-पक्षी-कीट-पतङ्ग आदि भगवत्-नाम उच्चारण नहीं कर सकते, किन्तु जब वे भगवान्का नाम सुनते हैं, तो उनका भी उद्धार हो जाता है।

"जपिले श्रीकृष्णनाम आपने से तरे।
उच्च-सङ्कीर्त्तने पर उपकार करे॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२८१)

"यदि कोई मन-ही-मन हरिनाम जप करता है, तो वह केवल अपना ही उद्धार करता है। परन्तु जो उच्चस्वरसे

हरिनाम करता है, वह अपने साथ-साथ दूसरोंका भी वास्ताविक उपकार करता है। अतएव शास्त्रोंमें उच्चस्वरसे हरिनाम करनेका फल सौगुणा अधिक बताया गया है। यथा,

"जपतो हरिनामानि स्थाने शतगुणाधिकः।
आत्मानञ्च पुनात्युचैर्जपन् श्रोतृन् पुनाति च॥
(नारदीय पुराणके अन्तर्गत प्रह्लाद वाक्य)

"मन-ही-मन हरिनाम जपकी अपेक्षा उच्चस्वरसे हरिनाम-कीर्त्तनका फल सौ गुणा अधिक है। इसका कारण है कि मन-ही-मन जप करनेवाला व्यक्ति केवल स्वयंको ही पवित्र करता है, परन्तु उच्चस्वरसे कीर्त्तन करनेवाला तो अपने साथ-साथ सुननेवालोंको भी पवित्र करता है।

"तात्पर्य यह है कि अपने उद्धारके लिए मन-ही-मन तो सभी जप करते हैं, परन्तु जो अपने साथ-साथ दूसरोंके उद्धारके लिए भी हरिनामरूपी गोविन्द-सङ्कीर्त्तनको उच्चस्वरसे करता है, भगवान् उससे अधिक सन्तुष्ट होते हैं।

मानव जन्ममें ही श्रीकृष्णनाम-कीर्त्तनका सामर्थ्य

"यद्यपि मनुष्यके अतिरिक्त अन्यान्य प्राणियोंकी भी जिह्वा होती है तथा वे भी अनेक प्रकारकी ध्वनि कर पाते हैं, तथापि मनुष्योंके अतिरिक्त अन्य कोई भी प्राणी कृष्णनाम उच्चारण नहीं कर पाता। यह बात सुनकर कोई-कोई पूछ सकते हैं—'शिक्षा देनेपर पक्षी भी तो कृष्णनाम उच्चारण कर सकते हैं तथा उससे उन्हें भी मुक्तिकी प्राप्ति हो सकती है?' इसका उत्तर यह है कि 'अनुकरण' और 'अनुसरण' सम्पूर्णतः पृथक् क्रियाएँ हैं। अनुकरण करनेसे तुच्छ फलोंकी प्राप्ति तो हो सकती है, किन्तु श्रीकृष्णप्रेम नहीं। अतएव निष्कर्ष यह है कि वास्तवमें मनुष्योंके अतिरिक्त अन्य कोई भी प्राणी श्रीकृष्णका नाम उच्चारण नहीं कर सकता। यह भी निश्चित

है कि जब तक कृष्णनाम न लिया जाये, या न सुना जाये, तब तक प्राणीमात्रका कल्याण सम्भव नहीं है। प्राणीमात्र ही कृष्णनाम ग्रहण करनेमें समर्थ न होनेपर भी वे भगवद्भक्तोंसे कृष्णनाम श्रवण कर सकते हैं। वैकु
भी योग्यता जिसे प्राप्त न हुई हो, उसका जीवन सचमुचमें व्यर्थ है। अतः उच्चस्वरसे कीर्त्तन करनेपर सुननेवाले अन्यान्य सभी प्राणियोंका जीवन सार्थक हो जाता है। जिस वैकु
श्रवण करके प्रत्येक प्राणी जीवन्मुक्त हो सकता है, वैसा उच्च हरिनामकीर्त्तन कभी भी दोष अथवा तर्क द्वारा समालोचनाका विषय नहीं हो सकता। अतः आप स्वयं विचार कीजिये कि उच्चस्वरसे हरिनामकीर्त्तन करनेमें क्या दोष है? बल्कि इसमें तो गुण–ही–गुण हैं।

नाम जप और नामकीर्त्तनका तारतम्य

"केह आपनारे मात्र करये पोषण।
केह वा पोषण करे सहस्त्रेक जन॥

दुईते के बड़, भावि बुझह आपने।
ऐई अभिप्राय गुण उच्चसङ्कीर्त्तने॥

(चै॰ भा॰ आ॰ १६/२८९–२९०)

"एक व्यक्ति स्वार्थपर होकर केवल अपना ही पालन–पोषण करता है तथा एक अन्य व्यक्ति अपने पोषणके साथ–साथ हजारों लोगोंका भरण–पोषण करता है। अतः अब आप ही कृपापूर्वक बताइये कि दोनोंमेंसे कौन श्रेष्ठ है? इसका विचार करनेसे यह जाना जाता है कि उच्चस्वरसे नामसङ्कीर्त्तन करनेवाला व्यक्ति स्वार्थपर नहीं है, बल्कि वह निःस्वार्थ और दूसरोंका उपकार करनेवाला है। अतएव केवलमात्र जप करनेवाले व्यक्तिकी अपेक्षा उच्च नामसङ्कीर्त्तन करनेवाला ही श्रेष्ठ है।"

साधुशिरोमणि श्रील हरिदास ठाकु
वचनोंको श्रवण करनेपर भी नामापराधी
पाषण्डी विप्रके द्वारा साधु-निन्दा

श्रील हरिदास ठाकु
वह अधम विप्र और भी अधिक क्रोधित होकर दुर्वचन कहने लगा—"भारतमें छह प्रधान दर्शनोंकी बात प्रसिद्ध है। उन सभीमें वर्णित विचार न्यूनाधिक वेदोंके अनुगत है। अभी तक कपिल, पतञ्जलि, कणाद, अक्षपाद, जैमिनी और व्यास—यही छह दर्शनोंके मालिक [आचार्य] थे। अब पता नहीं, यह हरिदास कहाँसे आकर 'सप्तम-दर्शन' का मालिक [आचार्य] बन गया है। मैं देख रहा हूँ कि समयके साथ-साथ वेदोंके द्वारा प्रदर्शित पथ लोप हो रहा है। मैंने सुना था कि कलियुगके अन्तमें शूद्र भी वेद अध्ययन और वेद पाठ करने लगेंगे। परन्तु अभी तो कलियुगका आरम्भमात्र ही हुआ है। जब तेरे जैसे शूद्रों और यवनोंने अभीसे वेद अध्ययन तथा वेद पाठ आरम्भ कर दिया है, तब फिर कलियुगके अन्त तक कैसी अवस्था होगी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। हाय! हाय! कलिकाल है, अतएव कालके प्रभावसे वैदिक पथ हरिदास जैसे व्यक्तियोंके द्वारा ध्वंस होने चला है। कालके प्रभावसे न जाने और कैसे-कैसे विचार सुनने पड़ेंगे!"

जगद्गुरु श्रील हरिदास ठाकु
मानकर विप्र द्वारा उनके प्रति मिथ्या आरोप

वह पापिष्ठ अधम ब्राह्मण श्रील हरिदास ठाकु
लगा—"तुम अप्राकृत-दर्शन-कर्त्ता बनकर भक्तिविद्वेषी कर्म-काण्डियोंके विरुद्ध जो व्याख्या कर रहे हो, उसके द्वारा तुम अपनी महिमाको भलीभाँति प्रचारित करके अपने वशीभूत व्यक्तियोंसे छल करके उत्कृष्ट खाद्य-द्रव्य आदि संग्रह कर

पाओगे। तुम्हारे जैसे लोग अन्य व्यक्तियोंके घरमें उत्तम भोग प्राप्त करनेकी आशासे ही अपने आपको इस प्रकार सजाते हैं।”

जगद्गुरु श्रील हरिदास ठाकु
शपथरूपी शासनोक्ति

श्रीहरिदास ठाकु

शास्त्र-व्याख्या श्रवण करके उस पाषण्डी अधम विप्रकी पशु जैसी प्रवृत्ति प्रबल हो गयी। उसने अत्यधिक क्रोधपूर्वक यह कहकर श्रील हरिदास ठाकु

कि—“हरिदासके द्वारा कही गयी नामकी ऐसी व्याख्या यदि वास्तवमें शास्त्रोंसे भिन्न हुई, तो मैं सबके सामने इसके नाक और कान दोनोंको काट करके प्रतिशोध लूँगा।”

श्रील हरिदास ठाकु

उस अभिमानी विप्रके कटु-वाक्य सुनकर श्रील हरिदास ठाकु

अत्यधिक दुःखी होनेपर भी बाहरसे हँसते हुए उच्चस्वरसे कीर्त्तन करते हुए आगे चले गये। जितने पापी ब्राह्मण वहाँ बैठे थे, उन्होंने भी पाप बुद्धिवशतः इसपर कु

विचार नहीं किया तथा चुपचाप बैठे रहे।

पापिष्ठ व्यक्तियोंका समर्थन करनेवाले भी पापी

जो पापिष्ठ दुश्चरित्र व्यक्तियोंका समर्थन करनेवाले तथा उन्हें प्रश्रय देनेवाले होते हैं, वह स्वयं भी पापी ही होते हैं। ठाकु

समर्थन करनेकी बात दूर रहे, उस सभामें बैठे हुए अति पापिष्ठ व्यक्तियोंने उस पाषण्डी अधम विप्रकी कटु उक्तिका कोई भी प्रतिवाद नहीं किया। ब्राह्मण वंशमें जन्म ग्रहण करके भी यदि कोई व्यक्ति वास्तविक ब्राह्मणोंके आचरण

हरि भजनका पालन करनेसे विमुख होता है, तब उसे राक्षस कहते हैं। यह सब लोग तो यमराजकी यातनाके पात्र हैं। मरनेके बाद यमसे इन्हें बहुत अधिक दण्ड प्राप्त होता है। उस सभामें उपस्थित सभी नामधारी ब्राह्मण भी वास्तवमें राक्षस ही थे।

अत्यधिक विरल श्रौतपन्थी वैष्णवोंको राक्षसोंके द्वारा बाधा प्रदान

कलियुगे राक्षस-सकल विप्र-घरे।
जन्मिबेक सुजनेर हिंसा करिबारे॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/३००)

विष्णु और वैष्णवोंसे हिंसा करनेवाले राक्षस-स्वभावके व्यक्ति कलिकालमें ब्राह्मणोंके कु
वैष्णवोंके प्रति हिंसा करते हैं।

राक्षसाः कलिमाश्रित्य जायन्ते ब्रह्मयोनिषु।
उत्पन्ना ब्राह्मणकु
(वराहपुराणे महेश वाक्यम्)

राक्षस कलियुगका आश्रय लेकर ब्राह्मण-कु
होते हैं तथा अति विरल श्रौतपथका अवलम्बन करनेवाले सज्जनोंको उत्पीड़ित करते हैं।

अवैष्णव तथा वैष्णव-विद्वेषी ब्राह्मणोंके दुःसङ्गको परित्याग करना ही विधि

ए सब विप्रेर स्पर्श, कथा, नमस्कार।
धर्मशास्त्रे सर्वथा निषेध करिवार॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/३०२)

ऐसे सब ब्राह्मणोंका स्पर्श करना, उनसे वार्त्तालाप करना तथा उनको प्रणाम आदि करना धर्मशास्त्रोंमें सम्पूर्ण रूपसे निषिद्ध है।

श्रील प्रभुपाद स्वरचित (चै॰ भा॰ आ॰ १६/३०२ के) गौड़ीय–भाष्यमें लिखते हैं, “ब्राह्मण कु
विद्वेषी अभिमानी विप्रोंका स्पर्श तक भी नहीं करना चाहिये। यदि दैववश उनका स्पर्श हो जाये, तो वस्त्रों सहित गङ्गा–स्नान करना ही कर्त्तव्य है। ऐसे ब्राह्मणोंके साथ आलाप (बातचीत) करनेसे अधःपतन अवश्यम्भावी है। उन्हें प्रणाम आदिके द्वारा सम्मान करनेसे भी विष्णुभक्तिसे निश्चय ही च्युत होना पड़ता है। इसलिए श्रीमद्भागवत और धर्मशास्त्र आदि वेद–प्रतिपाद्य ग्रन्थोंमें वैष्णव–सदाचारके पालनसे विमुख–व्यक्तियोंको वंशसहित पतित कहकर सम्बोधित किया गया है।

“किमत्र बहुनोक्तेन ब्राह्मणा ये ह्यवैष्णवाः।
तेषां सम्भाषणं स्पर्शं प्रमोदनापि वर्जयेत्॥

(पद्मपुराणके अन्तर्गत महेश वाक्य)

“इस विषयमें अधिक कु
है। परन्तु (एक बात अवश्य ही गाँठ बाँधकर रखनी चाहिये कि) जो ब्राह्मण होनेपर भी अवैष्णव हैं, भ्रमसे भी उनके साथ न तो सम्भाषण करना चाहिये और न ही उनका स्पर्श करना चाहिये।”

शुद्धवैष्णवमात्र ही जगद्गुरु

श्वपाकमिव नेक्षेत लोके विप्रमवैष्णवम्।
वैष्णवो वर्णबाह्योऽपि पुनाति भुवनत्रयम्॥

(पद्मपुराण)

जिस प्रकार कु
अवैध अथवा निषिद्ध होता है, उसी प्रकार अवैष्णव ब्राह्मणका दर्शन करना भी कदापि उचित नहीं है। दूसरी ओर, वैष्णव जिस किसी भी वर्णका होनेपर भी त्रिभुवनको पवित्र करता है।

ब्राह्मण हइया यदि अवैष्णव हय।
तबे तार आलापेह पुण्य जाय क्षय॥
(चै॰ भा॰ आ॰ १६/३०५)

ब्राह्मण होनेपर भी यदि कोई अवैष्णव हैं, अर्थात् उसने वैष्णवी-दीक्षा प्राप्त नहीं की है, तो उसके साथ वार्त्तालाप करनेमात्रसे ही पुण्य क्षीण हो जाते हैं।

निन्दुक नामापराधीको उपयुक्त फलकी प्राप्ति

श्रील हरिदास ठाकु
उसे अवश्य ही मिलना था। अतः कु
कु
घृणित विप्रकी नाक गल गयी। यद्यपि श्रील हरिदास ठाकु
उस दुर्जन पाषण्डीको कोई शाप नहीं दिया और न ही उसके अमङ्गलकी कोई चिन्ताकी, तथापि वैष्णव-अपराधी उस पाषण्डीको, श्रीहरिदास ठाकु
विद्वेष करके कटु वचन कहनेके फलस्वरूप भगवान्‌ने ही ऐसा कठोर दण्ड प्रदान किया। इस प्रकार भगवान्‌ने अपने भक्तके प्रति किये गये अपराधका फल उसे दे दिया। विषय-भोगोंमें लिप्त हरिविमुख पतित जगत्-वासियोंकी ऐसी दुर्दशा देखकर दयार्द्रचित्त श्रील हरिदास ठाकु
'कृष्ण-कृष्ण' बोलते हुए निःश्वास छोड़ने लगे।

श्रील हरिदास ठाकु

कु
प्रभुके लीला-परिकर शुद्ध वैष्णवोंके दर्शनकी अभिलाषासे श्रीमायापुर-नवद्वीपमें आ गये। श्रीहरिदास ठाकु
सभी भक्त आनन्दमें विभोर हो गये।

श्रील अद्वैताचार्य प्रभुका घर शान्तिपुर तथा मायापुर—इन दोनों स्थानोंपर ही था। वे कभी तो शान्तिपुरमें रहते थे और

कभी मायापुरमें। जिस समय श्रील हरिदास ठाकु
मायापुरमें आये, उस समय श्रीअद्वैताचार्य प्रभु भी वहींपर ही थे।

आचार्य गोसाञि हरिदासेरे पाइया।
राखिलेन प्राण हैते अधिक करिया॥
(चै॰ भा॰ आ॰ ६/३११)

श्रील हरिदास ठाकु
उन्हें अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रिय समझकर उन्हें यत्नपूर्वक वहाँ रखा।

सभी वैष्णव श्रील हरिदास ठाकु
रखते थे तथा श्रील हरिदास ठाकु
आदर करते थे।

श्रील हरिदास ठाकु
हिंसापरायण पाषण्डी व्यक्ति उन्हें लक्ष्य करके सदैव अनेक प्रकारके विद्वेषमूलक बाण निक्षेप करने लगे। उन दुष्टोंकी बातें सुनकर भक्त उनकी शोचनीय दशाके विषयमें दुःखपूर्वक परस्पर चर्चा करते थे।

यद्यपि विषयरसमें मत व्यक्ति गीता-भागवत आदि सात्वत-शास्त्रोंका अनुशीलन न कर सब समय इन्द्रिय-तर्पणमें ही व्यस्त रहते थे, तथापि शुद्धभक्त गीता-भागवत आदिकी आलोचना करके परस्परका आनन्द वर्धित करते थे। जड़रससे सम्पूर्णतः दूर रहकर परस्पर इष्टगोष्ठी करके वे जगत्के नित्य चरम मङ्गलाकांक्षी हुए थे।

द्वादश अध्याय

श्रीमन् महाप्रभु एवं श्रील हरिदास ठाकु

नवद्वीपमें श्रीमन् महाप्रभु

अपनी दिव्य लीलाकी प्रारम्भिक अवस्थामें भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु निमाई पण्डितके रूपमें श्रीनवद्वीपधाममें गुप्त रूपसे अत्यन्त मनोहर लीलाएँ कर रहे थे। जब वे गयामें अपने पिताके श्राद्धके छलसे गये तथा वहाँ उन्होंने श्रीईश्वरपुरीसे दीक्षा-मन्त्र ग्रहण किया, तो वे पण्डित निमाईसे भक्त निमाई बन गये। इससे पहले वे अत्यन्त चञ्चल और पण्डित अभिमानीकी भाँति लीलाएँ कर रहे थे। उस समय सभी वैष्णववृन्द उनकी मायाके प्रभावसे उनकी महिमाको न जानकर उन्हें भजन करनेका उपदेश प्रदान करते थे। कु वैष्णवलोग उनसे मिलनेमें कतराते भी थे। वे सोचते थे कि इसे तो भजन करना नहीं है, यह हमारा समय भी व्यर्थके तर्क-वितर्कमें नष्ट कर देगा। परन्तु जब प्रभु गयासे लौटे, तो उनका स्वरूप पूर्ण रूपसे बदल चुका था। उनके मुखसे निरन्तर 'कृष्ण-कृष्ण' निकल रहा था। आँखोंसे गङ्गा-यमुनाकी भाँति अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी तथा कभी-कभी वे अत्यन्त विरहकातर होकर 'हे कृष्ण! हे प्राणनाथ! आप मुझे छोड़कर कहाँ चले गये', ऐसा कहकर जोर-जोरसे विलाप करते हुए मूर्च्छित होकर गिर पड़ते। उनकी ऐसी दशा देखकर श्रीवास पण्डित, श्रीअद्वैताचार्य तथा श्रील हरिदास ठाकु

शरणमें आ गये। अब प्रभुने युगधर्म हरिनाम-सङ्कीर्त्तनको

जगत्में प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया। प्रारम्भमें श्रीवास पण्डितके घरमें द्वार बन्दकर केवल भक्तोंके साथ ही प्रभु 'हरिनामकीर्त्तन' का आस्वादन करते थे।

श्रीवास पण्डित तथा श्रील हरिदास ठाकुर श्रीमन् महाप्रभु द्वारा जगत्-वासियोंको शिक्षा-प्रदान

एक दिन श्रीचैतन्य महाप्रभुने श्रीनित्यानन्द प्रभुके नवद्वीप आनेकी बातको भङ्गीपूर्वक सभी भक्तोंके समक्ष व्यक्त करते हुए कहा—"आज मैंने एक विलक्षण स्वप्न देखा है। उस स्वप्नमें मैंने किसी एक ऐसे महापुरुषको देखा है, जो मुझे कह रहा था—'मैं आपका भाई हूँ, मेरा और आपका परिचय कल होगा।'"

श्रीमन् महाप्रभुने पुनः कहा—"मैंने तुमलोगोंसे पहले भी कहा है कि शीघ्र ही हमें किसी-न-किसी महाजनके दर्शन प्राप्त होंगे।" अतएव,

"चल हरिदास! चल श्रीवास पण्डित!
चाह गिया देखि के आइसे कोन भित॥

(चै॰ भा॰ म॰ ३/१६०)

"हरिदास! जाओ, श्रीवास पण्डित! तुम भी जाओ, जाकर पता लगाओ कि कौन महापुरुष कहाँपर आया है?"

श्रीमन् महाप्रभुके आदेशसे दोनों महाभागवत बहुत आनन्दपूर्वक उन महापुरुषको ढूँढ़ते हुए सारे नवद्वीपमें घूमने लगे। ढूँढ़ते हुए वे दोनों परस्परसे कहने लगे "ऐसा लगता है कि सङ्कर्षण प्रभु आये हैं।"

आनन्दे विह्वल दुँहे चाहिया बेड़ाय।
तिलार्द्धेक उद्देश कोथाओ नाहि पाय॥

(चै॰ भा॰ म॰ ३/१६३)

वे दोनों आनन्दमें मतवाले होकर सर्वत्र ढूँढ़ते रहे, किन्तु उन्हें किसी नये व्यक्तिके आनेका लेशमात्र भी इङ्गित प्राप्त नहीं हुआ।

तीन प्रहर तक सारे नवद्वीपमें ढूँढ़ लेनेपर भी जब श्रीवास पण्डित और श्रील हरिदास ठाकु
तब वे लौटकर प्रभुके पास आ गये। दोनोंने आकर प्रभुके श्रीचरणोंमें निवेदन किया, "हमें आपके द्वारा बताये हुए लक्षणोंवाले किसी भी महापुरुषके दर्शन प्राप्त नहीं हुए। हमने वैष्णवोंके घरोंमें, संन्यासियोंके आश्रमोंमें, साधारण गृहस्थोंके घरोंमें, यहाँ तक कि वैष्णव-विद्वेषी पाषण्डियोंके घरोंमें भी उन्हें ढूँढ़ा, किन्तु हमें कोई सफलता नहीं मिली।"

दोंहान वचन शुनि' हासे गौरचन्द्र।
छले बुझाइल 'बड़ गूढ़ नित्यानन्द॥
(चै॰ भा॰ म॰ ३/१६८)

श्रीवास पण्डित तथा श्रील हरिदास ठाकु
सुनकर श्रीगौरचन्द्र हँसने लगे। उन्होंने छलपूर्वक अर्थात् अपने इन दो नित्य परिकरोंके माध्यमसे समस्त जगत्-वासियोंको यह शिक्षा दी कि 'श्रीनित्यानन्द प्रभुका तत्त्व बहुत गूढ़ है।'

श्रीवास पण्डित और श्रील हरिदास ठाकु
श्रीमन् महाप्रभु अपने सारे परिकरोंको साथ लेकर श्रीनन्दनाचार्यके घरपर गये और वहीं उनकी श्रीनित्यानन्द प्रभुसे भेंट हुई।

इस लीलाका गूढ़ तात्पर्य यह है कि भगवान् श्रीचैतन्यचन्द्र जिसपर कृपा करते हैं, उन्हें ही अखण्ड गुरुतत्त्व श्रीनित्यानन्द प्रभुके दर्शन प्राप्त होते हैं।

श्रीचैतन्यदेवके प्रिय सेवक ही उनकी कृपासे श्रीनित्यानन्द प्रभुके स्वरूपको जान सकते हैं। मायाबद्ध जीवोंके लिए श्रीनित्यानन्द प्रभुका चरणाश्रय सम्भवपर नहीं है। श्रीचैतन्य

महाप्रभुकी कृपाके स्वरूप चैत्य-गुरुकी अनुकम्पासे नित्यानन्द-तत्त्वकी उपलब्धि होती है।

सर्वथा श्रीवास आदि ताँर तत्त्व जाने।
ना हइल देखा कोन कौतुक-कारणे॥
(चै॰ भा॰ म॰ ३/१७३)

वास्तवमें श्रीवास पण्डित और श्रील हरिदास ठाकु श्रीनित्यानन्द प्रभुके तत्त्वको भलीभाँति जानते हैं, तथापि उन्हें भी जो श्रीनित्यानन्द प्रभुके दर्शन प्राप्त नहीं हुए—इसे केवल (श्रीमन् महाप्रभु द्वारा किया गया) कोई कौतुक विशेष ही समझना चाहिये।

कोतवालके रूपमें श्रील हरिदास ठाकु

एकबार श्रीमन् महाप्रभुने अपने भक्तोंके समक्ष कहा—"मैं आज दस प्रकारके दृश्यकाव्योंमेंसे एक 'अंक' काव्यकी विधिके अनुसार मैं स्त्रीके स्वरूपमें नृत्य करूँगा। जो जितेन्द्रिय हैं, केवल उन्हें ही मेरे इस नृत्यको देखनेका अधिकार होगा। जो इन्द्रियोंपर संयम करनेमें समर्थ हैं, वे ही आज भवनके भीतर प्रवेश करें।"

श्रीमन् महाप्रभुने सदाशिव और बुद्धिमन्त खानको बुलाकर कहा—"वेश-भूषाकी तैयारियाँ करो। सबके लिए शंख चोली, पट्ट साड़ी और अलङ्कार आदि एकत्रित करो एवं सभीके लिए यथायोग्य वेश-भूषाका प्रबन्ध करो।"

श्रीमन् महाप्रभुने सभी भक्तोंको अपने समक्ष बुलाकर कहा—"गदाधर रुक्मिणीका वेश धारण करेंगे और ब्रह्मानन्द उनकी वृद्धा सखी सुप्रभात बनेंगे। नित्यानन्द प्रभु एक बड़ी-बूढ़ीका रूप धारण करेंगे, श्रीवास पण्डित नारद बनेंगे तथा हरिदास ठाकु
जगाते रहेंगे।"

इस प्रकार श्रीमन् महाप्रभुकी आज्ञानुसार श्रील हरिदास ठाकु दो मूँछे लगाकर हँसते–हँसते मञ्चपर प्रवेश किया। उस समय उनके सिरपर एक बड़ी पगड़ी शोभा पा रही थी और उन्होंने सुन्दर धोती पहनी हुई थी। हाथमें दण्ड लिये हुए वे सबको सावधान करते हुए कह रहे थे—“अरे भाईयो! सावधान हो जाओ। आज जगत्के प्राणस्वरूप प्रभु लक्ष्मीके वेशमें नृत्य करेंगे।” हाथमें छड़ी लिये हरिदास ठाकु ओर दौड़ रहे थे। उनका सारा शरीर पुलकित हो रहा था और वे ‘कृष्ण’ नामसे सभीको जगा रहे थे। श्रील हरिदास ठाकु “कृष्णका भजन करो, कृष्णकी सेवा करो और कृष्णका नाम लो।”

श्रील हरिदास ठाकु उनसे पूछने लगे—“तुम कौन हो, यहाँ क्यों आये हो?” श्रील हरिदास ठाकु सभीको जगाते हुए सब समय घूमता रहता हूँ। वैकु छोड़कर प्रभु यहाँ आ गये हैं तथा वे सभीमें अपनी प्रेमभक्तिका वितरण करेंगे। आज वे लक्ष्मीके वेशमें नृत्य करेंगे, तुम सभी लोग आज सावधानीपूर्वक प्रेमभक्तिको लूट लो।” इतना कहकर श्रील हरिदास ठाकु मूँछोंमें ताव देते हुए मुरारि गुप्तके साथ दौड़ने लगे। उस समय दोनोंकी दिव्य देह प्रेमसे पुलकित हो रही थी तथा दोनोंके शरीरमें श्रीगौरचन्द्रके विलासका उन्मेष था। इस प्रकार सात दिन तक होनेवाली श्रीमन् महाप्रभुकी लीलामें श्रील हरिदास ठाकु महाप्रभु तथा सभी भक्तोंको आनन्द प्रदान किया।

एकदिन श्रीवास पण्डितके घर महाप्रभुके नृत्य-सङ्कीर्त्तनके अन्तमें एक ब्राह्मणीने आकर श्रीमन् महाप्रभुके चरण पकड़ लिये तथा उनके चरणोंकी धूलिको बार-बार मस्तकपर धारण करने लगी। श्रीमन् महाप्रभुको यह देखकर बहुत दुःख हुआ। उसी समय महाप्रभु वहाँसे भागकर गङ्गामें जा कूदे। श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु

बाहर निकाला।

श्रीगौरसुन्दरका 'सात-प्रहरिया' भाव

एक दिन श्रीगौरसुन्दर श्रीवास पण्डितके घरमें सात-प्रहर अर्थात् इक्कीस घण्टे तक भगवत्-भावमें आविष्ट रहे। उस समय उन्होंने राम, नृसिंह, वराह आदि समस्त अवतारोंके रूपमें भक्तोंको दर्शन दिया और सभी भक्तोंपर कृपा की। जिस भक्तका जो आराध्य था, उसे उसी रूपमें दर्शन दिया अर्थात् जो रामभक्त था, उसे रामके रूपमें, जो नृसिंहभक्त था उसे नृसिंहके रूपमें इत्यादि। इस लीलासे स्पष्ट हो जाता है कि श्रीमन् महाप्रभु समस्त अवतारोंके मूल हैं। वे स्वयं व्रजेन्द्रनन्दन श्यामसुन्दर हैं। समस्त अवतार उनसे ही प्रकटित होते हैं।

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा अपने मुखसे श्रील हरिदास ठाकु

भक्तोंपर कृपा करते-करते प्रभुने अत्यन्त स्नेहपूर्वक श्रील हरिदास ठाकु

तुम मेरा दर्शन करो।" ऐसा कहकर प्रभुने उन्हें अपने दिव्यस्वरूपका दर्शन कराया। श्रीमन् महाप्रभुके दिव्यस्वरूपके दर्शन करके श्रील हरिदास ठाकु

करने लगे। उन्हें इस प्रकार क्रन्दन करते देखकर प्रभुका

हृदय द्रवित हो गया तथा वे श्रील हरिदास ठाकु
लगे—

"ऐई मोर देह हैते तुमि मोर बड़।
तोमार जे जाति, सेई जाति मोर दृढ़॥

(चै॰ भा॰ म॰ १०/३६)

"हरिदास! मेरी अपनी देहसे तुम्हारी देह श्रेष्ठ है। तुम जिस जातिके हो, वही मेरी भी जाति है।"

[श्रील प्रभुपाद स्वरचित गौड़ीय-भाष्य (चै॰ भा॰ म॰ १०/७६) में लिखते हैं—] महाप्रभुने ठाकु
सम्बोधन करके कहा—"कोई-कोई तुम्हारे इस अहिन्दु-शरीरको मेरे इस ब्राह्मणशरीरसे हीन मानते हैं, किन्तु उनकी दृष्टि भ्रान्त है। मैं दृढ़ रूपसे कहता हूँ कि तुम्हारी जाति तथा मेरी जातिमें कोई भेद नहीं है। मेरी देहसे तुम्हारी देह सब प्रकारसे श्रेष्ठ है। आधुनिक हिन्दु अपनी-अपनी देहको यवनोंकी देहसे श्रेष्ठ मानते हैं, इसलिए पाषण्डी हिन्दु अपनी-अपनी जातिके मदमें मत्त होकर जिस किसी भी कु
जानेवाली युक्तियाँ अत्यन्त दोष युक्त हैं। जो शरीरधारी व्यक्ति अनुक्षण भगवान्‌की सेवामें रत रहता है, साधारण लोग उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग और शरीर आदिकी दूसरी-दूसरी जातिके लोगोंके साथ तुलना कर सकते हैं, किन्तु वह अपराधजनक है। देहधारी मनुष्य अपने-अपने हिन्दु अथवा अहिन्दुके विचारसे अपनी-अपनी श्रेष्ठताको स्थापित करनेमें व्यस्त हैं। हरिभजनमें दृढ़ता और गाढ़ताके विषयमें उदासीन रहनेपर ही उनका ऐसा विचार प्रबल हुआ है। यद्यपि पापिष्ठ यवन अथवा तथाकथित पुण्यवान हिन्दु लौकिक विचारसे अपनी-अपनी श्रेष्ठता स्थापित करते हैं, तथापि ऐसे विचारसे वैष्णवोंकी निन्दा करके नरकके पथपर चलनेसे उनका मङ्गल नहीं होता।

भक्तिके प्रभावसे जड़ इन्द्रियोंका अप्राकृतत्व

"स्पर्शमणिके द्वारा जिस प्रकार लोहा भी स्वर्ण बन जाता है, उसी प्रकार भक्तिके संसर्गसे जड़ीय देह-इन्द्रिय आदि भी अप्राकृत हो जाते हैं। तत्त्वान्ध व्यक्ति वैष्णवके स्वरूपकी उपलब्धि नहीं कर पानेके कारण ही उन्हें उनके पूर्व-परिचयसे परिचित करते हैं तथा उनकी देहको भी जन्म-मरणशील, हाड-माँसकी थैली मानकर वैष्णव-चरणोंमें अपराधी होते हैं।

"वास्तवमें भक्त यदि वैकु

स्थानपर वास क्यों न करे, उनकी सेवनोपयोगी सच्चिदानन्दमय देह स्वतः ही प्रकाशित होती है। भक्तिकी स्फूर्तिसे उसकी पाञ्चभौतिक देह सच्चिदानन्दमय रूपता प्राप्त करती है। वैष्णवोंकी वैसी देहके जन्म-मृत्यु भगवान्के सच्चिदानन्दमय देहके आविर्भाव-तिरोभावके समान है। जो भगवान् और उनके भक्तोंके आविर्भाव और तिरोभावको कर्मफल बाध्य जीवोंके जन्म-मृत्यु जैसे मानते हैं, वे मुक्ति प्राप्तिके बदले पुनः-पुनः प्रपञ्चके क्लेशोंको प्राप्त करते हैं, कभी मुक्त नहीं हो पाते।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा अपने मुखसे यवनोंके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

अपनी विवशताका ज्ञापन

पापिष्ठ यवने तोमा जत दिल दुःख।
ताहा स्मङरिते मोर विदरये बुक॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/३७)

श्रीमन् महाप्रभु कहने लगे—"पापी मुसलमानोंने तुम्हें जिस प्रकार भयङ्कर कष्ट प्रदान किये थे, उनका स्मरणकर तो मेरी छाती फटने लगती है। सुनो! सुनो हरिदास! मैं सत्य कह रहा हूँ। जब वे दुष्ट तुम्हें मारते-मारते बाजारोंमें घुमा रहे थे, उस समय मैं तुम्हारे ऊपर ऐसा भयङ्कर अत्याचार

होते देखकर सहन नहीं कर पाया तथा हाथमें चक्र लेकर वैकु
यद्यपि वे तुम्हारे प्राणोंका अन्त करनेके लिए तुम्हें मार रहे थे, पर तुम अपने मनमें उनकी मङ्गल-कामना ही कर रहे थे। तुम जो मार खा रहे थे, उसकी चिन्ता तुम्हें नहीं थी, तुम तो उस समय भी मनमें उनके कल्याणके विषयमें ही चिन्ता कर रहे थे। मेरे भक्तोंकी सहनशीलता इतनी अधिक होती है कि यदि कोई उनके अमङ्गलकी भी चिन्ता करता है, तब भी वह उसका प्रतिशोध लेनेकी बात तो दूर रहे, उस पापीके मङ्गलकी ही आकांक्षा करते हैं। जैसे ही मैंने उनके ऊपर चक्र छोड़ना चाहा, उसी समय तुमने प्रार्थना की—'हे प्रभो! यदि मैंने आपकी लेशमात्र भी भक्ति की हो, तो आप इनपर कृपा कीजिये। इनके अपराधोंको ग्रहण मत कीजिये।' वे दुष्ट तुम्हें जानसे मारनेकी चेष्टा कर रहे थे, परन्तु तुम उनके मङ्गलकी कामना कर रहे थे। तुम्हारी प्रार्थनाके कारण उनके प्रति अत्यधिक क्रोधित होनेपर भी मेरा हाथ रुक गया, मैं चक्र नहीं छोड़ पाया।

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा भक्तके ऊपर किये गये प्रहारको अपने अङ्गोंपर ग्रहण करना

"वे दुष्ट रुकनेका नाम ही नहीं ले रहे थे। वे निरन्तर तुम्हारी पीठपर प्राणघातक प्रहार करते ही जा रहे थे। तुम्हारी रक्षाका कोई उपाय न देखकर मैं तुम्हारी पीठपर लेट गया तथा तुम्हारे पीठपर पड़नेवाले प्रहारोंको मैंने स्वयं अपने शरीरपर ग्रहण किया। मैं झूठ नहीं कह रहा हूँ, उसके चिह्न अभी भी मेरी देहपर विद्यमान हैं।

भक्तोंकी रक्षा करने हेतु ही बहुत जल्दी श्रीगौर-आविर्भाव

"हरिदास! मुझे तो बहुत बादमें अवतरित होना था, परन्तु तुम्हारे ऊपर होनेवाले अत्याचारोंको सहन न कर

पानेके कारण ही मुझे पहले आना पड़ गया। मेरे नाड़ा अर्थात् अद्वैताचार्यने तुम्हें अच्छी तरहसे पहचाना है। अद्वैत मेरी सम्पत्ति-विशेष है तथा उसकी सेवासे बाध्य होकर मैं उसके निकट सब प्रकारसे आबद्ध हूँ।"

भक्तोंके प्रति भगवान्‌की प्रीतिका दिग्दर्शन

इस प्रसङ्गका वर्णन करते-करते श्रीचैतन्यलीलाके व्यास श्रीवृन्दावनदास ठाकु
भक्तोंके मानको बढ़ानेके लिए क्या नहीं करते तथा कौन-सी ऐसी भाषा है, जो नहीं बोलते।

ज्वलन्त अनल प्रभु भक्त लागि खाय।
भक्तेर किङ्कर हय आपन इच्छाय॥
(चै० भा० म० १०/४८)

भक्तके लिए प्रभु जलती हुई आग तकको भी खा जाते हैं और अपनी इच्छासे ही वे भक्तोंके दास भी बन जाते हैं।

भक्तेर महिमा भाई देख चक्षु भरि।
कि बलिला हरिदास-प्रति गौरहरि॥
(चै० भा० म० १०/५१)

अरे भाइयो! नेत्र भरकर भक्तोंकी महिमाके दर्शन करो— भक्त श्रीहरिदासके प्रति श्रीगौरहरिने क्या कहा है?

अपने प्रति हुई प्रभुकी कृपाका श्रवण करके श्रील हरिदास ठाकु करनेपर महाप्रभुका स्तव करना

प्रभुके श्रीमुखसे ऐसी करुणापूर्ण बातोंको सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
बोले—"हरिदास! उठो, उठो। मन भरकर मेरा दर्शन करो।" प्रभुकी अमृतमय वाणी सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
दूर हो गयी। मूर्च्छा दूर होते ही वे दर्शन क्या करते, भावमें

आविष्ट होकर क्रन्दन करते-करते आङ्गनमें लोट-पोट खाने लगे। उन्हें इस प्रकार भावमें आविष्ट देखकर महाप्रभु श्रीगौरसुन्दर उन्हें शान्त करने लगे, परन्तु उनका आवेश दूर ही नहीं हो रहा था। वह रोते-रोते श्रीमन् महाप्रभुका स्तव करते हुए कहने लगे—"हे विश्वम्भर! हे प्रभो! हे जगन्नाथ! मुझ पापीपर कृपा कीजिये। हे प्रभो, मैं आपकी लीलाका वर्णन करनेमें किस प्रकार समर्थ होऊँगा? मैं समाजमें उत्तम अथवा मध्यम नहीं, 'अधम' के नामसे परिचित हूँ। मैं जागतिक किसी गुणमें गुणी नहीं हूँ। सभी गुणोंमें ही दरिद्र हूँ। मैं आर्य-जातिवालोंकी वर्ण-गणनाके अन्तर्गत तक नहीं हूँ। अतएव आपके गुणोंका वर्णन करनेकी कोई भी योग्यता मुझमें नहीं है।

"देखिले पातक, मोरे परशिले स्नान।
मुञि कि बलिब प्रभु तोमार आख्यान?

(चै॰ भा॰ म॰ १०/६०)

"यदि कोई मुझे देख ले, तो उसे पाप लगता है। यदि कोई मुझ पापीका स्पर्श कर ले, तो उसे स्नान करना पड़ता है। मैं आपकी महिमाका क्या वर्णन कर सकता हूँ?

श्रील हरिदास ठाकुर द्वारा भक्तिके फलका कीर्त्तन

"हे प्रभो! आपने अपने मुखसे एक सङ्कल्प किया है कि जो आपके श्रीचरणोंका स्मरण करता है, वह भले ही कीटके समान भी क्यों न हो, तब भी आप उसे त्यागते नहीं है। और यदि कोई आपके श्रीचरणकमलोंका स्मरण न करता हो, तो राजा होनेपर भी आप उसे दण्डित करते हैं। हे प्रभो! आपकी महिमा अपार है। आपकी दयालुताकी कोई सीमा नहीं है। परन्तु मेरा ही दुर्भाग्य है कि मैं आपका स्मरण करनेमें भी सर्वथा असमर्थ हूँ।

"जब भरी सभामें दुर्योधनके आदेशपर दुःशासन द्रौपदीको खींचकर ले आया तथा उन्हें वस्त्रहीन करनेकी चेष्टा की, उस समय जब द्रौपदीने असहाय होकर करुण-स्वरसे आपको पुकारा, तो आप उसके स्मरणके प्रभावसे उसी क्षण वस्त्रमें प्रवेश कर गये। आपके प्रभावसे वस्त्र अनन्त हो गया। परन्तु फिर भी वे पापी लोग आपकी महिमाको समझ नहीं पाये।

"किसी समय पार्वतीदेवीको डाकिनियोंने घेरकर खानेकी चेष्टा की, उस समय भयभीत होकर पार्वतीने आपका स्मरण किया। उनके द्वारा स्मरण करते ही आप वहाँपर प्रकट हो गये तथा आपने उन डाकिनियोंको दण्ड प्रदान कर पार्वतीकी रक्षा की।

"दुष्ट हिरण्यकशिपुने प्रह्लादको विष देकर, सर्पसे डँसवा कर, आगमें जलाकर, उनके शरीरपर एक भारी पत्थर बाँधकर समुद्रमें फेंककर मारनेकी जितनी भी चेष्टाएँ की, प्रत्येक परिस्थितिमें आपका स्मरण करनेके कारण आपने सब प्रकारसे प्रह्लादकी रक्षा की।

"आपको स्मरण करनेके प्रभावसे ही वनवासके समय ऋषि दुर्वासाके भयसे आपने पाण्डवोंकी रक्षा की।

"हे प्रभो! आपने इनका उद्धार किया, इसमें अति आश्चर्यकी बात नहीं है, क्योंकि ये सभी आपमें अनुरक्त थे। अति आश्चर्यका विषय तो आपके द्वारा किया गया अजामिलका उद्धार है। अजामिल तो भक्त भी नहीं था। ऐसा कोई पाप नहीं था, जो उसने न किया हो। यमदूतोंके द्वारा पकड़े जानेकी आशङ्कासे पुत्र-दर्शनके लिए जब उसने नारायण-नाम उच्चारित किया, उस समय पुत्रकी असमर्थता तथा दूतोंकी बलवत्ताको देखकर भगवान्‌की कथा और उनके चरित्र अजामिलके स्मरण-पथपर उदित हुए थे। यद्यपि पुत्रनाम-उच्चारणके उद्देश्यसे उसके मुखसे 'नारायण' शब्द उक्त हुआ था, तथापि 'नारायण' शब्दमें भगवान्‌का उद्देश्य

(निहित) होनेके कारण ऐसे नाम-उच्चारणके द्वारा भगवत्-स्मृतिके फलस्वरूप ही उसे यमदूतोंसे छुटकारा मिला था। फिर भी मृत्युके समय यमदूतोंके भयसे उसके मुखसे अपना नाम सुनकर, जो कि उसने अपने पुत्रके उद्देश्यसे लिया था, तुरन्त आपने अपने दूतोंको भेज दिया तथा अजामिलको यमदूतोंके चङ्गुलसे बचाया।

श्रील हरिदास ठाकु
गौरभक्तिकी अयोग्यताका ज्ञापन

"प्रभो! अजामिलने आपका दूरसे ही स्मरण किया था, किन्तु मुझमें स्मरणकी योग्यता भी नहीं है। यद्यपि मैं पूर्ण रूपसे आपके स्मरणसे रहित हूँ, तथापि आपने कृपा करके मुझे परित्याग नहीं किया, यही आपकी अहैतुकी दयाका परिचय है। अन्यथा मुझमें ऐसी योग्यता कहाँ थी कि आपका दर्शन भी कर पाता। हे प्रभु! आप मुझे अपने दर्शनोंसे कभी वञ्चित न करना, आपसे मेरी केवलमात्र यही प्रार्थना है। इसके अतिरिक्त मैं और कु

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा हरिदास ठाकु
करनेके लिए आदेश

श्रील हरिदास ठाकु
बोले—"हरिदास! तुम माँगो-माँगो, तुम्हें क्या चाहिये? ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो मैं तुम्हें नहीं दे सकता। मेरा जो कु
है, वह सब तुम्हारा ही है।"

श्रील हरिदास ठाकु
वैष्णव-उच्छिष्टकी प्रार्थना

श्रील हरिदास ठाकु
लगे—"प्रभो! मैं तो सौभाग्यहीन हूँ, परन्तु मेरे मनकी आशा बहुत बड़ी है।

"तोमार चरण भजे जे–सकल दास।
तार अवशेष जेन हय मोर ग्रास॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/८६)

"आपके दास जो सर्वदा आपके श्रीचरणोंकी सेवामें संलग्न रहते हैं, उनका अवशिष्ट ही मेरा भोजन हो। अर्थात् मैं आपके भक्तोंका उच्छिष्ट भोजी दास बन पाऊँ।

"सेइ से भजन मोर हउ जन्म जन्म।
सेइ अवशेष मोर—क्रिया–कु
(चै॰ भा॰ म॰ १०/८७)

"मैं मुक्ति नहीं चाहता हूँ, जन्म–जन्मान्तरमें मैं वैष्णवोंका सेवक बनकर रहूँ, यही मेरी अभिलाषा है। वैष्णवोंका उच्छिष्ट भोजन ही मेरे द्वारा किये जानेवाले सभी कार्योंमें मुख्यता प्राप्त करे। वैष्णवकु

अर्थात् वैष्णवोंका अवशेष ग्रहण करना ही मेरा जन्म–जन्मान्तरका कार्य हो। वैदिक अनुष्ठानोंको ही जो कु

विश्वास करते हैं तथा आनुष्ठानिक वैदिक क्रियाको ही जो बहुमानन करते हैं, हे प्रभो! ऐसी कृपा करना, उनके जैसी आशाएँ मुझे कभी भी विचलित न कर पाये। वैसे वैदिक अनुष्ठान जागतिक अहङ्कारकी ही पुष्टि करते हैं तथा गौणी क्रियाके अन्तर्गत है। मुख्य अनुष्ठान तो वैष्णवोंका उच्छिष्ट–भोजन है।

"तोमार स्मरणहीन पापजन्म मोर।
सफल करह दासोच्छिष्ट दिया तोर॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/८८)

"आपके स्मरणसे विहीन मेरे पापिष्ठ जीवनको अपने दासोंका उच्छिष्ट प्रदानकर सफल बना दीजिये।

श्रील हरिदास ठाकु

प्राप्तिमें 'अयोग्य' मानकर अपराधी समझना

"मैं बड़ा दाम्भिक हूँ, इसलिए आपसे तृणसे भी सुनीच, तरुकी भाँति सहनशील और अमानी–मानद होनेकी अतुलनीय सम्पत्तिके लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि उसे प्राप्त करनेकी योग्यता भी मुझमें नहीं है। वैष्णवोंका उच्छिष्ट–भोजी होना तो ब्रह्मा आदिका भी परमाऽभीष्ट विषय है। उस विषयको प्राप्त करनेके लिए मैंने अपनी इच्छा व्यक्त की है। लगता है, यह कहकर मुझसे अपराध हो गया है। हे प्रभो! हे नाथ! हे विश्वम्भर! मैं जीवित अवस्थामें भी मृततुल्य अर्थात् बुद्धिहीन हूँ। आप मेरा अपराध क्षमा कीजिये।

श्रील हरिदास ठाकु

कु

"शचीर नन्दन, बाप, कृपा कर मोरे।

कु

(चै॰ भा॰ म॰ १०/९१)

"हे शचीनन्दन! हे प्रभो! आप कृपा करके मुझे अपने भक्तके घरका कु

मालिक घरकी रखवालीके लिए पशुजातीय कु

वेतन देकर घरकी रखवालीमें नियुक्त करता है, उसी प्रकार श्रीकृष्णके संसारमें वैष्णवके घर मुझे प्रतिष्ठित कीजिये।"

ऐसा कहते–कहते श्रील हरिदास पूर्ण रूपसे प्रेमभक्तिमें तन्मय हो गये। दीनतापूर्वक बार–बार विनय करनेपर भी उन्हें तृप्ति नहीं हो रही थी।

श्रीमन् महाप्रभुकी श्रील हरिदास ठाकु

प्रभु बले,—"शुन शुन मोर हरिदास।
दिवसेको जे तोमार सङ्गे कैल वास॥
तिलार्द्धेको तुमि जार सङ्गे कह कथा।
से अवश्य आमा पाबे, नाहिक अन्यथा॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/९३-९४)

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—"मेरे हरिदास! सुनो! तुम जगत्के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष हो। तुम्हारे साथ तुम्हारे दासके रूपमें यदि कोई भक्त एकदिन भी वास करे अथवा तुम कृपा करके बहुत थोड़े समयके लिए यदि किसीके साथ बातचीत करो, तो उसे भी अवश्य ही भगवान्के चरणकमलोंकी सेवाकी प्राप्ति होगी। इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है।

"तोमारे जे करे श्रद्धा, से करे आमारे।
निरन्तर थाकि आमि तोमार शरीरे॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/९५)

"तुम्हारे प्रति श्रद्धा करनेवाला व्यक्ति ही वास्तवमें मेरे प्रति श्रद्धालु कहलायेगा, क्योंकि मैं सदैव तुम्हारे शरीरमें वास करता हूँ।

"तुमि—हेन सेवके आमार ठाकु
तुमि मोरे हृदये बान्धिला सर्वकाल॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/९६)

"तुम्हारे जैसे सेवकोंके कारण ही मेरी 'ठाकु
होती है। चिन्मय हरिरससे विभावित होनेके कारण तुमने सदा-सर्वदाके लिए मुझे अपने हृदयमें बाँध लिया है।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
अपराधशून्य भक्तिका वरदान

श्रील हरिदास ठाकु

करके तथा उनके भक्तिमय भावोंको देखकर प्रभु कहने लगे—

"मोर स्थाने, मोर सर्व-वैष्णवेर स्थाने।
बिना अपराध भक्ति दिल तोरे दान॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/९७)

"हरिदास! मैं तुम्हें भजन करनेका अधिकार प्रदान कर रहा हूँ। तुम्हारा किसी भी दिन मेरे प्रति और वैष्णवोंके प्रति कोई अपराध नहीं होगा। तुम सदैव अपराधसे मुक्त रहकर केवलाभक्ति करते हुए कृष्णानुशीलन करते रहो—श्रीकृष्णके भक्तोंका अनुसरण करते रहो। तुमने मेरे अथवा वैष्णवोंके प्रति कोई अपराध नहीं किया है, इसीलिए मैंने तुम्हें कृष्णसेवाकी प्रवृत्ति प्रदान की है।"

सत्-क्रियाओंके द्वारा कृष्णसेवाकी प्राप्ति दुर्लभ, वह तो केवल प्रीति द्वारा ही सुलभ

महाप्रभुके श्रीमुखसे श्रील हरिदासके प्रति ऐसा वरदान सुनकर वैष्णववृन्द आनन्दसे 'हरि-हरि' ध्वनि करने लगे। इस प्रसङ्गका उपसंहार करते हुए श्रील वृन्दावन दास ठाकु
लिखते हैं—

"जाति, कु
प्रेमधन, आर्त्ति बिना ना पाइ कृष्णेरे॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/९९)

"जाति, कु
होता अर्थात् इनसे श्रीकृष्णकी प्राप्ति नहीं हो पाती। श्रीकृष्णको तो प्रेमरूपी धन और आर्त्तिके बिना कोई भी प्राप्त नहीं कर सकता।

"जे ते कु
तथापिह सर्वोत्तम सर्वशास्त्रे कहे॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/१००)

“जिस किसी कु
तथापि वैष्णव सर्वश्रेष्ठ है, ऐसा सभी शास्त्र कहते हैं। जीवकी नित्य-प्रयोजनीय वस्तु—कृष्णप्रेम है। उस प्रेममें अधिकार प्राप्त होनेसे जागतिक नीचता, स्वल्पता (निर्धनता, कु
कर पाती।

“एइ तार प्रमाण-यवन हरिदास।
ब्रह्मादिर दुर्लभ देखिल परकाश॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०१)

“इसका प्रमाण अहिन्दु-कु
ठाकु
जो ब्रह्मा आदिके लिए भी दुलर्भ है।

वैष्णवोंमें जाति-बुद्धि करनेसे अधोगति

“जे पापिष्ठ वैष्णवेर जातिबुद्धि करे।
जन्म-जन्म अधम योनिते डुबि’ मरे॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०२)

“जो पापी वैष्णवोंमें जातिबुद्धि करता है, उसे जन्म-जन्मान्तर अधम योनियोंमें डूबना पड़ता है।

श्रील हरिदास ठाकु
प्राप्तिके उपाख्यानको श्रवण करनेका फल

“हरिदास स्तुति-वर शुने जेइ जन।
अवश्य मिलिबे तारे कृष्णप्रेमधन॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०३)

“जो व्यक्ति श्रील हरिदास ठाकु
श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा उनके प्रति दिये गये वरदानके विषयमें श्रवण करेगा, उसे अवश्य ही कृष्णप्रेमधनकी प्राप्ति होगी।

"ए वचन मोर नहे, सर्वशास्त्रे कय।
भक्ताख्यान शुनिले कृष्णेते भक्ति हय॥

(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०४)

"ऐसा मैं ही नहीं, बल्कि सभी शास्त्र कहते हैं कि भक्तोंका चरित्र श्रवण करनेसे श्रीकृष्णभक्तिकी प्राप्ति होती है।

श्रील हरिदास ठाकु

"महाभक्त हरिदास ठाकु
हरिदास स्मरणे सर्व–पापक्षय॥

(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०५)

"महान भक्त श्रील हरिदास ठाकु
श्रील हरिदासका स्मरण करनेसे सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

श्रील हरिदास ठाकु

"केह बले,—'चतुर्मुख जेन हरिदास।'
केह बले,—'प्रह्लादेर जेन परकाश॥'

सर्वमते महाभागवत हरिदास।
चैतन्य गोष्ठीर सङ्गे जाहार विलास॥

(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०६–१०७)

"कोई–कोई कहते हैं कि श्रील हरिदास चतुर्मुख–ब्रह्मा हैं, तो कोई मानते है कि वे श्रीप्रह्लादके प्रकाश हैं। किन्तु इसमें सभीका एक ही मत है कि श्रीमन् महाप्रभुके पार्षदोंके साथ विहार करनेवाले श्रील हरिदास ठाकु

**ब्रह्मा–शिवके द्वारा भी श्रील हरिदास ठाकु
सङ्ग वाञ्छनीय**

"ब्रह्मा, शिव, हरिदास हेन भक्तसङ्ग।
निरवधि करिते चित्तेर बड़ रङ्ग॥

(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०८)

"सर्वलोक-पितामह ब्रह्मा तथा सर्व-संहारक शिव आदिके हृदयमें भी निन्तर श्रील हरिदास ठाकु
करनेकी इच्छा रहती है।

"हरिदास स्पर्श वाञ्छा करे देवगण।
गङ्गाओ वाञ्छेन हरिदासेर मज्जन॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/१०९)

"देवतालोग भी श्रील हरिदास ठाकु
करनेकी अभिलाषा रखते हैं। पतितपावनी गङ्गादेवी भी यही इच्छा करती है कि हरिदास मुझमें स्नान करे।

श्रील हरिदास ठाकु

"स्पर्शेर कि दाय, देखिलेइ हरिदास।
छिण्डे सर्व-जीवेर अनादि कर्मपाश॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/११०)

"स्पर्शका तो कहना ही क्या, श्रील हरिदास ठाकु
देखनेमात्रसे ही जीवोंके अनादि कर्मबन्धन छूट जाते हैं।

श्रीप्रह्लाद तथा श्रीहनुमानकी भाँति श्रील हरिदास ठाकु वैष्णवता भी स्वतः सिद्ध

"प्रह्लाद जे-हेन दैत्य, कपि हनुमान।
एइ मत हरिदास 'नीचजाति' नाम॥
(चै॰ भा॰ म॰ १०/१११)

"कहनेको जैसे प्रह्लादजी 'दैत्य' और हनुमानजी 'कपि' हैं, वैसे ही श्रील हरिदास ठाकु
यवन-जाति' के हैं।"

त्रयोदश अध्याय

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
प्रचार करनेका आदेश

श्रीचैतन्यदेवके प्राकट्यके समय श्रीनवद्वीपमें मुख्यतः आर्य-आचारयुक्त हिन्दु तथा यावनिक-आचारसम्पन्न अहिन्दुओंका वास था। इसलिए दोनों धर्मोंमें विश्वास सम्पन्न व्यक्तियोंको यह सन्देश देनेके लिए कि 'भगवद्भक्तिमें दोनोंका ही एक समान अधिकार है' श्रीमन् महाप्रभुने प्रत्यक्ष प्रमाणस्वरूप ब्राह्मणकु
(मुस्लिम) कु
दिया—

"शुन शुन नित्यानन्द, शुन हरिदास।
सर्वत्र आमार आज्ञा करह प्रकाश॥

प्रति घरे घरे गिया कर एइ भिक्षा।
'बल कृष्ण, भज कृष्ण, कर कृष्ण शिक्षा'॥

इहा वइ आर ना बलिबा, बलाइबा।
दिन-अवसाने आसि' आमारे कहिबा॥

तोमरा करिले भिक्षा, जेइ ना बलिब।
तबे आमि चक्रहस्ते सबारे काटिब॥

(चै॰ भा॰ म॰ १३/८-११)

"सुनो, सुनो नित्यानन्द! सुनो, हरिदास! तुम दोनों मेरे आदेशानुसार वर्णाश्रमसे बाहर, वर्णाश्रमके पालनमें रत तथा वर्णाश्रमसे अतीत—सभी प्रकारके लोगोंके घरोंमें जाओो तथा

उनसे यह भिक्षा माँगो कि 'हे भाइयो! आपलोग कृपाकर 'कृष्ण-कृष्ण' बोलो अर्थात् कृष्णनामका कीर्त्तन करो। कृष्णका भजन करो अर्थात् कीर्त्तन द्वारा कृष्णकी सेवा करो तथा कृष्णकी शिक्षामें शिक्षित होओ।' इस प्रकारकी भिक्षा माँगनेके अतिरिक्त तुमलोग किसीसे भी अन्य किसी भी प्रकारकी भिक्षा मत माँगना और किसीको भी अन्य प्रकारकी शिक्षा मत देना। दिनके समय जीवोंके मङ्गलकी कामनासे पूर्वकथित भिक्षा माँगना तथा सन्ध्याके समय आकर मुझे सब कु

चेष्टा कर रहो हो, ऐसा जानकर मुझे बहुत अधिक प्रसन्नता होगी। यह वास्तवमें मेरा ही कार्य है, मैं अपने दाँये तथा बाँये हाथ स्वरूप तुम दोनोंके माध्यमसे यह कार्य सम्पन्न कराऊँगा। तुम्हारे भिक्षा माँगनेपर जो विमुख होंगे, मैं अपना सुदर्शन चक्र हाथमें लेकर उन्हें काट डालूँगा।"

प्रभुकी ऐसी आज्ञा सुनकर सभी वैष्णवलोग हँसने[१] लगे तथापि प्रभुकी आज्ञाका उल्लङ्घन करनेका सामर्थ्य किसका हो सकता है।

प्रभुकी आज्ञाके प्रति अविश्वास मूर्खता

हेन आज्ञा, जाहा नित्यानन्द शिरे बहे।
इथे अप्रतीत जार, से सुबुद्धि नहे॥

(चै॰ भा॰ म॰ १३/१३)

श्रीगौरसुन्दरकी ऐसी आज्ञा, जिसे साक्षात् श्रीनित्यानन्द प्रभु भी शिरोधार्य करते हैं, उसमें जिसका विश्वास नहीं है, वह व्यक्ति सुबुद्धिमान नहीं है।

---

[१] श्रीगौर-अवतारमें प्रभुकी प्रतिज्ञा है—"एबे अस्त्र न धरिबे, प्राणे कारे न मारिबे, चित्त-शुद्धि करिब सबार" अर्थात् वे इस अवतारमें न तो अस्त्र-धारण करेंगे तथा न ही किसीका वध करेंगे। बल्कि सबके चित्तको शुद्ध करेंगे। अतएव श्रीमन् महाप्रभुके मुखसे ऐसे संहार करने जैसे वचनको सुनकर सभी वैष्णव हँसने लगे।

श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
तत्क्षणात् प्रचार हेतु प्रस्थान

प्रभुके आदेशानुसार श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु

द्वारपर पहुँचते, घरके लोग उन्हें संन्यासी वेशमें देखकर भोजनके लिए आमन्त्रित करते। उस समय वे दोनों कहते—"भाइयो! हमें एकमात्र यही भिक्षा चाहिये कि आप सभी लोग 'कृष्ण-कृष्ण' बोलें, कृष्णका भजन करें तथा कृष्णकी मनोहर कथाओंको सुनें। कृष्ण ही प्राण, धन तथा जीवन है। अरे भाईयो! ऐसे कृष्णका एकान्तिक रूपसे नाम ग्रहण करो।" इस प्रकार वे घर-घर जाकर लोगोंसे हरिनाम करनेकी प्रार्थना करने लगे।

दोनों प्रभुओंके वचन सुनकर सज्जन व्यक्तियोंका आनन्द तथा अनेक लोगोंकी अनेक प्रकारकी कल्पना

जब वे किसी सज्जन व्यक्तिके घरपर पहुँचते, तो दोनों प्रभुओंके मुखसे ऐसी बात सुनकर वह सज्जन व्यक्ति अर्थात् भगवद्भक्त बहुत प्रसन्न हो जाता तथा हाथ जोड़कर कहने लगता—"हम अवश्य ही कृष्णभजन करेंगे।" उन दोनोंको देखकर कु

पण्डित स्वयं तो पागल हो ही गया है, सब काम काज छोड़कर रातदिन कृष्ण-कृष्ण कहता फिरता है, तथा उसने शान्त, शिष्ट, सज्जन आदि सभी व्यक्तियोंको भी पागल बना दिया है। उसका सङ्ग करनेसे तुम दोनों अच्छे-भले व्यक्ति भी पागल हो गये हो। किन्तु अब हमलोगोंको भी पागल बनानेके लिए क्यों आये हो? जब वे प्रचार करते-करते किसी ऐसे व्यक्तिके घरपर पहुँच जाते जो प्रभु श्रीगौरसुन्दरके कीर्त्तनके समय श्रीवास-अङ्गनके द्वार बन्द होनेके कारण घरके अन्दर प्रवेश नहीं कर पाया था, तो वह उन्हें देखते

ही मारनेके लिए तैयार हो जाता। कु
लगते—"ये दोनों चोर हैं। दिनके समय ये साधुके वेशमें घूम-घूमकर देख रहे हैं कि किस घरमें धन अधिक है और किस घरका मालिक घरपर नहीं है। पुनः रात्रिमें ये अपने अन्य साथियोंको लेकर आयेंगे और उस घरमें चोरी करके चले जायेंगे। अतः क्या इनके जैसा आचरण कोई सभ्य व्यक्ति कर सकता है? यदि ये दोबारा यहाँ आयेंगे, तो हम इन्हें धर्माधिकारियोंके पास पकड़कर ले जायेंगे।"

भिन्न-भिन्न लोगोंकी भिन्न-भिन्न बातें सुनकर वे दोनों हँसते-हँसते आगे चले जाते तथा श्रीचैतन्यदेवकी आज्ञाके बलसे बिलकु
प्रचारके लिए निकल जाते और शामको आकर प्रभु विश्वम्भरको सारे दिनका वृत्तान्त सुनाते।

दोनों प्रभुओंके द्वारा दो अद्भुत शराबियोंका अवलोकन

एक दिनकी बात है। श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
रास्तेमें उन्होंने दो शराबियोंको देखा। उन दोनोंका स्वरूप बहुत ही भयानक था। उनकी आँखें नशेके कारण लाल-लाल हो रही थीं। शराब पीनेके कारण वे अपने होश-हवाश खो बैठे थे। उन्हें यह तक ज्ञान नहीं था कि वे क्या कर रहे हैं, क्या कह रहे हैं? कभी तो वे एक-दूसरेके गलेसे लिपट जाते तथा कभी एक-दूसरेके केश पकड़कर मारा-मारी करने लगते। कभी एक-दूसरेको गन्दी-गन्दी गालियाँ देने लगते।

दोनों शराबियोंके कु
श्रील हरिदास ठाकु

दोनों शराबियोंकी अवस्था देखकर श्रीनित्यानन्द प्रभुने आस-पासके लोगोंसे उन दोनोंके विषयमें पूछा—"ये दोनों

किस जातिके हैं तथा इनकी बुद्धि ऐसी कैसे हो गयी?"—यह सुनकर कु
तो ब्राह्मण हैं। इनके माता-पिताके कु
सम्मान था। इनके वंशमें लेशमात्र भी किसी प्रकारका कोई दोष नहीं था। परन्तु बचपनसे ही दुष्टोंका सङ्ग करनेके कारण इनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी तथा ये अनेक प्रकारके कु
परिवारवालोंने इन्हें घरसे बाहर कर दिया। तबसे ये लोग बिलकु
घूमने लगे। इस प्रकार पाप करते-करते ये ऐसे दुर्दान्त हो गये हैं कि आजकल इनका नाम सुननेमात्रसे ही लोग भयभीत हो जाते हैं। ये दोनों कभी भी किसीके भी घरमें आग लगा देते हैं। बलपूर्वक दूसरोंकी वस्तुओंका अपहरण करते हैं। ऐसा कोई पाप नहीं है, जो ये दोनों नहीं करते। चोरी-डकैती करते हैं और ब्राह्मण होकर भी गायका माँस खाते हैं।"

दोनों शराबियोंकी दुरावस्थाका श्रवण करके श्रीनित्यानन्द प्रभुके द्वारा उनके उद्धारका उपाय सोचना

दोनोंका वृत्तान्त सुनकर नित्यानन्द प्रभुको उनपर बहुत दया आ गयी। वे मन-ही-मन उनके उद्धारके विषयमें विचार करने लगे—"पापियोंका उद्धार करनेके लिए ही तो मेरे प्रभु श्रीगौरसुन्दरका आविर्भाव हुआ है। इन दोनोंके जैसे पापी और कहाँ मिलेंगे? मेरे प्रभु अपना प्रभाव छिपाकर रखते हैं, इसलिए लोग उनके प्रभावको नहीं जाननेके कारण उनका उपहास करते हैं। यदि मेरे प्रभु ऐसे पापियोंका उद्धार कर दें, तो उनका अलौकिक प्रभाव सारा संसार देखेगा। इस प्रकार जो दुर्भागे लोग मेरे प्रभुकी महिमा न जानकर उन्हें साधारण मनुष्य मानकर उनके श्रीचरणोंमें अपराध करते हैं,

वे भी प्रभुकी महिमा देखकर प्रभुके श्रीचरणोंमें शरणागत हो जायेंगे। जब मैं इन दोनोंमें चैतन्यका प्रकाश करा सकूँगा, तभी मैं नित्यानन्द श्रीचैतन्य महाप्रभुका दास कहलाऊँगा। ये लोग जैसे अभी अपने आपको भूलकर मत्त हो रहे हैं, यदि ये दोनों इसी प्रकार मत्त होकर श्रीकृष्णके नामका उच्चारण करें तथा 'मेरे प्रभु' ऐसा कहकर क्रन्दन करें, तभी मेरा भ्रमण करना सार्थक होगा। जो-जो व्यक्ति इन दोनोंकी छायाको स्पर्श करनेमात्रसे ही वस्त्र सहित गङ्गामें जाकर स्नान करते हैं, यदि वे सभी इन दोनोंके दर्शनको ही गङ्गा-स्नानके बराबर मानें, तभी मेरा नाम सार्थक होगा।"

श्रीनित्यानन्द प्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु अपने मनके भावोंका ज्ञापन तथा दोनों शराबियोंके उद्धार हेतु श्रील हरिदास ठाकु

ऐसा विचारकर श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रील हरिदास ठाकु बोले—"हरिदास! देखो तो इन दो ब्राह्मणोंकी अवस्था। ब्राह्मणकु

रही है। इनका जैसा व्यवहार है, उसे देखकर तो लगता है कि यमराजके चङ्गुलसे इनका उद्धार सम्भवपर नहीं है। हे हरिदास! जब दुष्ट यवनोंने आपको जानसे मारनेकी चेष्टा की थी, तब आपने उनके कल्याणके लिए प्रभुसे प्रार्थना की थी। क्या आज इन दोनोंकी दुर्गति देखकर आपका हृदय द्रवित नहीं हो रहा है?

"यदि तुमि शुभानुसन्धान कर मने।
तबे से उद्धार पाय ऐई दुईजने॥
तोमार सङ्कल्प प्रभु ना करे अन्यथा।
आपने कहिला प्रभु ऐई तत्त्वकथा॥
(चै॰ भा॰ म॰ १३/६६-६७)

"आप यदि इनके लिए मनमें शुभकामना करें, तो इन दोनोंका भी उद्धार हो सकता है। क्योंकि आपके सङ्कल्पको प्रभु अन्यथा नहीं करते—यह बात प्रभुने स्वयं ही कही है।

"इसलिए यदि आप इन दोनोंपर कृपा करनेके लिए प्रभुसे प्रार्थना करें, तो प्रभु आपकी प्रार्थना अवश्य ही सुनेंगे तथा इन दोनों दुर्भागोंका उद्धार कर देंगे।

"पुराणोंमें जैसे अजामिल-उद्धारके विषयमें वर्णन किया गया है, आज उसी प्रकारकी एक और घटनाको तीनों भुवन साक्षात् रूपसे देखें। इनके उद्धारसे हमारे प्राणनाथ श्रीगौरसुन्दरका प्रभाव सभी लोग देख पायेंगे।"

दोनों शराबियोंके उद्धारमें श्रील हरिदास ठाकु
विश्वास तथा दैन्यसूचक उत्तर प्रदान

श्रील हरिदास ठाकु
प्रकारसे जानते थे कि ये साक्षात् बलदेव प्रभु ही हैं। अतः उन्हें विश्वास हो गया कि जब इनकी इच्छा इन दो शराबियोंका उद्धार करनेकी हो ही गयी है, तब तो इन दोनोंका उद्धार हो ही गया है। ऐसा विचारकर श्रील हरिदास ठाकु
अवश्य ही प्रभुकी भी वैसी ही इच्छा है। आप जो मुझे भगवान्से इनके लिए प्रार्थना करनेके लिए कह रहे हैं, वह तो आपकी दीनता है। वास्तवमें तो आप इसके द्वारा यही शिक्षा दे रहे हैं कि कैसे स्वयं सर्वसमर्थ होनेपर भी महापुरुष अन्य सभीको सम्मान प्रदान करते हैं। परन्तु मैं तो पशुके समान हूँ, मुझमें हिताहितका विवेक नहीं है। आपकी बात सुनकर यदि मैं अपने आपको वैष्णव समझने लगूँ और मेरे आवेदनसे दयामय श्रीकृष्ण दोनों पापियोंका उद्धार करेंगे—ऐसा समझ लूँ, तो इससे मेरा पशु होना ही सिद्ध होगा। यद्यपि मैं हिताहितके विवेकसे रहित पशु हूँ, तथापि मेरे समक्ष

स्वयंको छिपाये रखनेका आपका यह कार्य—मेरे पशुत्वका ही ज्ञापकमात्र है। मैं कृष्ण-विस्मृत जीव हूँ, अतएव मेरे स्वरूपको प्रकाशित कराकर मुझे भगवान्‌की सेवामें नियुक्त करनेके उद्देश्यसे ही आप अपने व्यवहारके द्वारा मुझे अनेक शिक्षाएँ प्रदान कर रहे हैं।"

सज्जनोंके निषेध करनेपर भी श्रीमन् महाप्रभुकी आज्ञाका पालन करने हेतु श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
गमन और प्रभुकी आज्ञाका प्रचार

श्रील हरिदास ठाकु
प्रभुने उन्हें आलिङ्गन दान दिया तथा अति कोमल वाणीमें बोले—"प्रभुके जिस आदेशको लेकर हम सर्वत्र भ्रमण कर रहे हैं, अपने दयामय प्रभुका वह आदेश हम इन दोनोंको भी सुनाते हैं अर्थात् हरिनाम करनेके लिए इनसे भी कहते हैं। यद्यपि ये दोनों बहुत बड़े पापी हैं, अतः हमारे कहनेसे ये हरिनाम करेंगे या नहीं इसमें सन्देह है, परन्तु हमें तो अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिए इन्हें हरिनाम सुनाना ही होगा। फिर ये बोलें या नहीं इनकी इच्छा।" ऐसा कहकर श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीहरिदास ठाकु
पापियोंको हरिनाम सुनानेके लिए चल दिये।

आस-पासके लोगोंने उन्हें बहुत समझाया कि उन दुष्टोंके पास जानेपर तुम्हारे प्राण सङ्कटमें पड़ जायेंगे। इनकी आवाज सुनकर घरके अन्दर बैठे होनेपर भी हमारे प्राण सूख जाते हैं, और तुम पता नहीं कैसे साहसी हो कि उनके पास जा रहे हो। अरे भाई! उन लोगोंको संन्यासी आदिका कोई ज्ञान नहीं है। वे तो जब ब्राह्मणों और गैयाओं तककी हत्या कर देते हैं, तब तुम उनके लिए क्या हो। परन्तु ये दोनों माने नहीं और 'कृष्ण-कृष्ण' कहते हुए उन दोनोंके पास पहुँच गये।

जगाई तथा माधाईका वैष्णव-अपराधशून्य चरित्र

श्रीवृन्दावन दास ठाकु

"सर्वपाप सेई दुईर शरीरे जन्मिल।
वैष्णवेर निन्दा-पाप सबे ना हइल॥

अहर्निश मद्यपेर सङ्गे-रङ्गे थाके।
नहिल वैष्णव-निन्दा एइ सब पाके॥

(चै॰ भा॰ म॰ १३/३९-४०)

"जितने भी पाप हैं, वे सब उन दोनोंकी देहमें प्रकट थे, केवल वैष्णवोंके निन्दारूपी पाप (अपराध) से वे बचे हुए थे। वे दिन-रात शराबियोंके ही सङ्ग-रङ्गमें रहते थे, इसलिए उनके द्वारा किसी वैष्णवकी निन्दा नहीं हुई।"

जिन सब वस्तुओंको देखनेमें स्थूलदर्शी कभी भी समर्थ नहीं हो सकते, सूक्ष्मदर्शी श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु

भलीभाँति जान लिया कि महापापी होनेपर भी ये दोनों वैष्णव-अपराधी नहीं है।

श्रील वृन्दावन दास ठाकु

"जे सभाय वैष्णवेर निन्दामात्र हय।
सर्व-धर्म थाकिलेओ तबु हय क्षय॥

सन्यासि-सभाय यदि हय निन्दा-कर्म।
मद्यपेर सभा हैते से सभा अधर्म्म॥

(चै॰ भा॰ म॰ १३/४१-४२)

"जिस सभामें वैष्णवोंकी निन्दा होती है, सब धर्मोंके रहते हुए भी उसका नाश हो जाता है। संन्यासियोंकी सभामें यदि वैष्णवोंकी निन्दा होती है, तो वह शराबियोंकी सभासे भी अधिक अधर्म जनक सभा है।"

जगाई तथा माधाई नामक दो शराबियोंके निकट जाकर श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु

शिक्षा दी कि प्रभुकी आज्ञाका पालन करनेवालोंको कभी भी वैष्णव-निन्दुओंकी अधार्मिक सभामें नहीं बैठना चाहिये। इसका कारण है कि—

मद्यपेर निष्कृति आछये कोन काले।
पर चर्चकेर गति नहे कभु भाल॥
(चै॰ भा॰ म॰ १३/४३)

शराबियोंका उद्धार तो फिर भी सम्भवपर है, परन्तु दूसरों, उसपर भी वैष्णवोंकी निन्दा करनेवालेकी गति तो कभी भी अच्छी नहीं हो सकती।

अतएव उपरोक्त सब बातोंपर विचार करके ही श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
ही खड़े होकर कहने लगे—"अरे भाइयो! तुम दोनों ही 'कृष्ण-कृष्ण' बोलो, श्रीकृष्णका भजन करो, क्योंकि श्रीकृष्ण ही सबके माता-पिता, धन और प्राण हैं। तुम्हारे जैसे लोगोंका कल्याण करनेके लिए ही भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका अवतार हुआ है। अतः तुमलोग पापकर्मोंको त्यागकर उनका भजन करो।"

जगाई और माधाईका क्रोधित होकर दोनोंके पीछे दौड़ना तथा श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु भयपूर्वक भागनेका अभिनय

जैसे ही जगाई और माधाईने श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
उठाकर उन्हें देखा। क्रोधसे उन दोनोंकी आँखें लाल हो गयीं। अपने सामने दो लोगोंको खड़ा देखकर वे दोनों अत्यन्त क्रोधित होकर श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु
आते हुए देखकर श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु वहाँसे भाग खड़े हुए। परन्तु वे दोनों 'ठहरो! ठहरो!' कहकर

इन दोनोंके पीछे दौड़ने लगे। आगे श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु
गाली-गलौज करते हुए वे दोनों दुष्ट उन्हें पकड़नेके लिए दौड़ रहे थे। उन्हें इस प्रकार अपने पीछे दौड़ते देखकर श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीहरिदास ठाकु
होकर और भी तेजीसे दौड़नेका प्रयास करने लगे।

सज्जनोंके मनमें भय तथा पाषण्डियोंकी हास्यसूचक उक्ति

उन्हें इस प्रकारसे दौड़ते देखकर आस-पासके सज्जन लोग आपसमें कहने लगे—"हमने पहले ही इन्हें मना किया था, परन्तु ये माने नहीं। अब ये दोनों बड़े सङ्कटमें पड़ गये हैं"—ऐसा कहकर वे लोग भयभीत होकर उनकी रक्षाके लिए भगवान्से प्रार्थना करने लगे। जितने पाषण्डी लोग थे, वे आनन्दपूर्वक हँस रहे थे तथा कह रहे थे—"भगवान्ने इन दोनों ढोंगियोंको अच्छा दण्ड प्रदान किया।" इधर वे दोनों शराबी पीछे-पीछे दौड़ रहे थे, उधर वे दोनों ठाकु
आगे-आगे भागे जा रहे थे। वे दोनों दुष्ट 'पकड़ा, अभी पकड़ा' कहते जा रहे थे, पर श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु

श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
जगाई-माधाईकी उक्ति तथा दोनों प्रभुओंके द्वारा रक्षा हेतु भगवान्से प्रार्थना

श्रीनित्यानन्द प्रभुने कहा—"मैंने सोचा था कि हम जगाई-माधाईको कृष्ण नामका उपदेश देकर वैष्णव बना देंगे, किन्तु अब यह सोचना तो दूरकी बात है, यदि हमारे प्राण भी बच गये तो जानना कि सबकु

श्रील हरिदास ठाकु
करनेसे क्या लाभ है? ऐसे लोगोंको श्रीकृष्णके विषयमें उपदेश देकर वैष्णव बनानेकी तुम्हारी बुद्धिके कारण आज

हम मृत्युके मुखमें जा पड़े हैं। अश्रद्धालु व्यक्तियोंको हरिनाम देनेसे अपराध होता है। हमनें शराबियोंको जो कृष्ण-भजनका उपदेश दिया, उसीका उचित दण्ड मिल रहा है। हे भगवान्, केवल जान बच जाये।" परस्पर ऐसे कहते हुए दोनों प्रभु हँसते-हँसते भागे जा रहे थे और वे दोनों शराबी भी तर्जन-गर्जन करते हुए उनके पीछे-पीछे दौड़ रहे थे।

दोनों शराबियोंका शरीर मोटा था, वे ठीकसे दौड़ नहीं पा रहे थे, फिर भी लड़खड़ाते हुए तेजीसे दौड़कर दोनों प्रभुओंको पकड़नेकी चेष्टा कर रहे थे। दोनों शराबी बोले—"अरे भाईयो! भागकर कहाँ जाओगे? जगाई-माधाईके हाथसे आज कैसे छूट पाओगे? क्या तुमलोग नहीं जानते थे कि ये जगाई-माधाई हैं, अरे! जरा रुककर पीछे मुड़कर तो देखो।"

उनकी बातोंको सुनकर दोनों प्रभु डरसे "हे कृष्ण! रक्षा करो! हे कृष्ण रक्षा करो! हे गोविन्द!" कहते हुए भागे चले जा रहे थे। श्रीनित्यानन्द प्रभु युवा होनेके कारण छलाँग मारते हुए दौड़ रहे थे, परन्तु श्रील हरिदास ठाकु
अधिक थी तथा उनका शरीर भी कु
वे तेजीसे दौड़ नहीं पा रहे थे।

दोनों प्रभुओंमें परस्परके प्रति दोषारोपण द्वारा आनन्द-कलह

दौड़ते-दौड़ते हरिदास ठाकु
देते हुए कहने लगे—"मैं अधिक तेज दौड़ नहीं सकता हूँ, ऐसा जानकर भी न जाने क्यों मैं जान-बूझकर इस चञ्चल स्वभावके व्यक्तिके साथ मरनेके लिए आ गया। कु
पहले ही भगवान् श्रीकृष्णने यवनोंके हाथोंसे मेरी रक्षा की है। परन्तु आज इस चञ्चलकी बुद्धिके दोषके कारण मेरे प्राण फिरसे भयानक सङ्कटमें पड़ गये हैं।"

श्रील हरिदास ठाकु
श्रीनित्यानन्दप्रभु मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहने लगे—“मैं चञ्चल नहीं हूँ। आप स्वयं विचार करें कि आज जो विकट स्थिति हमारे सामने आ पड़ी है, उसके लिए उत्तरदायी कौन है? इसके लिए स्वयं तुम्हारे प्रभु श्रीगौरसुन्दर ही उत्तरदायी हैं। प्रभुकी विह्वलताको देखकर ही मैं चञ्चल बना हूँ, नहीं तो, मैं चञ्चल थोड़े ही न हूँ। महाप्रभु—भिक्षुक ब्राह्मण हैं। उन्होंने ही राजाकी भाँति प्रत्येक घरमें हरिनाम प्रचार करनेके लिए आदेश दिया है, उन्हींकी आज्ञाका पालन करनेके लिए ही तो हम लोगोंके घर-घर जाकर लोगोंको भगवान्‌का नाम सुनाते हैं। आज्ञा भी तो उनकी ऐसी अनोखी है जो कि कहीं नहीं सुनी जाती। उनकी आज्ञाका पालन करनेके बदलेमें हमें क्या मिलता है। कोई हमें चोर कहता है, तो कोई ढोंगी। ऐसेमें यदि उनका आदेश पालन करें, तो ऐसी ही विपत्तियाँ आती हैं और यदि पालन न करें तो वे रुष्ट होते हैं। और आप हैं कि सारा दोष मुझपर लगा रहे हैं, आपको अपने प्रभुका दोष दिखायी ही नहीं दे रहा है।”

दोनों प्रभुओंका महाप्रभुके घरमें प्रवेश तथा जगाई-माधाईका वृत्तान्त

इस प्रकार वे दोनों प्रेमकलह करते हुए भाग रहे थे। पीछे-पीछे वे दोनों शराबी भी गिरते-पड़ते दौड़ रहे थे। अन्तमें श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु
तेजीसे दौड़ते हुए महाप्रभुके घरमें घुस गये और वे दोनों शराबके नशेमें इधर-उधर दौड़ते ही रह गये। श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
रुक गये और अन्तमें उन दोनोंकी आपसमें ही ठन गयी। शराबके नशेमें दोनों यह नहीं जान पाये कि वे दोनों कहाँ

थे और अब कहाँ आ खड़े हुए हैं? थोड़ी देर बाद श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा हरिदास ठाकु
तो वे दोनों शराबी दिखायी नहीं दिये। न जाने वे कहाँ चले गये? तब शान्त होकर दोनों आपसमें गले लगकर मिले और हँसते हुए प्रभु विश्वम्भर जहाँ थे, वहाँ आये।

श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
महाप्रभुके निकट शराबियोंके वृत्तान्तका वर्णन

जब श्रीनित्यानन्द प्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु
निकट पहुँचे, उस समय महाप्रभु वैष्णवमण्डलीके बीच विराजमान थे तथा वहाँपर कृष्णचर्चा हो रही थी। महाप्रभु स्वयं सभाके बीचमें श्रीकृष्णतत्त्वका बड़े आनन्दके साथ वर्णन कर रहे थे, ऐसा लग रहा था मानों श्वेत द्वीपपति श्रीविष्णु अपने परिकरोंके साथ बैठे हों। ऐसे समय श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रील हरिदास ठाकु
सुनाना आरम्भ किया। उन्होंने कहा—"आज हमनें दो अनोखे जीव देखे हैं। वे हैं तो महा-शराबी, परन्तु अपने आपको ब्राह्मण कहते हैं। हम तो उनके कल्याणके लिए बोले—'कृष्ण नाम बोलो'। किन्तु वे तो हमें खदेड़ते-खदेड़ते यहाँ तक ले आये। आज तो बहुत भाग्यसे ही हमारे प्राण बचे हैं।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा दोनों शराबियोंके विषयमें जिज्ञासा तथा गङ्गादास और श्रीनिवास द्वारा उत्तर प्रदान

महाप्रभुने पूछा—"वे दोनों कौन हैं? उनका क्या नाम है? तथा ब्राह्मण होकर भी वे मद्यपान तथा दस्युवृत्ति करने जैसे घृणित कार्य क्यों करते हैं?" तब गङ्गादास तथा श्रीनिवास आचार्य उन दोनोंके विषयमें बताते हुए कहने लगे—"प्रभो! उन दोनोंका नाम जगाई-माधाई है तथा उन दोनोंका जन्म इसी नवद्वीपमें एक उच्च ब्राह्मणवंशमें हुआ है। परन्तु दुःसङ्गके कारण उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है और वे ऐसे

पापपूर्ण कार्य करने लगे हैं कि लोग उनके नामसे ही भयभीत हो जाते हैं। ऐसा कोई पाप नहीं है, जो वे नहीं करते हों। यहाँ तक कि वे गायका माँस भी खाते हैं। ऐसा कोई घर नहीं है, जहाँपर उन्होंने डकैती न डाली हो। प्रभो! उन दोनोंके पापोंका वर्णन करना बहुत ही कठिन है।"

जगाई तथा माधाईके विषयमें सुननेके उपरान्त महाप्रभुकी क्रोधपूर्ण उक्ति, श्रीनित्यानन्द प्रभुके द्वारा दोनोंके उद्धार हेतु प्रार्थना

यह सुनकर प्रभु कहने लगे—"यदि वे दोनों दुष्ट यहाँ आ गये, तो मैं उनके शरीरके टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगा।" यह सुनकर श्रीनित्यानन्द प्रभु कहने लगे—"आप उनके टुकड़े करें या न करें, मैं यह नहीं जानता, परन्तु मैं स्पष्ट कह देता हूँ कि जब तक वे दोनों यहाँ रहेंगे, तब तक मैं प्रचारमें कहीं भी नहीं जाऊँगा। आपकी महिमा तो तभी सार्थक होगी, यदि आप उन दोनोंके मुखसे 'कृष्ण-कृष्ण' उच्चारण करवा देंगे। धार्मिक लोग तो स्वाभाविक रूपमें ही भगवान्‌का नाम करते ही हैं। अतः उसमें आपकी क्या महिमा है। परन्तु ये दोनों पापके अतिरिक्त कु
जानते। यदि आप उन दोनोंको सुधारकर उन्हें कृष्णभक्ति प्रदान कर सकें, तभी मैं मानूँगा कि आप वास्तवमें ही पतितपावन हैं। हमारा उद्धार करनेमें आपकी जो कु
महिमा है, उससे कई गुणा अधिक महिमाकी सीमा उन दोनों पापियोंके उद्धारमें है।"

श्रीमन् महाप्रभु द्वारा जगाई तथा माधाईके उद्धार हेतु आश्वासन प्रदान और वैष्णवों द्वारा जयध्वनि

प्रभु विश्वम्भर हँसते हुए कहने लगे—"उनका उद्धार तो उसी क्षण हो गया था, जिस क्षण उन दोनोंने आपका दर्शन पाया था। फिर आपको उनके कल्याणकी इतनी चिन्ता लगी

हुई है, तो अतिशीघ्र ही कृष्ण उन दोनोंका उद्धार कर देंगे।" प्रभुकी यह वाणी सुनकर भक्तवृन्द आनन्दपूर्वक प्रभुकी जय-जयकार करने लगे। सभीको विश्वास हो गया कि अब उन दोनोंका उद्धार हो ही जायेगा।

श्रीअद्वैताचार्यके निकट श्रील हरिदास ठाकु श्रीनित्यानन्द प्रभुकी चञ्चलताका वर्णन

श्रील हरिदास ठाकु

मुझे श्रीनित्यानन्द प्रभु जैसे चञ्चलके साथ प्रचारमें भेज देते हैं। मैं जाता हूँ एक ओर तथा ये जाते हैं दूसरी ओर। कभी तो ये बरसातमें उफनती हुई गङ्गामें ही कूद पड़ते हैं तथा तैरते हुए मगरमच्छोंको पकड़नेका प्रयास करते हैं। मैं किनारेपर खड़ा होकर 'हाय! हाय!' कहकर चिल्लाता रहता हूँ। किन्तु ये हैं कि गङ्गामें ही तैरते रहते हैं। यदि मेरे बहुत चिल्लानेपर ये किनारेपर आ भी जाते हैं, तो फिर किनारेपर खेलते हुए बच्चोंको मारनेके लिए दौड़ते हैं। यह देखकर उनके माता-पिता जब डण्डा लेकर इन्हें मारनेके लिए आते हैं, तो उस समय उनके चरण पकड़कर बहुत मुश्किलसे मैं उन्हें समझा-बुझाकर वापस भेजता हूँ। कभी तो ये ग्वालोंका दूध-दही आदि ही लेकर भाग जाते हैं तथा वे लोग मुझे ही पकड़कर मारनेके लिए तैयार हो जाते हैं। हे आचार्य! यह तो कोई विशेष बात नहीं है, परन्तु कभी तो ये ऐसा कार्य कर बैठते हैं, जिसे बताते हुए भी मुझे लज्जा आ रही है। जब ये किसी कु

हैं कि तुम मुझसे विवाह करोगी। कभी किसी साँडकी पीठपर चढ़कर कहते हैं—'मैं शिव हूँ।' कभी दूसरोंकी गायोंका दूध निकालकर पी जाते हैं। जब मैं इन्हें ऐसा करनेसे मना करता हूँ, तो ये आपको गाली देते हुए कहते हैं कि 'तेरा वह अद्वैत मेरा क्या कर सकता है? और तुम

जिसे भगवान् कहते हो, वह चैतन्य ही मेरा क्या कर सकता है?' मैं ये सब बातें महाप्रभुसे कभी नहीं कहता हूँ, और आज तो दैवसे बहुत भाग्यसे प्राण बचे हैं। मार्गमें दो महा-शराबी नशेमें धुत पड़े हुए थे। ये महाशय उन्हें भी कृष्णनामका उपदेश करने लगे। वे शराबी कृष्णनाम तो क्या बोलते, उल्टे क्रोधित होकर हमें मारनेके लिए ही दौड़ पड़े। वह तो आपकी कृपा हुई कि आज किसी प्रकारसे हमारे प्राण बच सके।"

उत्तर प्रदान करते हुए श्रील अद्वैताचार्य प्रभुके द्वारा श्रीनित्यानन्द प्रभुकी निन्दाके बहाने स्तुति

यह सुनकर अद्वैताचार्य हँसते हुए कहने लगे—"इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। शराबीका शराबियोंसे सङ्ग हो गया। [अर्थात् श्रीनित्यानन्द प्रभु हरिरस मदिरापान करके मत्त हैं तथा जगाई-माधाई साधारण मदिरा पान करके मत्त हैं।] इसलिए इन तीनों शराबियोंका एक ही स्थानपर रहना उचित ही है। किन्तु जब तुम भगवन्निष्ठ हो, तब उनके निकट गमन करना तुम्हारा कर्त्तव्य नहीं है अर्थात् तुम डरो मत, तुम्हें उनमें जाकर मिलनेकी कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी, वही तुमसे आकर मिलेंगे। मैं नित्यानन्द प्रभुके चरित्रको भलीभाँति जानता हूँ। वे सभीको मतवाला कर देंगे। हरिदास, तुम दो-तीन दिन बाद ही देखना, वे उन दोनों शराबियोंको भी हमारी गोष्ठीमें ही ले आयेंगे।" ऐसा कहते-कहते श्रीअद्वैताचार्य प्रभुमें क्रोधका आवेश हो आया तथा वे दिगम्बर होकर बहुत कु

श्रीमन् महाप्रभुकी कृष्णभक्तिके विषयमें श्रवण करेंगे। सभी उनकी शक्तिको देखेंगे कि वे कैसे नाचते तथा कैसे गाते हैं। देखना, कल ही ये दोनों निमाई-निताई उन दोनों पियक्कड़ोंके साथ मिलकर नृत्य करेंगे। निमाई-निताई सबकी जाति-पाति

एक कर डालेंगे। इस प्रकार ये दोनों अपनी जाति तो नष्ट करेंगे ही, साथमें हमारी भी जाति नष्ट कर देंगे। अतः चलो, हम दोनों यहाँसे भागकर अपनी जाति बचाते हैं।”

श्रीअद्वैताचार्यकी उक्तिसे श्रीहरिदास ठाकुरका हास्य तथा विश्वास

यद्यपि श्रील अद्वैताचार्यकी प्रेममयी चेष्टाओंको समझनेकी शक्ति सभीमें नहीं है, किन्तु श्रील हरिदास ठाकुर उनकी स्थितिको भलीभाँति जानते थे, इसलिए वे श्रीअद्वैताचार्यको क्रोधित देखकर हँसने लगे। उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया था कि शीघ्र ही उन दोनों शराबियोंका उद्धार हो जायेगा। तथा हुआ भी वैसा ही।

जगाई-माधाईका श्रीमन् महाप्रभुके घाटपर आगमन और अवस्थान

वे दोनों शराबी जगाई-माधाई जगह-जगह घूमते रहते थे, एकदिन वे उसी घाटपर आ गये, जिसपर महाप्रभु नित्यप्रति गङ्गा-स्नान करते थे। दैवयोगसे वहींपर ही उन्होंने अपना डेरा डाल दिया और इधर-उधर घूमने और सर्वत्र उपद्रव मचाने लगे। उनके व्यवहारसे छोटे-बड़े, धनी-गरीब आदि सभी नवद्वीप-वासियोंके चित्तमें भय होने लगा। जो लोग तीनों सन्ध्याओंमें स्नान करते थे, जगाई-मधाईके भयसे शामके समय गङ्गा स्नान करनेके लिए अकेले न जाकर दस-बीस लोग मिलकर जाने लगे।

श्रीमन् महाप्रभुके कीर्त्तनकी ध्वनिको श्रवण करके जगाई तथा माधाईका मदमत्तताके कारण नृत्य तथा कृष्णकीर्त्तनको 'मङ्गलचण्डीका गीत' मानना

जगाई और माधाई रातके समय महाप्रभुके घरके पासमें ही रहते और रात्रिके समय प्रभुका कीर्त्तन सुन-सुनकर

जागते रहते। कीर्त्तनके साथ जब मृदङ्ग और मञ्जीरा बजता, तो शराबके नशेमें उसे सुनकर वे बड़े आनन्दसे नाचते। वे दूर रहकर कीर्त्तन-ध्वनि सुनते और सुनते ही नाचते तथा और अधिक शराब पीने लगते। जब कीर्त्तन बन्द होता, तब दोनों शान्त हो जाते थे तथा पुनः कीर्त्तन सुनकर वे पुनः नाचने लगते थे। शराबके नशेमें मत्त उन मतवालोंको कु पता ही नहीं चलता था कि वे कहाँ थे, और अब कहाँपर हैं। कृष्ण कीर्त्तनमय वाद्योंकी ध्वनिको 'मङ्गलचण्डीका गान' मानकर वे श्रीमन् महाप्रभुको देखते ही बोलते—"निमाई पण्डित! मङ्गलचण्डीका गीत अवश्य ही सम्पूर्ण कीजियेगा। तुमलोग सभी गाते तो बहुत सुन्दर हो, किन्तु हम तुम्हें कीर्त्तन करते हुए देखना चाहते हैं। हमें जहाँसे जो कु मिलेगा, वह सब हम तुम्हें मङ्गलचण्डीकी पूजाके लिए लाकर देंगे।" दुर्जनोंको देखकर प्रभु उनसे दूर ही रहते थे और सब लोग तो दूसरे रास्तेसे भाग निकलते थे।

जगाई-माधाईके उद्धारकी इच्छासे स्वेच्छापूर्वक श्रीनित्यानन्द प्रभुका उनके समक्ष आगमन, माधाईका क्रोध तथा प्रभुके सिरपर मटकी द्वारा आघात

एक दिन श्रीनित्यानन्दप्रभु नगरमें भ्रमण करते हुए रात्रिके समय अकेले ही आ रहे थे, उस समय जगाई-माधाईने आकर उन्हें घेर लिया। जगाई-मधाईने जोरसे कहा—"कौन है? कौन है?" श्रीनित्यानन्दप्रभुने कहा—"प्रभुके घर जा रहा हूँ।" शराबके नशेमें चूर उन्होंने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?" श्रीनित्यानन्दप्रभु बोले—"मेरा नाम अवधूत है।" बाल्य भावमें अत्यधिक मतवाले श्रीनित्यानन्द राय शराबियोंके साथ इस प्रकार मत्त होकर बातचीत करते हुए लीला कर रहे थे। उनके मनमें यही था कि 'इन दोनोंका उद्धार हो।' इसलिए वे रातके समय वहाँपर आये। किन्तु श्रीनित्यानन्द प्रभुके मुखसे 'अवधूत' नाम

सुनते ही माधाईने क्रोधित होकर टूटी हुई मटकी नित्यानन्द प्रभुके मस्तकपर दे मारी। वह मटकी श्रीनित्यानन्द प्रभुके सिरसे टकराकर टुकड़े-टुकड़े हो गयी और श्रीनित्यानन्द प्रभुके माथेसे रक्तकी धारा प्रवाहित होने लगी। श्रीनित्यानन्द प्रभु भगवान् श्रीगोविन्दका स्मरण करने लगे।

जगाईका माधाईको रोकना

श्रीनित्यानन्द प्रभुके सिरसे रक्तकी धारा बहती देखकर जगाईके मनमें दया आ गयी। वह दोबारा मारनेके लिए तैयार माधाईके उठे हुए दोनों हाथोंको पकड़ते हुए कहने लगा—"माधाई, तुमने ऐसा निर्दयतापूर्ण कार्य क्यों किया? एक परदेशीको मारकर क्या तुम बड़े बन जाओगे? छोड़ो रहने दो, बस करो, अवधूतको और मत मारो। संन्यासीको मारनेसे तुम्हें क्या लाभ होगा?"

प्रत्यक्षदर्शियोंका श्रीमन् महाप्रभुके निकट नित्यानन्द प्रभुका संवाद-ज्ञापन, सपार्षद महाप्रभुका आगमन, चक्रका आह्वान तथा जगाई और माधाईको चक्रका साक्षात् दर्शन

यह सब दृश्य देखकर आस-पासके लोग घबरा गये तथा उन्होंने दौड़कर महाप्रभुके घर जाकर उन्हें पूरा संवाद सुनाया। श्रीमन् महाप्रभु अपने परिकरोंके सहित दौड़े-दौड़े घटना-स्थलपर आ पहुँचे। नित्यानन्द प्रभुके माथेसे रक्तकी धारा बहते देखकर प्रभु अपना आपा खो बैठे तथा 'चक्र! चक्र! चक्र!' कहकर बार-बार पुकारने लगे। उसी समय चक्र प्रभुके हाथमें उपस्थित हो गया, जिसे जगाई-माधाई दोनोंने प्रत्यक्ष रूपमें देखा।

भक्तोंमें शङ्का तथा श्रीनित्यानन्द प्रभुका महाप्रभुसे निवेदन

महाप्रभुके हाथमें चक्रको देखकर भक्तोंको कु
हुई। उस समय श्रीनित्यानन्द प्रभुने महाप्रभुसे प्रार्थना की—"प्रभो!

माधाईने मुझपर प्रहार किया, परन्तु जगाईने मेरी रक्षा की। और यह रक्त तो ऐसे ही निकल गया, मुझे लेशमात्र भी कष्ट नहीं हो रहा है। प्रभो! आप शान्त हो जाइये और कृपापूर्वक इन दोनोंके प्राण मुझे भिक्षामें दे दीजिये।”

महाप्रभुके द्वारा जगाईको आलिङ्गन प्रदान तथा कृपा

श्रीनित्यानन्द प्रभुसे यह सुनकर कि ‘जगाईने मेरी रक्षा की’, भक्तवत्सल भगवान्‌ने सन्तुष्ट होकर उसे आलिङ्गन कर लिया तथा कहने लगे—“जगाई! कृष्ण तुमपर कृपा करें। तुमने नित्यानन्दकी रक्षा करके मुझे खरीद लिया है। तुम्हारी जो भी इच्छा हो, माँग लो। आजसे तुम्हें प्रेमभक्ति प्राप्त हो जायेगी।”

जगाईका सौभाग्य देखकर वैष्णवोंके द्वारा जयध्वनि तथा जगाईकी मूर्च्छा

जगाईपर प्रभुकी कृपा देखकर वैष्णववृन्द आनन्दित हो गये। ‘तुम्हें कृष्णभक्ति प्राप्त हो’—प्रभुके ऐसा कहते ही जगाई प्रेममें मूर्च्छित हो गया। तब प्रभुने उसे अपने चतुर्भुजरूपके दर्शन कराये।

माधाईके द्वारा महाप्रभुके चरणोंमें प्रार्थना

जगाईपर महाप्रभुकी कृपा देखकर माधाई प्रभुके श्रीचरणोंमें गिरकर कहने लगा—“प्रभो! आपने जब जगाईपर कृपा की है, तो मुझपर भी कृपा कीजिये।” प्रभु बोले—“तेरा कल्याण सम्भव नहीं है, क्योंकि तूने नित्यानन्दके सिरसे रक्त बहाया है। हाँ, यदि नित्यानन्द तुझे क्षमा कर दें, तो तुझे क्षमा मिल सकती है।”

माधाईपर श्रीमन् महाप्रभुकी कृपा

यह सुनकर माधाई श्रीनित्यानन्द प्रभुके श्रीचरणोंमें गिर पड़ा तथा रोते हुए उनसे क्षमा याचना करने लगा।

श्रीनित्यानन्द प्रभुने माधाईको उठाकर अपने गलेसे लगा लिया तथा प्रभुसे कहने लगे—"प्रभो! यदि किसी जन्ममें मैंने कु सुकृति की हो, तो मैं उसे माधाईको प्रदान करता हूँ। अतः अब आप माधाईको अङ्गीकार कीजिये।" यह सुनकर प्रभुने प्रसन्न होकर माधाईको भी आलिङ्गन कर लिया। इस प्रकार जगाई–माधाई दोनों ही परम वैष्णव बन गये।

श्रीमन् महाप्रभु श्रीनित्यानन्दप्रभु, श्रील हरिदास ठाकु श्रीवास पण्डित तथा बहुत–से भक्तों सहित जगाई–माधाईको अपने घर ले गये तथा सभी भावाविष्ट होकर श्रीकृष्ण–सङ्कीर्त्तनरसमें निमग्न हो गये।

चतुर्द्दश अध्याय
नीलाचलमें श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुका संन्यास तथा नीलाचल आगमन

श्रीगौरसुन्दरने २४ वर्षकी आयुमें गृहस्थाश्रम त्यागकर संन्यास ग्रहण किया और श्रीकृष्णचैतन्य नामसे परिचित होकर श्रीजगन्नाथपुरी (नीलाचल) आ गये। श्रीसार्वभौम भट्टाचार्यके कहनेपर राजा प्रतापरुद्रने श्रीचैतन्य महाप्रभुके रहनेकी व्यवस्था अपने राजपुरोहित श्रीकाशी मिश्रके भवनमें की थी।

भक्तमण्डलीके सहित श्रील हरिदास ठाकु नीलाचल आगमन

एकबार श्रीअद्वैताचार्य, श्रीशिवानन्द सेन, श्रीवासुदेव, श्रीमुरारि गुप्त तथा अन्यान्य लगभग दो सौ भक्तोंके साथ श्रील हरिदास ठाकु
आये। श्रीगोपीनाथ आचार्यने अट्टालिकासे श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य और महाराज प्रतापरुद्रको एक-एक करके सभी भक्तोंका परिचय बताया। इस प्रकार भक्तोंका परिचय बताते-बताते श्रील हरिदास ठाकु
कहा—"हरिदास ठाकु
११/८६) उन्हें देखो! वे जगत्को पवित्र करनेवाले श्रील हरिदास ठाकु

सभी भक्त श्रीमन् महाप्रभुके दर्शनके लिए श्रीकाशी मिश्रके भवनकी ओर चल पड़े, किन्तु मार्गमें ही उन सबकी श्रीमन् महाप्रभुसे भेंट हो गयी। सभी भक्तोंसे मिलकर श्रीमन् महाप्रभुको बहुत उल्लास हुआ। श्रीमन् महाप्रभुने सभीसे

कु
महाप्रभुने पूछा—“हरिदास कहाँ है?”

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
प्रभु मार्गमें वैष्णवोंसे मिले थे, बल्कि दूरसे ही प्रभुका दर्शन करके वे उसी राजपथके एक किनारेपर दण्डवत् होकर पड़े रह गये थे। अब प्रभुके पूछनेपर सभी भक्त लोग दौड़कर हरिदास ठाकु
कहा—“हरिदास! महाप्रभु तुमसे मिलना चाहते हैं, चलो, जल्दीसे उनके पास चलो।”

मर्यादा-विधिको संरक्षित रखते हुए श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
कारण अस्पृश्य हूँ। श्रीजगन्नाथ मन्दिरके निकट राजमार्गपर जानेका मेरा अधिकार नहीं है, क्योंकि वहाँ राजपथपर श्रीजगन्नाथदेवके सेवकोंका आना-जाना रहता है। इसलिए एकान्तमें किसी एक बगीचेमें यदि मुझे थोड़ा-सा स्थान मिल जाये तो मैं वहींपर पड़ा रहकर अपना समय व्यतीत कर लूँगा। मेरी ऐसी इच्छा है कि मैं किसी ऐसे स्थानपर पड़ा रहूँ, जिससे श्रीजगन्नाथके पुजारी-सेवक मुझ अस्पृश्यसे छू न जायें।”

भक्तोंके मुखसे श्रील हरिदास ठाकु सुनकर प्रभुका आनन्द

श्रील हरिदास ठाकु
जाकर बतलाये। श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
विचार सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। उसी समय श्रीकाशी मिश्र दो व्यक्तियोंके साथ वहाँ आये तथा उन्होंने श्रीमन् महाप्रभुके

चरणोंकी वन्दना की। श्रीकाशी मिश्रने महाप्रभुके चरणोंमें निवेदन किया—"प्रभो! यदि आपकी आज्ञा हो तो इन वैष्णवोंके लिए सब प्रबन्ध किये जायें?"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रीकाशीमिश्रसे (श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—"गोपीनाथ आपके साथ जाकर सभीको रहनेका यथायोग्य स्थान दे देगा। हे काशीमिश्र! मेरे इस स्थानके निकट ही जो बगीचा है, उसमें एक परम एकान्त घर है। वह घर मुझे चाहिये जिससे कि मैं वहाँ एकान्तमें बैठकर श्रीकृष्ण-स्मरण कर सकूँ।"

श्रीकाशीमिश्रने कहा—"प्रभो! सबकु
आप माँगते क्यों हैं? आपकी जो इच्छा हो, वही स्थान आप लीजिये।"

सभी वैष्णवगण श्रीमन् महाप्रभुको नमस्कार करके अपने स्थानोंपर चले गये और श्रीगोपीनाथ आचार्यने सबको यथायोग्य स्थान दे दिया।

श्रीमन् महाप्रभुका श्रील हरिदास ठाकु

महाप्रभु आइला तबे हरिदास-मिलने।
हरिदास करे प्रेमे नाम-सङ्कीर्त्तने॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१८५)

तदनन्तर श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
आये। श्रील हरिदास ठाकु
कर रहे थे।

प्रभु देखि पड़े पाय दण्डवत् हइया।
प्रभु आलिङ्गन कैल ताँरे उठाइया॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१८६)

श्रीमन् महाप्रभुको आते हुए देखकर श्रील हरिदास ठाकु
प्रणाम किया तथा महाप्रभुने उन्हें उठाकर आलिङ्गन किया।

दुईजने प्रेमावेशे करेन क्रन्दने।
प्रभु गुणे भृत्य विकल, प्रभु भृत्य गुणे॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१८७)

दोनों प्रेमावेशमें क्रन्दन करने लगे। भक्त तो प्रभुके गुणोंमें और प्रभु अपने भक्तके गुणोंमें विकल हो रहे थे।

हरिदास कहे,—"प्रभु, ना छुइह मोरे।
मुञि—नीच, अस्पृश्य, परम पामरे॥"
(चै॰ च॰ म॰ ११/१८८)

श्रील हरिदास ठाकु
कीजिये। मैं नीच जातिका अस्पृश्य तथा बहुत ही अधम हूँ।"

साक्षात् ब्रह्मण्यदेव श्रीमन् महाप्रभु द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

प्रभु कहे,—"तोमा स्पर्शि पवित्र हइते।
तोमार पवित्र धर्म नाहिक आमाते॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१८९)

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—"हरिदास! मैं स्वयं पवित्र होनेके लिए तुम्हारा स्पर्श कर रहा हूँ। तुममें जो पवित्र धर्म है, वह मुझमें नहीं है।

"क्षणे-क्षणे कर तुमि सर्वतीर्थे स्नान।
क्षणे-क्षणे कर तुमि यज्ञ-तपो-दान॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९०)

"तुम क्षण-क्षणमें समस्त तीर्थोंमें स्नान करते हो और क्षण-क्षणमें तुम यज्ञ-तप तथा दान करते हो।

"निरन्तर कर तुमि वेद-अध्ययन।
द्विज-न्यासी हैते तुमि परम-पावन॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९१)

"तुम निरन्तर वेदोंका अध्ययन कर रहे हो तथा तुम ब्राह्मणों तथा संन्यासियोंकी अपेक्षा परम पवित्र हो।

"अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान् यज्जिव्हाग्रे वर्त्तते नाम तुभ्यम्।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या ब्रह्मानूचुर्नाम् गृणन्ति ये ते॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९२)

"हे भगवन्! जिनकी जिह्वाके अग्रभागपर सदैव आपका नाम वर्त्तमान रहता है, वह व्यक्ति श्वपच होते हुए भी पूजनीय है। जो आपके नामका सङ्कीर्त्तन करते रहते हैं, वे ही सदाचारी हैं, उन्होंने सब प्रकारकी तपस्याएँ कर ली है, सब प्रकारके यज्ञ कर लिये हैं, समस्त तीर्थोंमें स्नान कर लिया है तथा उन्होंने समस्त वेदों और उनके अङ्गोंका अध्ययन कर लिया है, अतएव वे आर्योंमें परिगणित हैं।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु वास-स्थान तथा वचन प्रदान

एत बलि ताँरे लइया गेला पुष्पोद्याने।
अति निभृते ताँरे दिला वासा-स्थाने॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९३)

इतना कहकर श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु बगीचेमें ले गये तथा उन्हें वहाँ एकान्तमें रहनेके लिए घर दे दिया।

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—

"ऐई स्थाने रहि कर नाम-सङ्कीर्त्तन।
प्रतिदिन आसि आमि करिब मिलन॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९४)

"हरिदास तुम इस स्थानपर रहकर नामसङ्कीर्त्तन करो। मैं यहीं आकर प्रतिदिन तुमसे मिलूँगा।

श्रील हरिदास ठाकु

"मन्दिरेर चक्र देखि करिह प्रणाम।
ऐई ठाञि तोमार आसिबे प्रसादान्न॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९५)

"श्रीजगन्नाथ मन्दिरके चक्रको देखकर प्रणाम करना। तुम्हारे लिए प्रसाद यहींपर ही आ जायेगा।"

नित्यानन्द, जगदानन्द, दामोदर, मुकु
हरिदासे मिलि सबे पाइल आनन्द॥
(चै॰ च॰ म॰ ११/१९६)

श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीजगदानन्द पण्डित, श्रीदामोदर तथा मुकु
अनुभव किया।

समुद्र स्नान करनेके बाद श्रीमन् महाप्रभु अपने वास-स्थानपर लौट आये। सभी भक्त श्रीमन् महाप्रभुके निवास-स्थानपर प्रसाद पानेके लिए एकत्रित हुए। श्रीमन् महाप्रभुने अपने हाथोंसे सभीको प्रसाद परोसा। किन्तु महाप्रभुके नहीं बैठने तक कोई भी प्रसाद नहीं पायेगा, इसलिए श्रीस्वरूप दामोदरने प्रभुसे निवेदन किया—"सभी भक्त आपकी अपेक्षा कर रहे हैं। अतः आप और श्रीनित्यानन्द प्रभु दोनों प्रसाद पाने बैठिये और मैं सभीको परिवेशन कर दूँगा।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रीगोविन्द प्रभुके माध्यमसे श्रील हरिदास ठाकु

तबे प्रभु प्रसादान्न गोविन्द-हाथे दिल।
यत्न करि हरिदास ठाकु
(चै॰ च॰ म॰ ११/२०६)

तब श्रीमन् महाप्रभुने कु
देकर यत्नपूर्वक उसे श्रीहरिदास ठाकु
श्रील हरिदास ठाकु
श्रीमन् महाप्रभु सब संन्यासियोंको बैठाकर स्वयं भी प्रसाद-सेवाके लिए बैठ गये।

श्रील हरिदास ठाकु

अब श्रील हरिदास ठाकु
कु
हरिनाम करने लगे। प्रभु नित्यप्रति प्रातःकाल श्रीजगन्नाथदेवकी आरती दर्शनकर श्रील हरिदास ठाकु
स्वयं उनकी कु
ऐसा सुना जाता है कि एक बार श्रीचैतन्य महाप्रभुको भगवान् श्रीजगन्नाथके पुजारीने प्रसादमें श्रीजगन्नाथदेवकी प्रसादी बकु
ठाकु
उस दातुनको उनके आङ्गनमें रोपण कर दिया। देखते-ही-देखते उसने एक बहुत बड़े वृक्षका रूप धारण कर लिया। वह वृक्ष सिद्धबकु
श्रील हरिदास ठाकु
नामसे ही जानते हैं तथा वही सिद्धबकु
करके अपने दर्शन प्रदान कर रहे हैं।
किसी-किसीका कहना है कि श्रीमन् महाप्रभुने चैत्र-संक्रान्तिके दिन उक्त दातुनको श्रील हरिदास ठाकु
लगाया था। इसलिए आज तक भी चैत्र-सक्रान्तिके दिन सिद्धबकु
है।

पञ्चदश अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील रूप गोस्वामीका नीलाचलमें श्रील हरिदास ठाकु स्थानपर आगमन

श्रील रूप गोस्वामी जब वृन्दावनसे चलकर नीलाचल पहुँचे, तब सबसे पहले वे श्रील हरिदास ठाकु
ही उपस्थित हुए।

हरिदास–ठाकु
"तुमि आसिबे,—मोरे प्रभु जे कहिला॥"
(चै॰ च॰ अ॰ १/४६)

श्रील हरिदास ठाकु
तथा उन्हें बताया कि "तुम्हारे आनेके विषयमें महाप्रभुने मुझे पहले ही बता दिया था।"

श्रीमन् महाप्रभुसे मिलन

जब श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
आये, तब श्रील हरिदास ठाकु
आपको दण्डवत् कर रहा है।" श्रील हरिदास ठाकु
उपरान्त श्रीमन् महाप्रभुने श्रीरूप गोस्वामीको आलिङ्गन किया।

श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
एक स्थानपर बैठ गये तथा उन्होंने श्रीरूपसे कु
जिज्ञासा की। फिर श्रीरूपको श्रील हरिदास ठाकु
स्थानपर रहनेकी आज्ञा देकर श्रीमन् महाप्रभु अपने निवास–स्थानपर चले गये। प्रतिदिन आकर श्रीमन् महाप्रभु उनसे

मिलते थे तथा उन्हें श्रीजगन्नाथ मन्दिरसे जो प्रसाद मिलता था, वे इन दोनोंको लाकर देते थे।

श्रील हरिदास ठाकु

रूप गोस्वामीके श्रीजगन्नाथ मन्दिर न जानेका कारण एवं श्रीमन् महाप्रभुका नियम

हरिदास ठाकु
जगन्नाथ मन्दिरे ना जान तिन जन॥

महाप्रभु जगन्नाथेर उपलभोग देखिया।
निजगृहे जान ऐई तिनेरे मिलिया॥

ऐई तिनेर मध्ये जबे थाके जेई जन।
ताँरे आसि आपने मिले–प्रभुर नियम॥

(चै॰ च॰ म॰ १/६३–६५)

श्रील हरिदास ठाकु
मन्दिरकी मर्यादाके भङ्गकी आशङ्कासे मन्दिर नहीं जाते थे। श्रील सनातन गोस्वामी तथा श्रील रूप गोस्वामीने भी श्रेष्ठ ब्राह्मणकु
की थी, इसलिए वे भी अपने आपको म्लेच्छ–तुल्य मानकर श्रील हरिदास ठाकु
श्रीजगन्नाथ मन्दिरमें प्रवेश नहीं करते थे। इसलिए श्रीमन् महाप्रभु भगवान् श्रीजगन्नाथदेवके उपलभोग दर्शन करनेके उपरान्त इन तीनोंको दर्शन देकर फिर अपने स्थानपर जाते थे। इन तीनोंमेंसे जब जो भी भजनकु
आप आकर उसे वहाँ दर्शन देते थे—यह प्रभुका नियम था।

श्रील हरिदास ठाकु

मार्जन और रथ–यात्रामें सम्मिलित होनेके प्रमाण

यद्यपि उपरोक्त तथ्योंसे यह जाना जाता है कि श्रील हरिदास ठाकु

मन्दिरमें प्रवेश नहीं करते थे, तथापि निम्नलिखित पयारोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि वे गुण्डिचा मन्दिर मार्जन तथा रथ-यात्राके समय श्रीमन् महाप्रभुके भक्तोंके साथ नृत्य-कीर्त्तन करते थे तथा भगवान् श्रीजगन्नाथदेवके दर्शन करते थे।

भक्तगण लइया कैला गुण्डिचा-मार्जन।
आइटोटा आसि कैला वन्य-भोजन॥

प्रसाद खाय, 'हरि' बले सर्वभक्तजन।
देखि' हरिदास-रूपेर हरषित मन॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/६२-६३)

रथ-यात्राके एक दिन पहले श्रीमन् महाप्रभुने सब भक्तोंको लेकर गुण्डिचा मन्दिरका मार्जन किया तथा उसके उपरान्त आइ-टोटा नामक बगीचेमें जाकर फल, कन्दमूल आदिका भोजन किया। श्रील हरिदास ठाकु
भी उनके साथ वहाँपर उपस्थित थे तथा वे भक्तोंको प्रसाद पाते-पाते बीच-बीचमें 'हरि-हरि' बोलते देखकर बहुत उल्लसित हो रहे थे।

गोविन्द-द्वारा प्रभुर शेष-प्रसाद पाइला।
प्रेमे मत्त दुईजन नाचिते लागिला॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/६४)

श्रीमन् महाप्रभु तथा सभी भक्तोंके द्वारा प्रसाद-सेवा कर लेनेके पश्चात् श्रीगोविन्द प्रभुके द्वारा श्रीमन् महाप्रभुके उच्छिष्ट-प्रसादको पाकर श्रील हरिदास ठाकु
गोस्वामी प्रेममें मत्त होकर नृत्य करने लगे।

किसी अन्य वर्ष जब श्रीमन् महाप्रभु श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैताचार्य प्रभु, श्रीवक्रेश्वर पण्डित आदि बहुत-से भक्तोंके साथ प्रसाद पाने बैठे, तब

'हरिदास' बलि प्रभु डाके धने धन।
दूरे रहि' हरिदास करे निवेदन॥

भक्त-सङ्गे प्रभु करुन प्रसाद अङ्गीकार।
ए-सङ्गे बसिते योग्य नाहि मुञि छार॥

पाछे मोरे प्रसाद गोविन्द दिबे बहिर्द्वारे।
मन जानि' प्रभु पुनः ना बलिल तारे॥
(चै॰ च॰ म॰ १२/१६०-१६२)

श्रीमन् महाप्रभुने श्रील हरिदास ठाकु
आवाज लगायी। दूरसे ही श्रील हरिदास ठाकु
किया—"प्रभो! आप भक्तोंके साथ प्रसाद ग्रहण कीजिये, मैं अधम उस गोष्ठीमें बैठनेके योग्य नहीं हूँ। आप सबके प्रसाद पा लेनेके बाद गोविन्द मुझे दरवाजेके बाहर प्रसाद दे देंगे।"
श्रील हरिदास ठाकु
फिरसे कु

इसी प्रकार रथ-यात्राके दिन भी सर्वत्र वे दोनों श्रीमन् महाप्रभुके साथ थे।

रथ यात्राय जगन्नाथ-दर्शन करिला।
रथ-अग्रे प्रभुर नृत्य-कीर्त्तन देखिला॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/७२)

श्रील रूप गोस्वामीने श्रीजगन्नाथदेवकी रथ-यात्राके दर्शन किये तथा रथके आगे-आगे श्रीमन् महाप्रभु जिस प्रकार नृत्य कर रहे थे, उसे भी देखा।

निम्नलिखित पयारोंसे जाना जाता है कि श्रील हरिदास
ठाकु
उपस्थित रहते थे।

तबे महाप्रभु मने विचार करिया।
चारि सम्प्रदाय दिल गायन बाटिया॥

नित्यानन्द, अद्वैत, हरिदास, वक्रेश्वरे।
चारिजने आज्ञा दिल नृत्य करिबारे॥
(चै॰ च॰ म॰ १३/३४-३५)

रथ-यात्राके समय श्रीमन् महाप्रभुने विचार करके चारों मण्डलियोंमें गायन करनेवालोंको बाँट दिया। श्रीनित्यानन्द, श्रीअद्वैत, श्रील हरिदास तथा श्रीवक्रेश्वर—इन चारोंमेंसे एक-एकको एक-एक मण्डलीमें नृत्य करनेके लिए प्रभुने आज्ञा दी।

वासुदेव, गोपीनाथ, मुरारि जाँहा गाय।
मुकु
श्रीकान्त, वल्लभसेन आर दुई जन।
हरिदास ठाकु

(चै॰ च॰ म॰ १३/४०-४१)

(तीसरी मण्डलीमें) प्रभुने श्रीमुकु
बनाया तथा श्रीवासुदेव, श्रीगोपीनाथ, श्रीमुरारि, श्रीकान्त और श्रीवल्लभ सेन—ये पाँच व्यक्ति सहायक गायक थे। इस मण्डलीमें नृत्य करनेवाले श्रील हरिदास ठाकु

श्रील रूप गोस्वामीके द्वारा लिखे गये श्लोकको पढ़कर श्रीमन् महाप्रभुका प्रेमाविष्ट होना

चातुर्मास्यके बाद गौड़देशसे आये सभी वैष्णव तो लौट गये, किन्तु श्रील रूप गोस्वामी श्रील हरिदास ठाकु
रहते रहे। एकदिन श्रीमन् महाप्रभु जब उन दोनोंसे मिलने आये तो उन्होंने देखा कि श्रील रूप गोस्वामी कु
है। श्रीमन् महाप्रभुको देखकर श्रील हरिदास ठाकु
रूप गोस्वामीने उठकर दण्डवत प्रणाम किया। दोनोंको आलिङ्गन करनेके बाद श्रीमन् महाप्रभु आसनपर बैठ गये।

क्या पूँथि लिख? बलि' एकपत्र निला।
अक्षर देखिया प्रभु मने सुखी हैला॥

(चै॰ च॰ अ॰ १/९६)

श्रीमन् महाप्रभुने पूछा—"रूप! कौन-सा ग्रन्थ लिख रहे हो?" इतना कहकर उन्होंने एक पन्ना अपने हाथमें ले लिया

और श्रीरूपके द्वारा लिखे गये अक्षरोंको देखकर श्रीमन् महाप्रभु बहुत सन्तुष्ट हुए तथा उन अक्षरोंकी प्रशंसा करने लगे।

सेइ पत्रे प्रभु एक श्लोक देखिला।
पड़ितेइ श्लोक, प्रेमे आविष्ट हइला॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/९८)

उस पन्नेपर लिखे एक श्लोकको देखकर जब महाप्रभुने उसे पढ़ा तो वे प्रेमाविष्ट हो गये।

तुण्डे ताण्डविनी रतिं वितनुते तुण्डेवलीलब्धये
कर्ण क्रोड़कडम्बिनी घटयते कर्णार्बुदेभ्यः सपृहाम्।
चेतः प्राङ्गणसङ्गिनी विजयते सर्वोन्द्रियाणां कृतिं
नो जाने जनिता कियद्भिरमृतैः कृष्णेति वर्णद्वयी॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/९९)

'कृष्ण' ये दो वर्ण न जाने कितने अमृतको अपनेमें समेटकर उत्पन्न हुए हैं। देखो! जब (नटीके समान) ये वर्ण तुण्डे अर्थात् मुखमें नृत्य करते हैं, तब बहुत तुण्ड (मुख) प्राप्त करनेके लिए आसक्ति वर्द्धित करते हैं; जब कर्णकुहरमें प्रवेश करते हैं, तब करोड़ों कर्णोंको प्राप्त करनेकी स्पृहाको जागृत करते हैं; जब चित्तरूपी प्राङ्गणमें उदित होते हैं, तब समस्त इन्द्रियोंकी क्रियापर ही विजय प्राप्त कर लेते हैं।

श्रील हरिदास ठाकुर द्वारा
श्रील रूप गोस्वामीकी प्रशंसा

श्लोक शुनि' हरिदास हइला उल्लासी।
नाचिते लागिला श्लोकेर अर्थ प्रशंसि॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/१००)

उपरोक्त श्लोकको सुनते ही श्रील हरिदास ठाकुर आनन्द-विभोर होकर नाचने लगे तथा श्लोकके अर्थकी प्रशंसा करने लगे।

श्रील हरिदास ठाकु

"कृष्णनामेर महिमा शास्त्र-साधु-मुखे जानि।
नामेर महिमा ऐछे काँहा नाहि शुनि॥
(चै॰ च॰ अ॰ १/१०१)

"रूप! मैंने श्रीकृष्णनामकी महिमाको शास्त्रों द्वारा तथा महत्-पुरुषों द्वारा बहुत सुना है, किन्तु इस प्रकारकी नामकी महिमाको तो मैंने कहीं भी नहीं सुना है।"

तब महाप्रभुने दोनोंको आलिङ्गन किया तथा मध्याह्न (स्नान, दोपहरकी प्रसाद सेवा आदि) करनेके लिए समुद्रकी ओर गमन किया। अन्य किसी दिन बहुत-से भक्तोंके साथ आकर श्रीमन् महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीके द्वारा लिखे गये बहुत-से श्लोकोंको श्रवण किया तथा सभी भक्तों सहित महाप्रभुने श्रील रूप गोस्वामीकी बहुत प्रशंसा की।

जब श्रीमन् महाप्रभु अपने भक्तोंको लेकर चले गये, तब श्रील हरिदास ठाकु

हरिदास कहे—"तोमार भाग्येर नाहि सीमा।
जे सब वर्णिला, इहार के जाने महिमा?"
(चै॰ च॰ अ॰ १/२१०)

श्रील हरिदास ठाकु
नहीं है। तुमने जिन सब श्रेष्ठ विचारोंका वर्णन किया है, उसकी महिमा कौन जानता है?"

श्रील रूप गोस्वामीने कहा—"मैं कु
श्रीमन् महाप्रभु मुझसे जो कहलवाते हैं, मैं वही कहता हूँ।"

इस प्रकार श्रील रूप गोस्वामी तथा श्रील हरिदास ठाकु
श्रीकृष्णकथाके रसमें सुखपूर्वक अपना समय व्यतीत करते थे।

षोड़श अध्याय

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु

श्रील सनातन गोस्वामीका झारिखण्डके वनपथसे नीलाचल आगमन तथा चर्म–रोग

एकबार श्रील सनातन गोस्वामी मथुरा–मण्डलसे अकेले झारिखण्डके वनपथसे पुरुषोत्तमधाम आये। मार्गमें जलके दोष तथा उपवासके कारण उनकी देहमें चर्म–रोग हो गया। चर्म–रोगकी यातना तथा अपने आपको श्रीमन् महाप्रभुकी सेवामें अयोग्य मानकर उन्होंने मन–ही–मन विचार किया कि “श्रीजगन्नाथपुरी पहुँचकर रथ–यात्राके समय श्रीजगन्नाथदेवके रथके पहियेके नीचे अपने शरीरका परित्याग कर दूँगा।”

श्रील सनातन गोस्वामीका श्रील हरिदास ठाकु स्थानपर आगमन

श्रीजगन्नाथपुरी आकर वे श्रील हरिदास ठाकु
आये।

> हरिदासेर कैला तेहँ चरण वन्दन।
> जानि' हरिदास ताँरे कैला आलिङ्गन॥
>
> (चै॰ च॰ अ॰ ४/१४)

श्रील हरिदास ठाकु
उनके चरणोंकी वन्दना की तथा श्रील हरिदास ठाकु
उनका परिचय जानकर उन्हें आलिङ्गन प्रदान किया।

श्रील हरिदास ठाकु
गोस्वामी महाप्रभुके दर्शनोंके लिए उत्कण्ठित हो रहे हैं, तब

उन्होंने श्रीसनातन गोस्वामीको कहा—"प्रभु अभी आने ही वाले हैं।"

श्रीमन् महाप्रभुका आगमन

थोड़ी ही देरमें श्रीमन् महाप्रभु अपने भक्तोंके साथ श्रील हरिदास ठाकु
पहुँचे। श्रीमन् महाप्रभुको देखते ही श्रील हरिदास ठाकु
श्रील सनातन गोस्वामीने उन्हें साष्टाङ्ग दण्डवत्-प्रणाम किया। श्रीमन् महाप्रभुने हरिदास ठाकु
किया।

हरिदास कहे,—"सनातन करे नमस्कार।"
सनातने देखि' प्रभु हैला चमत्कार॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१८)

श्रील हरिदास ठाकु
प्रणाम कर रहा है।" श्रील सनातन गोस्वामीको वहाँ देखकर श्रीमन् महाप्रभुके आश्चर्यका ठिकाना न रहा।

श्रील सनातन गोस्वामीके बार-बार मना करनेपर भी श्रीमन् महाप्रभुने उनका भी आलिङ्गन किया। श्रीमन् महाप्रभु जब अपने भक्तोंको लेकर चबूतरेपर बैठे तब श्रील हरिदास ठाकु
उस समय श्रीमन् महाप्रभु तथा श्रील सनातन गोस्वामीमें अनेकानेक कथोपकथन हुए।

श्रील सनातन गोस्वामीको श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा आज्ञा प्रदान

श्रीमन् महाप्रभुने श्रील सनातन गोस्वामीजीको आज्ञा देते हुए कहा—

"भाल हइल, तोमार इहाँ हैल आगमने।
ऐई घरे रह इँहा हरिदास-सने॥"
(चै॰ च॰ अ॰ ४/४८)

"बहुत अच्छा हुआ, जो तुम यहाँ आये। तुम इसी घरमें हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
प्रशंसा करते हुए श्रीमन् महाप्रभुने उन्हें आदेश देते हुए कहा—

"कृष्णभक्तिरसे दुँहे परम प्रधान।
कृष्णरस आस्वादन कर, लह कृष्णनाम॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/४९)

"श्रीकृष्णभक्तिरसके आस्वादनमें तुम दोनों परम प्रधान (सर्वश्रेष्ठ) हो, यहीं दोनों साथ-साथ रहकर श्रीकृष्णरसका आस्वादन करो तथा श्रीकृष्णनाम कीर्त्तन करो।"

श्रील सनातन गोस्वामीको उपलक्ष्य करके अनर्थयुक्त साधकोंके प्रति श्रीमन् महाप्रभुकी शिक्षा

किसी और दिन अचानक ही महाप्रभुने श्रील सनातन गोस्वामीको कहा—"देह-त्याग आदि तमोधर्म है, देह-त्यागके द्वारा कृष्णप्रेम प्राप्त नहीं किया जा सकता, अतएव तुम अपनी इस तमोबुद्धिका परित्याग करके सदैव श्रवण तथा कीर्त्तन करो। शीघ्र ही तुम्हें कृष्णप्रेमधनकी प्राप्ति होगी।"

निष्किञ्चन सनातन गोस्वामी द्वारा अपने कर्त्तव्य हेतु जिज्ञासा

श्रीमन् महाप्रभुके वचन सुनकर श्रील सनातन गोस्वामीको बहुत आश्चर्य हुआ। तब श्रील सनातन गोस्वामीने मन-ही-मन विचार किया—"श्रीमन् महाप्रभुको मेरे शरीर त्यागनेका विचार अच्छा नहीं लगा, इसलिए ही सर्वज्ञ महाप्रभु मुझे देह-त्यागनेके लिए निषेध कर रहे हैं।" अतः श्रील सनातन गोस्वामीने महाप्रभुसे पूछा—"मुझे जीवित रखकर आपको क्या लाभ होगा?"

श्रीमन् महाप्रभुका उत्तर

तब श्रीमन् महाप्रभुने उनसे कहा—"तुमने मुझे आत्म-समर्पण किया है अतएव अब तुम्हारी देह मेरा धन है। तुम मेरी वस्तुको नष्ट क्यों करना चाहते हो? क्या तुम धर्म तथा अधर्मका विचार करनेमें असमर्थ हो? तुम्हारा शरीर मेरा प्रधान 'साधन' है, तुम्हारे इस शरीरके द्वारा मैं बहुत-से कार्य सम्पन्न करवाऊँगा। मैं तुम्हारे माध्यमसे ही भक्त-भक्ति तथा कृष्णप्रेमके तत्त्व, वैष्णवोंके कृत्य तथा वैष्णव-आचार, लुप्ततीर्थोंका उद्धार तथा वैराग्य आदिकी शिक्षाको अपने प्रिय स्थान मथुरा-वृन्दावनमें करवाऊँगा।

"मैं अपनी माताकी आज्ञासे यहाँ नीलाचलमें वास कर रहा हूँ, इसलिए मैं वहाँ जाकर 'धर्म' की शिक्षा नहीं दे सकता। मैं अपने इन समस्त कार्योंको तुम्हारी देहके द्वारा सम्पन्न कराना चाहता हूँ और तुम हो कि अपनी इस देहको त्याग करना चाहते हो? बताओ, मैं कैसे इसे सहन करूँ?"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकुरको सनातन गोस्वामीकी देहकी रक्षाका भार-अर्पण

हरिदासे कहे प्रभु—"शुन, हरिदास।
परेर द्रव्य इँहो चाहेन करिते विनाश॥

परेर स्थाप्य द्रव्य केह ना खाय, बिलाय।
निषेधिह इहारे,—जेन ना करे अन्याय॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/८७-८८)

श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकुरसे बोले—"हरिदास! सुनो, यह सनातन पराये धनको नष्ट करना चाहता है। दूसरेके अमानती धन अथवा वस्तुको कोई भी नहीं खाता, बिगाड़ता। तुम इसे इस प्रकारका अन्यायपूर्ण कार्य मत करने देना।"

श्रील हरिदास ठाकु

हरिदास कहे,—“मिथ्या अभिमान करि।
तोमार गम्भीर हृदये बुझिते ना पारि॥
कोन् कोन् कार्य तुमि कर कोन द्वारे।
तुमि ना जानाइले कहे जानिते ना पारे॥
एतादृश तुमि इँहारे करियाछो अङ्गीकार।
एत सौभाग्य इँहा ना हय काहार॥”
(चै॰ च॰ अ॰ ४/८९-९१)

श्रील हरिदास ठाकु
अभिमान करता हूँ कि मैं आपके हृदयको जानता हूँ। वास्तवमें मैं आपके हृदयके गूढ़ भावको नहीं समझ पाता हूँ। क्या-क्या कार्य आप किसके द्वारा करवाते हैं, यह बात जब तक आप स्वयं नहीं बतायेंगे, तब तक कोई भी इसे नहीं जान सकता।

“(किसी श्रेष्ठ आचार्यके मुखसे अपनेसे कनिष्ठ भक्तकी प्रशंसा सुनकर कु
बद्धजीवोंकी धारणा और विचारोंके ठीक विपरीत स्वभाववाले परम उदारचित्त गुणग्राही श्रील हरिदास ठाकु
प्रभो! आपने सनातनको जिस प्रकारसे अङ्गीकार किया है, इतना सौभाग्य तो और किसीका हो ही नहीं सकता।”

तब श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
सनातन गोस्वामीको आलिङ्गन करके मध्याह्न स्नानादि करनेके लिए चले गये।

श्रील हरिदास ठाकु
सौभाग्यका वर्णन

सनातने कहे हरिदास करि' आलिङ्गन।
“तोमार भाग्येर सीमा ना जाय कथन॥

तोमार देह कहेन प्रभु 'मोर निज-धन'।
तोमा-सम भाग्यवान् नाहि कोन जन॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/९३-९४)

श्रील हरिदास ठाकुर

करते हुए कहने लगे—"सनातन! तुम्हारे भाग्यकी सीमा नहीं कही जा सकती है। तुम्हारी देहको प्रभु अपना 'निज धन' मानकर स्वीकार करते हैं। तुम्हारे समान भाग्यशाली और कोई नहीं हो सकता।

"निज-देहे जे कार्य ना पारेन करिते।
से कार्य कराइबे तोमा, सेह मथुराते॥

जे कराइते चाहे ईश्वर, सेई सिद्ध हय।
तोमार सौभाग्य ऐई कहिलुँ निश्चय॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/९५-९६)

"श्रीमन् महाप्रभु अपनी देहसे जो कार्य नहीं कर सकते हैं, वह कार्य वे तुमसे करायेंगे और वह भी अपने प्रिय मथुरा-वृन्दावनमें। भगवान् जो कार्य कराना चाहते हैं, वह अवश्य ही पूर्ण होता है। निश्चय ही, यह तुम्हारा परम सौभाग्य है।

"भक्तिसिद्धान्त शास्त्र-आचार-निर्णय।
तोमाद्वारे कराइबेन, बुझिलुँ आशय॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/९७)

"श्रीमन् महाप्रभु भक्तिसिद्धान्तमूलक शास्त्रोंका प्रणयन तथा वैष्णवाचरण-निर्णय तुम्हारे द्वारा करवायेंगे—यही प्रभुकी इच्छा है।

श्रील हरिदास ठाकुर

"आमार ऐई देह प्रभुर कार्ये ना लागिल।
भारत-भूमिते जन्मि' ऐई देह व्यर्थ हइल॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/९८)

"सनातन! मेरी यह देह प्रभुके किसी भी काममें नहीं लग पायी। भारतभूमिमें जन्म लेकर भी मेरा जीवन वृथा ही चला गया।"

श्रील सनातन गोस्वामीके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

सनातन कहे,—"तोमा-सम केबा आछे आन।
महाप्रभुर गणे तुमि—महाभाग्यवान्!!
(चै॰ च॰ अ॰ ४/९९)

श्रील हरिदास ठाकु
सनातन गोस्वामीने कहा—"आपके समान सौभाग्यशाली और कौन हो सकता है? श्रीमन् महाप्रभुके भक्तोंमें आप परम सौभाग्यशाली हैं!

कीर्त्तन-आचार्य श्रील हरिदास ठाकु
माध्यमसे प्रभु द्वारा नाम-प्रचार

"अवतार-कार्य प्रभुर-नाम-प्रचारे।
सेई निज-कार्य प्रभु करेन तोमार द्वारे॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१००)

"श्रीमन् महाप्रभुके अवतारका एक प्रयोजन श्रीहरिनामका प्रचार है। वह श्रीहरिनाम प्रचारका अपना कार्य श्रीमन् महाप्रभु आपके द्वारा करा रहे हैं।

श्रील हरिदास ठाकु

"प्रत्यह कर तिन लक्ष नाम-सङ्कीर्त्तन।
सबार आगे कर नामेर महिमा कथन॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१०१)

"आप प्रतिदिन तीन लाख श्रीनामसङ्कीर्त्तन करते हैं और सबके सामने श्रीनामकी महिमाका गान करते हैं।

असम्पूर्ण आचार तथा प्रचार

"आपने आचरे केह, ना करे प्रचार।
प्रचार करेन केह, ना करेन आचार॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१०२)

"कोई-कोई स्वयं तो भक्तिका आचरण करते हैं, किन्तु उसका प्रचार नहीं करते तथा कोई-कोई भक्तिका प्रचार तो करते हैं, किन्तु स्वयं उसका आचरण नहीं करते।

वैष्णवाचार्य श्रील हरिदास ठाकुर

"'आचार', 'प्रचार'—नामेर करह 'दुई' कार्य।
तुमि-सर्वगुरु, तुमि—जगतेर आर्य॥"
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१०३)

"आप शुद्ध हरिनाम ग्रहण करनेके कारण 'आचार्य' तथा उच्च सङ्कीर्त्तन करके सभी जगत्-वासियोंको नाम-यज्ञमें दीक्षित करानेके कारण 'प्रचारक' है। अतः आप ही सबके गुरु तथा समस्त जगत्‌के पूज्य हैं।"

इस प्रकार श्रील हरिदास ठाकुर और श्रील सनातन गोस्वामी दोनों एक साथ रहकर श्रीकृष्ण कथाका अनेक प्रकारसे रसास्वादन करते थे।

श्रील सनातन गोस्वामीके द्वारा जगदानन्द पण्डितसे परामर्श तथा श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील सनातन गोस्वामीका श्रेष्ठत्व स्थापन

श्रीमन् महाप्रभु जब-जब श्रीसनातन गोस्वामीको देखते, तब-तब बलपूर्वक उनका आलिङ्गन करते। इससे श्रील सनातन गोस्वामीके हृदयमें बहुत दुःख होता। एक दिन श्रील सनातन गोस्वामीने इस विषयमें श्रीजगदानन्द पण्डितसे परामर्श किया तथा अपने कर्त्तव्यके विषयमें पूछा। श्रीजगदानन्द पण्डितने श्रील सनातन गोस्वामीको रथ-यात्राके बाद वृन्दावन

लौट जानेका उपदेश दिया। श्रीमन् महाप्रभुने जब इस बातको सुना तो उन्होंने जगदानन्द पण्डितको कु
अपेक्षा श्रील सनातन गोस्वामीकी श्रेष्ठता स्थापित की।

श्रीमन् महाप्रभुने श्रील सनातन गोस्वामीसे कहा—"तुम शुद्धभक्त हो, तुम्हारी देहका भद्र और अभद्र होना विचारणीय नहीं है। विशेष करके मैं संन्यासी हूँ, मेरे लिए तो उसका विचार करना कदापि उचित नहीं है।"

श्रील हरिदास ठाकु

हरिदास कहे—"प्रभु, जे कहिला तुमि।
ऐई 'बाह्य प्रतारणाा', नाहि मानि आमि॥

आमा–सब अधमे जे करियाछ अङ्गीकार।
दीन दयालु–गुण तोमार ताहाते प्रचार॥

(चै॰ च॰ अ॰ ४/१८१–१८२)

श्रीमन् महाप्रभुकी बात सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
कहा—"प्रभो! यह जो सबकु
आपके द्वारा हमारी वञ्चना है,' मैं यह सबकु
हूँ। हम पतित अधमोंको जो आपने अङ्गीकार किया है—उसीसे ही आपके दीन–दयालुताका गुण प्रकाशित हो गया है।"

श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुके हृदयका भाव

प्रभु हासि' कहे,—"शुन हरिदास सनातन।
तत्त्व कहि तोमा–विषये आमार जैछे मन॥

तोमारे 'लाल्य', आपनाके 'लालक' अभिमान।
लालकेर लाल्ये नहे दोष–परिज्ञान॥

(चै॰ च॰ अ॰ ४/१८३–१८४)

श्रील हरिदास ठाकुर

मुस्कराते हुए कहा—"सुनो हरिदास! सनातन! तुम दोनोंके प्रति मेरे मनमें जो भाव है, मैं अब उसे कहता हूँ। तुम्हें मैं लालन-योग्य और अपने आपको लालन-कर्त्ता मानता हूँ। लालन-कर्त्ता अपने लाल्यके दोषोंको नहीं समझता।

शुद्धभक्तवात्सल्यके कारण सुदर्शनधारी भगवान्‌में भक्तके दोष-दर्शनका अभाव

"आपनारे हय मोर अमान्य-समान।
तोमा सबारे करो मुञि बालक-अभिमान॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१८५)

"मैं तुम्हारे गौरव—सम्मान अथवा पूजाका पात्र हूँ—यह बात भक्त प्रेमवत्सल मेरे मनमें नहीं रहती। मैं तो तुम सबको अपना बालक मानता हूँ।"

श्रील हरिदास ठाकुर

श्रील सनातन गोस्वामी हेतु प्रार्थना

हरिदास कहे—"तुमि ईश्वर दयामय।
तोमार गम्भीर हृदय बुझन ना जाय॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१८८)

श्रीमन् महाप्रभुके वचन सुनकर श्रील हरिदास ठाकुर कहा—"प्रभो! आप ईश्वर हैं, दयामय हैं, आपके हृदयकी गम्भीरताको कोई भी नहीं जान सकता।

"वासुदेव-गलत्कुष्ठी
ताँरे आलिङ्गन कैला हइया सदय॥
आलिङ्गिया कैला तार कन्दर्प-सम अङ्ग।
बुझिते ना पारि तोमार कृपार तरङ्ग॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१८९-१९०)

"वासुदेव विप्रके अङ्गोंमें गलित-कुष्ठ था। कृमि बनकर उसके शरीरके अङ्गोंको कष्ट देनेवाला कुष्ठ-रोग भी उसके शरीरसे दूर हो गया था। आपने कृपा करके एकबार उसे आलिङ्गन-दान दिया था, जिससे उसका शरीर कामदेवके समान हो गया था। (किन्तु आपके द्वारा अनेक बार आलिङ्गित होनेपर भी श्रीसनातनका रोग दूर नहीं हो रहा, अतएव) आपकी कृपाकी तरङ्गको कौन समझ सकता है?"

श्रीमन् महाप्रभुका उत्तर

प्रभु कहे,—"वैष्णव-देह 'प्राकृत' कभु नय।
'अप्राकृत' देह भक्तेर 'चिदानन्दमय'॥

दीक्षाकाले भक्त करे आत्मसमर्पण।
सेईकाले कृष्ण तारे करे आत्मसम॥

सेइ देह करे तार चिदानन्दमय।
अप्राकृत-देहे ताँर चरण भजय॥

(चै॰ च॰ अ॰ ४/१९१-१९३)

श्रीमन् महाप्रभुने कहा—"हरिदास! वैष्णवकी देह कभी भी 'प्राकृत' नहीं होती, भक्तोंकी 'अप्राकृत' देह तो चिदानन्दमय होती है। दीक्षाके समय भक्त गुरुके माध्यमसे भगवान्‌के चरणकमलोंमें आत्मसमर्पण करता है, उसी समय श्रीकृष्ण उसे अपने समान चिदानन्दमय बना देते हैं। भगवान् भक्तको कोई दूसरी देह प्रदान नहीं करते, बल्कि उसकी उसी देहको ही चिदानन्दमय बना देते हैं। भक्त अपनी उसी चिदानन्दमय देहके द्वारा ही भगवान्‌की सेवा करता है।

"सनातनेर देह कृष्ण कण्डु उपजाइया।
आमा परीक्षिते इँहा दिला पाठाइया॥

घृणा करि' आलिङ्गन ना करिताम जबे।
कृष्ण-ठाञि अपराधी हइताम तबे॥

(चै॰ च॰ अ॰ ४/१९५-१९६)

"हरिदास! श्रीकृष्णने सनातनकी देहमें चर्म-रोग उत्पन्न करके मेरी परीक्षाके लिए इसे यहाँ भेज दिया है। यदि मैं इससे घृणा करके इसका आलिङ्गन न करता, तो मैं श्रीकृष्णके समक्ष अपराधी बनता।

"पारिषद-देह ऐई, ना हय दुर्गन्ध।
प्रथम दिवसे पाइलुँ चतुःसम-गन्ध॥
(चै॰ च॰ अ॰ ४/१९७)

"सनातन श्रीभगवान्‌का पार्षद है, इसकी देहमें दुर्गन्ध कहाँ? मैंने तो पहले दिन इसे आलिङ्गन करते ही चतुःसम (चन्दन, कस्तूरी, केसर तथा अगरु) की सुगन्धितका अनुभव किया था।"

श्रील सनातन गोस्वामीकी ओर देखते हुए श्रीमन् महाप्रभुने कहा—"सनातन्! तुम बिलकु
आलिङ्गन करके मुझे बहुत सुख प्राप्त होता है।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु मनकी अभिलाषापूर्ण

(यद्यपि श्रीमन् महाप्रभु कह रहे हैं कि भगवान्‌ने उनकी परीक्षाके लिए ही श्रील सनातन गोस्वामीको इस प्रकार रोग-ग्रस्त करके नीलाचल भेजा है, तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तवमें श्रीमन् महाप्रभु श्रील सनातन गोस्वामीके साथ-साथ श्रील हरिदास ठाकु
परीक्षा ले रहे थे, जिसमें वे दोनों सम्पूर्ण रूपसे उत्तीर्ण हुए। इसलिए आज परीक्षा समाप्त होनेपर) श्रीमन् महाप्रभुने पुनः श्रीसनातन गोस्वामीका आलिङ्गन किया। आज श्रील सनातन गोस्वामीका चर्म-रोग दूर हो गया तथा उनकी देह सुवर्णकी भाँति उज्ज्वल हो गयी।

देखि' हरिदास मने हैल चमत्कार।
प्रभुरे कहेन—"ऐई भङ्गी जे तोमार॥

सेई झारिखण्डेर पानी तुमि खाओयाइला।
सेई पानी–लक्ष्ये इँहार कण्डु उपजिला॥

कण्डु करि' परीक्षा कराइले सनातने।
ऐई लीला–भङ्गी तोमार केह नाहि जाने॥

(चै॰ च॰ अ॰ ४/२०२–२०४)

श्रीमन् महाप्रभुकी यह लीला देखकर श्रील हरिदास ठाकु चमत्कृत हो उठे तथा प्रभुसे कहने लगे—"प्रभो! ये सब आपकी लीला है कि आपने पहले सनातनको झारिखण्डका पानी पिलवाया, जिसके कारण इसकी देहमें खाज हो गया। आपने इस रोगके द्वारा सनातनकी परीक्षा ली है, आपकी इस लीला–भङ्गीको कोई नहीं जान सकता।"

तदनन्तर श्रीमन् महाप्रभुने श्रील हरिदास ठाकु सनातन गोस्वामीका आलिङ्गन किया और अपने स्थानपर चले गये। श्रील हरिदास ठाकु श्रीमन् महाप्रभुके गुण गाते–गाते प्रेममें विभोर हो गये।

इस प्रकार श्रील सनातन गोस्वामी बहुत दिनों तक नीलाचलमें रहे तथा श्रील हरिदास ठाकु महाप्रभुकी गुण–कथाओंका आस्वादन करते रहे।

सप्तदश अध्याय

श्रीमन् महाप्रभु तथा श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
अन्त्यज्य आदिके उद्धारके उपायकी जिज्ञासा

एकदिन जब श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
तो उन्होंने श्रीहरिदास ठाकु
यवनोंकी संख्या बहुत बढ़ गयी है। ये लोग बड़े दुराचरी होते हैं तथा गायों और ब्राह्मणोंसे हिंसा करते हैं। अतः इन सबका कल्याण कैसे होगा? इस विषयमें मैं बहुत चिन्तित हूँ।"

श्रील हरिदास ठाकु
माहात्म्यका कीर्त्तन

श्रील हरिदास ठाकु
तथा न ही इनके लिए दुःखी हों। इन दुराचारी यवनोंका उद्धार तो नामाभाससे अनायास ही हो जायेगा। ये लोग तो 'हाराम, हाराम' बोलकर नामाभास करते हैं। भक्तजन अत्यधिक प्रेमपूर्वक जिस 'हा राम, हा राम' का सदैव उच्चारण करते हैं, इन यवनोंका भाग्य देखिये, ये भी वही नाम उच्चारण करते हैं। इसलिए इनका भी उद्धार हो जायेगा।

नामाभासका अतुलनीय प्रभाव

"यद्यपि नामीके प्रति लक्ष्य न रखकर अन्य वस्तुको लक्ष्य करके नाम उच्चारण करनेको नामाभास कहते हैं, तथापि नामाभासमें नामकी शक्ति नष्ट नहीं होती है। श्रीनृसिंहपुराणमें कहा गया है—

"दंष्ट्रि

उक्त्वापि मुक्तिमाप्नोति किं पुनः श्रद्धया गृणन्॥

"अर्थात् किसी समय एक म्लेच्छपर एक जङ्गली शूकर (सुअर) ने अपने दाँतसे आक्रमण कर दिया, सुअरको देखकर उस म्लेच्छके मुखसे घृणापूर्वक 'हाराम, हाराम' शब्द निकला तथा वह मर गया। परन्तु मरते समय घृणासे 'हा राम' इस साङ्केतिक 'राम' शब्दके उच्चारण करनेसे ही उसका उद्धार हो गया।

"यहाँपर उसने 'हाराम' भगवान्के लिए नहीं कहा, बल्कि उसने तो घृणापूर्वक सुअरको अस्पृश्य कहा था। परन्तु भगवान्ने उसका उद्धार कर दिया, इसका कारण है कि 'हाराम' शब्दमें 'राम' नामके जो दो अक्षर 'रा' और 'म' हैं, उनमें परस्पर व्यवधान कु

दोनों जुड़े हुए—एक दूसरेंके पास स्थित हैं। इसके अतिरिक्त विशेषता यह है कि प्रेमवाचक 'हा' शब्द यहाँ रामके साथ संयुक्त है। सुअरके उद्देश्यसे लिये गये नाममें भी भगवान्का नाम आ जानेके कारण वह नामाभास है। हरिनामका यही अद्भुत स्वभाव है कि जिस किसी भी प्रकारसे नाम लिया जाये, नामप्रभु अवश्य ही उसका फल देते हैं।

"श्रीमद्भागवतमें भी वर्णन है कि मरते समय अजामिलके मुखसे अपने पुत्रको बुलानेके उद्देश्यसे 'नारायण' नाम निकला, जिसके प्रभावसे विष्णुदूतोंने उसे यमदूतोंके चंगुलसे छुड़ा लिया। (श्रीहरिभक्तिविलास ११/२८९ में) पद्मपुरणके वचन उद्धृत करते हुए कहा गया है—

"नामैकं यस्य वाचि स्मरणपथगतं श्रोत्रमूलंगतं वा
शुद्धं वाशुद्धवर्णं व्यवहितरहितं तारयत्येव सत्यम्।

(पद्मपुराण स्वर्गखण्ड ४८ अध्याय)

"हे विप्रवर! एक हरिनाम भी जिसकी जिह्वापर उदित हो जाते हैं अथवा कर्णेन्द्रियमें प्रवेश करते हैं या स्मरण–पथपर

जागरूक हो जाते हैं, उसका वे नाम (प्रभु) अवश्य ही उद्धार करेंगे। यहाँ नामोच्चारणमें वर्णोंकी शुद्धता अथवा अशुद्धता या विधिके अनुसार शुद्ध नामोच्चारण या अशुद्ध उच्चारण आदिका महत्त्व नहीं, अर्थात् श्रीनाम इनका कु भी विचार नहीं करते।

नामाभाससे सब प्रकारके अनर्थोंकी निवृत्ति

"नामाभास हैते हय सर्वपापक्षय।
नामाभास हैते हय संसारेर क्षय॥
(चै॰ च॰ अ॰ ३/६१)

"नामाभाससे सब प्रकारके पाप क्षय हो जाते हैं तथा नामाभाससे ही संसारका क्षय होता है।

नामाभाससे महापातकका भी नाश

"तं निर्व्याजं भज गुणनिधे पावनं पावनानां
श्रद्धा रज्यन्मतिरतितरामुक्तमः श्लोकमौलिम्।
प्रोद्यन्नतः करनकु
राभासोऽपि क्षपयति महापातकध्वान्तराशिम्॥
(भ॰ र॰ सि॰ दक्षिण विभाग विभाव लहरी १०३)

"हे गुणनिधे! तुम परम-पावन उत्तम श्लोकोंके शिरोमणि श्रीकृष्णका श्रद्धामूलक मतिसहित अतिशीघ्र (निष्कपट होकर) सरल भावसे भजन करो, क्योंकि उनके नामरूपी सूर्यका आभास भी अन्तःकरणमें उदित होनेपर महापातकरूपी अन्धकारको विनष्ट कर देता है।

नामाभाससे मुक्तिकी प्राप्ति

"म्रियमाणो हरेर्नाम गृणन् पुत्रोपचारितम्।
अजामिलोऽप्यगाद्धाम किमुत श्रद्धया गृणन्॥
(श्रीमद्भा॰ ६/२/४९)

"पुत्रके उद्देश्यसे हरिनाम ग्रहण करके अजामिलको ही जब वैकु
ग्रहण करनेसे क्या प्राप्त होगा, बताया नहीं जा सकता।

"इस प्रकार शास्त्रोंमें नामाभाससे ही मुक्ति प्राप्त होनेके अनेकों प्रमाण हैं।"

श्रीमन् महाप्रभुके आनन्दकी वृद्धि तथा स्थावर-जङ्गम जीवोंके उद्धारके उपायकी जिज्ञासा

श्रील हरिदास ठाकु
हृदयमें बहुत आनन्द हुआ। फिर भी श्रीमन् महाप्रभुने भङ्गी करते हुए उनसे पूछा—"हरिदास! पृथ्वीपर स्थावर और जङ्गम (चलने-फिरने वाले) बहुत प्रकारके जीव हैं, इन सबका उद्धार कैसे होगा?"

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
उनके उद्धारका उपाय पहले ही स्थिर कर रखा है। आपने उच्चस्वरसे हरिनाम-कीर्त्तनकी जो विधि प्रचलित की है, उससे भगवान्का नाम श्रवणकर स्थावर और जङ्गम सभीका संसार-बन्धन नष्ट हो जायेगा। जङ्गम अर्थात् जो मनुष्य, पशु-पक्षी आदि हैं, उच्च नामको सुनते ही उनका संसार-बन्धन क्षय हो जाता है। स्थावर अर्थात् वृक्षादिकोंके साथ जाकर जब वह उच्च नामसङ्कीर्त्तन ध्वनि टकराती है, तो उनसे भी प्रतिध्वनि निकला करती है। वास्तवमें वह प्रतिध्वनि नहीं होती, अपितु उनका अनुकीर्त्तन होता है। आपकी ही कृपासे यह असम्भव लगनेवाली बात सम्भव होती है अर्थात् न बोल पानेवाले स्थावर भी नामकीर्त्तन करते हैं। समस्त जगत्में जहाँ कहीं भी उच्चस्वरसे नामसङ्कीर्त्तन होता है, उसे सुनकर वहाँके स्थावर और जङ्गम प्रेमावेशसे नृत्य करने लगते हैं।

"वृन्दावन जाते समय आपने स्वयं उच्चस्वरसे हरिनाम-कीर्त्तन करके झारिखण्डमें पशु-पक्षी, सर्प इत्यादि सभीसे हरिनाम करवाकर उनका उद्धार किया। यह सब वृत्तान्त मैंने बलभद्र भट्टाचार्यके मुखसे श्रवण किया है।

"श्रीवासुदेव दत्तने जब जीवोंके लिए आपसे प्रार्थना की थी अर्थात् जब उन्होंने कहा था कि 'मुझे ही समस्त जीवोंके पापोंका फल दे दीजिये और स्मस्त जीवोंका उद्धार कर दीजिये। मैं ही सब जीवोंके बदले नरक-यातनाको भोग करूँगा।' तब आपने उन्हें समस्त जीवोंकी पाप-यातनाको भोग न कराकर, केवल उसकी इच्छानुसार समस्त जीवोंके उद्धार कर देनेकी उसकी प्रार्थनाको स्वीकार कर लिया था।

श्रील हरिदास ठाकु

नाम-प्रेम प्रचारके द्वारा प्रभुकी जीवोद्धार लीलाके रहस्यका उद्घाटन

"हे प्रभो! जगत्का उद्धार करनेके लिए ही तो आपका अवतार हुआ है। आपने भक्तभाव अङ्गीकार करके सभीको भजनकी शिक्षा देकर सभीके उद्धारका पथ स्वयं स्पष्ट रूपमें प्रदर्शित किया है। अतः आपने उच्चस्वरसे नामसङ्कीर्त्तनका प्रचारकर सभी जीवोंका माया-बन्धन काट दिया है।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा सभी जीवोंके मुक्ति प्राप्त करनेके बाद ब्रह्माण्डकी स्थितिके विषयमें जिज्ञासा

ऐसा सुनकर श्रीमन् महाप्रभुने कहा—"हे हरिदास! जब सभी जीव ही मुक्त हो जायेंगे, तब तो यह ब्रह्माण्ड जीव शून्य हो जायेगा।"

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदासने कहा—"जब तक आप इस जगत्में रहेंगे, तब तक यहाँपर वास करनेवाले स्थावर-जङ्गम—सब प्रकारके

जीवोंको मुक्त करके आप उन्हें वैकु
सूक्ष्म जीवोंको कर्मक्षेत्रमें पुनः उद्‌बुद्ध करेंगे। इस प्रकार ब्रह्माण्डसमूह पुनः जीवों द्वारा परिपूर्ण हो जायेगा।

भगवान् श्रीरामचन्द्र तथा श्रीकृष्णचन्द्रकी जीवोद्धार–लीलाका दृष्टान्त

"जिस प्रकार पहले भगवान् श्रीरामचन्द्र सभी अयोध्या–वासियोंको साथ लेकर वैकु
पुनः अयोध्याको भर दिया। आपने भी अवतरित होकर इस प्रकारका हाट (बाजार) खोला है, आपके गूढ़ भावको कौन समझ सकता है। पहले श्रीकृष्णने भी व्रजमें अवतीर्ण होकर समस्त ब्रह्माण्डके जीवोंका संसार–बन्धन खोलकर—उन्हें मुक्त कर दिया था।

"न चैवं विस्मयः कार्यो भवता भगवत्यजे।
योगेश्वरेश्वरे कृष्णे यत एतद्विमुच्यते॥
(श्रीमद्भा॰ १०/२९/१६)

"जिनसे यह समस्त चराचर जगत् मुक्ति प्राप्त करता है, योगेश्वरोंके भी ईश्वर, जन्मादि रहित उन श्रीकृष्णके कार्योंके प्रति किसी प्रकारके विस्मयको प्रकाशित करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

"अयं हि भगवान् दृष्टः कीर्तितः संस्मृतश्च द्वेषानुबन्धेनाखिल। सुरासुरादिदुर्लभं फलं प्रयच्छति, किमुत् सम्यग् भक्तिमताम् इति॥ (श्रीविष्णुपुराण ४/१५/१७, चै॰ च॰ अ॰ ३/८४)

"भगवान् द्वेषपूर्वक दर्शन करनेवाले, कीर्त्तन करनेवाले तथा स्मरण करनेवालेको ही जब सुर–असुरोंके लिए भी दुर्लभ फल प्रदान करते हैं, तब फिर प्रेमपूर्वक भक्ति करनेवालोंके सम्बन्धमें क्या कहा जाये?

"जिस प्रकार श्रीरामचन्द्र तथा श्रीकृष्णचन्द्रने जगत्‌में अवत्तीर्ण होकर जगत्‌के समस्त जीवोंका निस्तार कर दिया

था, उसी प्रकार आपने भी श्रीनवद्वीपमें अवतरित होकर समस्त ब्रह्माण्डके जीवोंका उद्धार कर दिया है।

श्रील हरिदास ठाकु

"जे कहे,—'चैतन्य-महिमा मोर गोचर हय।'
से जानूक, मोर पुनः ऐई' त निश्चय॥
तोमार जे लीला महा-अमृतेर सिन्धु।
मोर मनोगोचर नहे तार एक बिन्दु॥
(चै॰ च॰ अ॰ ३/८६-८७)

"यदि कोई मुझसे कहे कि 'मैं श्रीचैतन्य महाप्रभुकी महिमा जानता हूँ' तो मैं तो यही कहूँगा कि भाई! तुम जानते हो जानो। परन्तु मेरा तो यही निश्चय है कि हे प्रभो! आपकी लीला ऐसा महा-अमृतका अपार सिन्धु है, जिसका एक बिन्दु भी मेरे मनके गोचर नहीं है।"

भक्तोंके भगवान्‌की लीलाके रहस्यको उद्‌घाटन करनेके सामर्थ्यको देखकर भगवान् भी विस्मित

श्रील हरिदास ठाकु

महाप्रभुका मन चमत्कृत हो उठा। वे मन-ही-मन सोचने लगे—"मेरी गूढ़लीलाके विषयमें हरिदास कैसे जान गया?"

श्रील हरिदास ठाकु

कारण श्रीमन् महाप्रभुने उनका आलिङ्गन किया तथा उन्हें इन सब बातोंको प्रकाशित करनेके लिए मना किया। ईश्वरका यह स्वभाव है कि वे अपने ऐश्वर्यको छिपाना चाहते हैं, किन्तु उनकी महिमा भक्तोंसे छिपी नहीं रह सकती, उन्हें विदित हो ही जाती है।

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु

महाप्रभु सैकड़ों मुखोंसे अपने भक्तोंके निकट श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुको भक्तोंके गुण-गान करनेमें बहुत आनन्दकी प्राप्ति होती है और फिर श्रील हरिदास ठाकु
भी श्रेष्ठ भक्त हैं।

श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी स्वरचित श्रीचैतन्य-चरितामृतमें लिखते हैं—

"हरिदासेर गुणगण—असंख्य, अपार।
केह कोन अंशे वर्णि' नाहि पाय पार॥
(चै॰ च॰ अ॰ ३/९४)

"श्रील हरिदास ठाकु
भी कोई उनका वर्णन करता है, वह उनके आंशिक गुणोंका ही वर्णन कर पाता है, उनके गुणोंकी महिमाका कोई भी पार नहीं पा सकता है।"

अष्टादश अध्याय

श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुके सेवक श्रीगोविन्द प्रभुका श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभुके सेवक श्रीगोविन्द प्रभु नित्यप्रति श्रील हरिदास ठाकु
एक दिन जब वे आनन्दित होकर श्रील हरिदास ठाकु
पास महाप्रसाद लेकर पहुँचे, तो देखा कि श्रील हरिदास ठाकु
पूरी कर रहे हैं।

श्रीगोविन्द प्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
करनेके लिए अनुरोध, श्रील हरिदास ठाकु
नामाश्रित साधकका आदर्श व्यवहार प्रदर्शन

श्रीगोविन्द प्रभु बोले—"हरिदासजी! उठिये, प्रसाद पा लीजिये।" श्रील हरिदास ठाकु
लंघन अर्थात् उपवास करूँगा। अभी तक भी मेरी नामसंख्या पूरी नहीं हुई है, अतः मैं महाप्रसाद कैसे ग्रहण कर सकता हूँ? परन्तु तुम महाप्रसाद लेकर आये हो, अतः महाप्रसादकी उपेक्षा भी कैसे करूँ?" ऐसा कहकर श्रील हरिदास ठाकु
महाप्रसादकी वन्दना की तथा उसमेंसे मात्र एक कण लेकर भक्षण किया।

श्रीमन् महाप्रभुका श्रील हरिदास ठाकु
तथा श्रील हरिदास ठाकु

उसके दूसरे दिन स्वयं श्रीचैतन्यमहाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
तो हो न?" प्रभुका दर्शनकर श्रील हरिदास ठाकु
प्रणाम किया तथा दैन्य करते हुए कहने लगे—"प्रभो! शरीर तो मेरा बिलकु
अस्वस्थ है।" प्रभुने पूछा—"तुम्हें ऐसी कौन-सी व्याधि हुई है? मुझे ठीकसे बतलाओ।" श्रील हरिदास ठाकु
वास्तविक दुःख बतलाते हुए कहने लगे—"मेरी हरिनाम-सङ्कीर्त्तनकी संख्या पूर्ण नहीं हो पाती है।"

श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु
उन्हें नामके आचार्य और प्रचारकके रूपमें स्वीकार करते हुए कहने लगे—"हरिदास! अब तुम अत्यन्त वृद्ध हो गये हो, अतः अब अपनी नामसंख्या कम कर दो। तुम तो सिद्ध पुरुष हो, फिर साधनमें इतना आग्रह क्यों कर रहे हो? लोगोंका उद्धार करनेके लिए ही तुम्हारा यह अवतार हुआ है। तुमने जगत्में नामकी महिमाका बहुत प्रचार किया है, अतः अब अपनी नामसंख्या कम करो।"

श्रील हरिदास ठाकु
श्रीमन् महाप्रभुका गुणगान

श्रीमन् महाप्रभुके ऐसे वचनोंको सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
अपनी स्थिति तथा श्रीमन् महाप्रभुकी अथाह गुणावलीका कीर्त्तन करते हुए अपने वास्तविक अभिप्रायको प्रस्तुत करते हुए कहा—"हे प्रभु! आप कृपा करके मेरा निवेदन सुनिये।

"हीन-जाति जन्म मोर निन्द्य कलेवर।
हीनकर्मे रत मुञि अधम पामर॥
अदृश्य, अस्पृश्य मोरे अङ्गीकार कैला।
रौरव हइते मोरे वैकु

(चै० च० अ० ११/२७-२८)

"मेरा जन्म हीन जातिमें हुआ है, इसलिए मेरी यह देह निन्दनीय है। मैं अधम और पामर होनेके कारण सदैव हीन कर्मोंमें ही रत रहता हूँ। यद्यपि मैं अदृश्य और अस्पृश्य था, तथापि आपने मुझे अङ्गीकार करके मुझे रौरव नामक नरकसे निकालकर वैकु

"स्वतन्त्र ईश्वर तुमि हओ इच्छामय।
जगत नाचाओ, जारे जैछे इच्छा हय॥
अनेक नाचाईला मोरे प्रसाद करिया।
विप्रेर श्राद्धपात्र खाईनु 'म्लेच्छ' हइया॥

(चै० च० अ० ११/२९-३०)

"आप स्वतन्त्र ईश्वर होनेके कारण स्वेच्छामय हैं। आपकी जैसे जिसे नचानेकी इच्छा होती है, आप उसे वैसे ही नचाते हैं। आपने कृपा करके मुझे भी बहुत अधिक नचाया है, और तो और मैंने (आपकी इच्छानुसार हुई प्रेरणासे) म्लेच्छ होकर भी ब्राह्मणका श्राद्धपात्र खाया है।

श्रील हरिदास ठाकु
अपने अभिप्रायका ज्ञापन

"प्रभो! मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आप थोड़े ही समयमें इस जगत्को छोड़कर अपने नित्यधामको पधारनेवाले हैं। हे प्रभो! कृपा करके आप मुझे अपनी उस अन्तर्ध्यान लीलाका दर्शन न कराइये। मेरी बहुत दिनोंसे एक इच्छा है कि आपसे पहले मेरा देहत्याग हो।"

श्रील हरिदास ठाकु

थोड़ी देर तक चुप रहनेके बाद काय, मन और वाक्यके द्वारा गौर-कृष्णकी सेवा-प्राप्तिरूपी अपनी सुखमय अभिलाषाके साथ-साथ अप्रकट होनेकी इच्छाको व्यक्त करते हुए श्रील हरिदास ठाकु

"हृदये धरिमु तोमार कमल-चरण।
नयने देखिमु तोमार चाँद वदन॥
जिह्वाय उच्चारिमु तोमार 'कृष्णचैतन्य'-नाम।
ऐईमत मोर इच्छा,—छाड़िमु पराण॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/३३-३४)

"आपके श्रीचरणकमलोंको हृदयमें धारण करके, आपके मुखचन्द्रको अपने नेत्रोंसे देखते हुए और जिह्वासे आपके 'श्रीकृष्णचैतन्य' नामका उच्चारण करते हुए मैं अपने प्राणोंको त्याग करूँ—यही मेरी एकान्त इच्छा है।

"हे दयामय प्रभो! आप कृपा करके मेरे इस निवेदनको पूर्ण कीजिये। मेरी इस वाञ्छाकी पूर्त्ति आपकी कृपासे ही हो सकती है।"

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु तथा मर्मस्पर्शी और करुण वचन

श्रीमन् महाप्रभु स्नेहपूर्वक बोले—"हरिदास! श्रीकृष्ण बहुत दयालु हैं। तुम्हारे जैसा भक्त उनसे जो कु
उसे अवश्य ही प्रदान करेंगे।" ऐसा कहनेके उपरान्त लीला परिकरके भावी विच्छेदका स्मरण करके श्रीमन् महाप्रभुने अति मर्मस्पर्शी और करुण वचन कहे—

"किन्तु आमरे जे किछु सुख, सब तोमा लइया।
तोमार योग्य नहे,—जाबे आमारे छाड़िया॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/३८)

"परन्तु हरिदास! मेरा जो सुख या आनन्द है, वह तुम्हारे सङ्गके कारण ही है। अतः तुम्हारे लिए यह उचित नहीं है कि तुम मुझे छोड़कर चले जाओ।"

श्रील हरिदास ठाकु

याचना तथा पुनः दैन्योक्ति

यह सुनकर श्रील हरिदास ठाकु
पकड़कर कहने लगे—"प्रभो! कृपया आप मुझे अपनी मायासे मोहित मत कीजिये। हे प्रभो! मुझ जैसे अधमपर अवश्य ही यह दया कीजिये।

"मोर शिरोमणि कत कत महाशय।
तोमार लीलार सहाय कोटि भक्त हय॥
आमा–हेन यदि एक कीट मरि' गेल।
पिपीलिका मैले पृथिवीर काँहा हानि हैल?
(चै॰ च॰ अ॰ ११/४०–४१)

"मुझसे भी कितने ही श्रेष्ठ–श्रेष्ठ करोड़ों भक्त हैं, जो आपकी लीलामें सहायता कर रहे हैं। यदि मेरे जैसा एक कीड़ा मर भी जाये, तो आपकी लीलामें तथा आपके सुखमें कु
क्या पृथ्वीकी कु

श्रील हरिदास ठाकु

"'भक्तवत्सल' तुमि, मुञि 'भक्ताभास'।
अवश्य पूरिबे, प्रभु, मोर ऐई आश॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/४२)

"प्रभो! आप भक्तवत्सल हैं। यद्यपि मैं तो भक्तका आभास मात्र हूँ, तो भी मुझे यही आशा है कि आप मेरी इच्छा अवश्य ही पूर्ण करेंगे।"

श्रील हरिदास ठाकु
आलिङ्गन किया तथा आश्वासन देकर कि 'कल भगवान् जगन्नाथदेवके दर्शनके उपरान्त अवश्य आऊँगा' समुद्र-स्नानके लिए चले गये।

भगवान् श्रीजगन्नाथके दर्शनके उपरान्त सपरिकर महाप्रभुका श्रील हरिदास ठाकु
कु

दूसरे दिन प्रातःकाल सभी भक्तों सहित श्रीमन् महाप्रभु श्रीजगन्नाथदेवका दर्शन करनेके बाद अतिशीघ्र ही श्रील हरिदास ठाकु
हरिदासके सामने आकर उपस्थित हुए, श्रील हरिदास ठाकु
प्रभु तथा उपस्थित वैष्णवोंकी चरण वन्दना की। प्रभु बोले—"हरिदास! तुम कैसे हो?" हरिदास बोले—"प्रभो! मुझे जैसा रखनेकी आपकी इच्छा है, वैसा ही हूँ।"

भक्तोंके सहित महाप्रभुका कीर्त्तन आरम्भ

श्रील हरिदास ठाकु
आङ्गनमें महा-सङ्कीर्त्तन आरम्भ कर दिया। श्रीवक्रेश्वर पण्डितने नृत्य करना आरम्भ कर दिया। श्रीस्वरूप दामोदर आदि सभी भक्तलोग श्रील हरिदास ठाकु
करने लगे।

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभु श्रील रायरामानन्द और सार्वभौम भट्टाचार्य आदि भक्तोंके समक्ष श्रील हरिदास ठाकु
करने लगे। श्रीमन् महाप्रभु श्रील हरिदास ठाकु
अधिक गुणगान कर रहे थे, जिसे सुनकर ऐसा लग रहा था मानो श्रीमन् महाप्रभुके पाँच मुख हो। श्रील हरिदास ठाकु

गुणोंका वर्णन करते-करते स्वयं प्रभुका आनन्द बढ़ता ही जा रहा था। प्रभुके श्रीमुखसे श्रील हरिदास ठाकु
सुनकर सभी विस्मित हो गये। सभी भक्त श्रील हरिदास ठाकु

श्रील हरिदास ठाकु

हरिदास निजाग्रेते प्रभुरे बसाइला।
निज-नेत्र—दुई भृङ्ग—मुखपद्मे दिला॥

उस समय श्रील हरिदास ठाकु
सामने बैठा लिया तथा अपने नेत्ररूपी मधुकरोंको प्रभुके मुखकमलपर विराजित कर दिया।

स्व हृदये आनि' धरि प्रभुर चरण।
सर्वभक्त-पदरेणु मस्तक भूषण॥

उन्होंने प्रभुके श्रीचरणकमलोंको अपने हृदयपर धारण कर लिया तथा सभी भक्तोंकी चरण रजको मस्तकपर भूषणवत् धारण किया।

'श्रीकृष्णचैतन्यप्रभु' बलेन बार-बार।
प्रभुमुख माधुरी पिये, नेत्रे जलधर॥

श्रील हरिदास ठाकु
नामका उच्चारण कर रहे थे और प्रभुके मुखकमलकी माधुरीका पान करते-करते उनके नेत्र मेघके समान आनन्दाश्रुकी धारा प्रवाहित कर रहे थे।

'श्रीकृष्णचैतन्य-शब्द करिते उच्चारण।
नामेर सहित प्राण करिला उत्क्रामण॥

उसी समय 'श्रीकृष्णचैतन्य' नाम उच्चारण करते-करते उन्होंने प्राण त्याग दिये।

सभीको भीष्म पितामहके देह-त्यागका स्मरण

महायोगेश्वर-प्राय स्वच्छन्दे मरण।
'भीष्मेर निर्याण' सबार हइल स्मरण॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/५३-५७)

इस प्रकार महायोगेश्वरोंके समान स्वेच्छापूर्वक किये गये उनके देहत्यागको देखकर सबको 'भीष्मके देहत्याग' का स्मरण हो आया।

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा गोदमें श्रील हरिदास ठाकु अप्राकृत देहको लेकर नृत्य

श्रील हरिदास ठाकु
'हरि', 'कृष्ण' कहते हुए कोलाहल करने लगे। श्रीमन् महाप्रभु प्रेमानन्दमें विह्वल हो गये। श्रील हरिदास ठाकु
होते ही उनके शरीरको अपनी गोदमें उठाकर महाप्रभु प्रेमाविष्ट होकर आङ्गनमें नृत्य करने लगे। प्रभुके प्रेमावेशको देखकर और भी सब भक्त प्रेमाविष्ट हो गये तथा सभी कीर्त्तन करते-करते नृत्य करने लगे। प्रभु अपने प्रिय हरिदासके प्रेममें इतने आविष्ट हो गये कि उन्हें लेशमात्र भी बाह्यज्ञान नहीं था, वे तो बस श्रील हरिदास ठाकु
कलेवरको अपनी गोदीमें उठाकर नृत्य करते ही जा रहे थे। यह देखकर किसी प्रकारसे श्रील स्वरूप दामोदरने प्रभुको शान्त किया।

श्रील हरिदास ठाकु स्पर्शसे समुद्रका महातीर्थत्व

तब श्रील हरिदास ठाकु [१] पर चढ़ाकर कीर्त्तन करते हुए समुद्रके किनारे ले जाया गया। आगे-आगे श्रीमन्

---

[१] विमान अर्थात् परिव्यक्त देहको समाधि-स्थली तक ले जानेके लिए भलीभाँति सजायी गयी खाट।

महाप्रभु नृत्य करते हुए जा रहे थे तथा पीछे भक्तोंके साथ वक्रेश्वर पण्डित नृत्य कर रहे थे। श्रील हरिदास ठाकु
समुद्रके जलमें स्नान करानेके बाद श्रीमन् महाप्रभुने कहा—“आज यह समुद्र महातीर्थ बन गया।”

सभी भक्तोंके द्वारा श्रील हरिदास ठाकु
पान तथा समाधि प्रदान करनेकी रीति

सभी भक्तोंने श्रील हरिदास ठाकु
पान किया तथा सभीने उनके दिव्य कलेवरपर श्रीजगन्नाथदेवकी प्रसादी पट्टडोरी, प्रसादी चन्दन तथा प्रसादी वस्त्र इत्यादि अर्पण किये। तत्पश्चात् बालूमें गड्ढा करके उन्हें वहाँ लेटा दिया। चारों ओरसे भक्तलोग कीर्त्तन करने लगे तथा श्रीवक्रेश्वर पण्डित आनन्दपूर्वक नृत्य करने लगे। उस समय श्रीमन् महाप्रभुने स्वयं ‘हरिबोल-हरिबोल’ बोलते हुए अपने हाथोंसे उनके शरीरपर बालु दी।

समाधि पीठका निर्माण तथा भक्तोंके साथ महाप्रभुका समुद्र स्नान, समाधि पीठकी परिक्रमा और श्रीजगन्नाथ मन्दिर आगमन

बालुसे ढक देनेके पश्चात् उसके ऊपर एक समाधि पीठ बनाया गया तथा उस समाधि पीठको चारों ओरसे अच्छी तरह घेर दिया गया। समाधिके पश्चात् महाप्रभु कीर्त्तन और उद्दण्ड नृत्य करने लगे। भक्तोंके मुखसे उच्चारित हरिध्वनिसे सारा ब्रह्माण्ड गूँजने लगा। कु
अपने भक्तोंको साथ लेकर समुद्रमें स्नान किया। स्नानके पश्चात् श्रील हरिदास ठाकु
श्रीहरिसङ्कीर्त्तन करते हुए अपने भक्तोंके साथ श्रीजगन्नाथ मन्दिरके सिंहद्वार आ गये।

श्रील हरिदास ठाकु

श्रीमन् महाप्रभु (द्वारके भीतर प्रवेशकर आनन्द बाजारके) दुकानदारोंके आगे अपना आँचल फैलाकर कहने लगे—"आपलोग हरिदास ठाकु
दीजिये।" श्रीमन् महाप्रभुके वचन सुनकर यद्यपि दुकानदार लोग तो आनन्दसे प्रभुको प्रचुर मात्रामें प्रसाद देनेके लिए आगे बढ़े, किन्तु श्रील स्वरूप दामोदरने उन्हें निषेध किया तथा प्रार्थनापूर्वक महाप्रभुको भक्तोंके साथ गम्भीरामें भेज दिया तथा स्वयं चार वैष्णवोंको तथा बोझा उठानेवाले चार लोगोंको अपने साथ रख लिया। श्रीमन् महाप्रभुके लौट जानेके उपरान्त श्रीस्वरूप दामोदरने सभी दुकानदारोंको कहा—"अब आप अपने महाप्रसादके पात्रोंमेंसे एक-एक द्रव्य थोड़ा-थोड़ा दे दीजिये।" इस प्रकार बहुत-सा महाप्रसाद इकट्ठा हो गया। वे उस प्रसादको चार लोगोंके सिरपर रखवाकर ले आये। श्रीवाणीनाथ पट्टनायक भी बहुत-सा प्रसाद लेकर आये तथा श्रीकाशीमिश्रने भी बहुतसा प्रसाद भेजा।

विरह-महोत्सवमें प्रभुके द्वारा स्वयं अपने हाथोंसे प्रसाद वितरण

प्रभुने समस्त वैष्णवोंको पंक्तिमें बैठाया तथा स्वयं चार व्यक्तियोंको लेकर प्रसाद परोसने लगे। महाप्रभुके हाथोंमें प्रसाद थोड़ी मात्रामें नहीं आ रहा था, वे एक-एक पत्तलमें पाँच-पाँच लोगोंका प्रसाद परोस रहे थे। श्रीमन् महाप्रभुको प्रसाद परोसते देख श्रीस्वरूप दामोदरने कहा—"प्रभो! आप बैठकर देखिये। मैं, जगदानन्द, काशीश्वर तथा शङ्कर परोसते हैं। यद्यपि श्रीमन् महाप्रभु बैठ तो गये, तथापि उन्होंने भोजन करना प्रारम्भ नहीं किया, क्योंकि उस दिन उनका काशी मिश्रके घरपर निमन्त्रण था। महाप्रभुकी देखा-देखी किसीने भी प्रसाद पाना आरम्भ नहीं किया। जब काशी मिश्र स्वयं

प्रसाद लेकर आये और अत्यन्त आग्रहपूर्वक प्रभुको परमानन्द पुरी तथा ब्रह्मानन्द भारती सहित परिवेशन किया तब श्रीमन् महाप्रभुने प्रसाद पाना प्रारम्भ किया। तब उन्हें देखकर सभी भक्तोंने भी आनन्दसे प्रसाद पाना प्रारम्भ कर दिया। जब सब वैष्णव भोजन कर रहे थे, तब महाप्रभु स्वयं परोसनेवालोंको बुला-बुलाकर वैष्णवोंके पत्तलोंमें मना करनेपर भी महाप्रसाद परोसवाने लगे। इस प्रकार सभी लोगोंने आनन्दपूर्वक प्रसाद-सेवन किया।

श्रीमन् महाप्रभुके द्वारा सभी भक्तोंको माला, चन्दन तथा वर प्रदान

प्रसादके पश्चात् सबके आचमन कर लेनेपर महाप्रभुने सभी वैष्णवोंके मस्तकपर चन्दन लगाया और सभीको फूलमालाएँ पहनायीं। प्रेमाविष्ट होकर महाप्रभु सभीको वरदान देते हुए कहने लगे—

"हरिदासेर विजयोत्सव जे कैल दर्शन।
जे इहाँ नृत्य कैल, जे कैल कीर्त्तन॥

जे ताँरे बालुका दिते करिल गमन।
तार मध्ये महोत्सवे जे कैल भोजन॥

अचिरे ता सबाकार हबे 'कृष्णप्राप्ति'।
हरिदास दरशने हय ऐछे 'शक्ति'॥

(चै॰ च॰ अ॰ ११/९१-९३)

"हरिदास ठाकु
है, जिन्होंने इसमें नृत्य किया है, कीर्त्तन किया है, जो उनकी समाधिमें बालुका प्रदान करने उपस्थित हुए थे तथा जिन्होंने उनके विरह-महोत्सवमें प्रसाद पाया है—शीघ्र ही उन सबको श्रीकृष्णकी प्राप्ति होगी, क्योंकि हरिदासके दर्शन करनेका ऐसा प्रभाव है।"

श्रीमन् महाप्रभुके वचनोंको सुनकर भक्तोंका मन आनन्दित हो उठा।

प्रिय भक्तके विरहमें भगवान्की विलाप-उक्ति

श्रीमन् महाप्रभु पुनः कहने लगे—

"कृपा करि' कृष्ण मोरे दियाछिला सङ्ग।
स्वतन्त्र कृष्णेर इच्छा,—कैला सङ्ग-भङ्ग॥
हरिदासेर इच्छा जबे हइल चलिते।
आमार शकति ताँरे नारिल राखिते॥
इच्छामात्रे कैला निजप्राण निष्क्रामण।
पूर्वे जेन शुनियाछि भीष्मेर मरण॥

(चै॰ च॰ अ॰ ११/९४-९६)

"कृपा करके भगवान् श्रीकृष्णने मुझे हरिदास ठाकुरका सङ्ग प्रदान किया था, आज परम स्वतन्त्र स्वयं श्रीकृष्णकी इच्छासे ही हरिदास ठाकुरसे वियोग हो गया। जब हरिदासकी जानेकी इच्छा हुई, तो मैं उन्हें नहीं रोक पाया। भीष्मकी भाँति उन्होंने अपनी इच्छासे ही प्राण त्याग दिये।

ठाकुर

"हरिदास आछिल पृथिवीर 'शिरोमणि'।
ताहा बिना रत्नशून्या हइल मेदिनी॥

(चै॰ च॰ अ॰ ११/९७)

"हरिदास ठाकुर पृथ्वीके शिरोमणि थे। उनके बिना यह पृथ्वी रत्नशून्या हो गयी है।

श्रीहरिदास ठाकुर

"आप सभी उच्चस्वरसे हरिदासकी जय दीजिये।" ऐसा कहकर महाप्रभु स्वयं उद्दण्ड नृत्य करने लगे। सभी वैष्णववृन्द उच्चस्वरसे उन श्रील हरिदास ठाकुर

करने लगे, जिन्होंने जगत्‌में नामकी महिमाको प्रकाशित किया है। तत्पश्चात् शान्त होनेपर श्रीमन् महाप्रभुने सभी भक्तोंको वहाँसे विदा किया तथा स्वयं श्रील हरिदास ठाकु
हर्ष और विषादमें डूबकर विश्राम करने लगे।

भक्तश्रेष्ठ नामाचार्य श्रील हरिदास ठाकु
वृत्तान्तके श्रवणसे कृष्णभक्तिकी प्राप्ति

श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने स्वरचित श्रीचैतन्य-चरितामृतमें इस प्रसङ्गके वर्णनके अन्तमें लिखा है—

"ऐह त' कहिलुँ हरिदासेर विजय।
जाहार श्रवणे कृष्णे दृढ़भक्ति हय॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/१०१)

"इस प्रकार मैंने श्रील हरिदास ठाकु
वर्णन किया है, जिसके श्रवणमात्रसे ही भगवान् श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें दृढ़भक्ति उत्पन्न होती है।

"चैतन्येर भक्तवात्सल्य इहातेई जानि।
भक्तवाञ्छा पूर्ण कैला न्यासी-शिरोमणि॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/१०२)

"श्रीचैतन्य महाप्रभुके भक्तवात्सल्यकी अपूर्व महिमाका ज्ञान इस लीलासे ही होता है, क्योंकि संन्यासी शिरोमणि होनेपर भी उन्होंने भक्तकी वाञ्छाको पूर्ण किया।

"शेषकाले दिला ताँरे दर्शन-स्पर्शन।
ताँरे कोले करि' कैला आपने नर्त्तन॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/१०३)

"प्रभुने श्रील हरिदासकी इच्छानुसार उनके अन्तिम समयमें उन्हें अपने दर्शन तथा स्पर्शका सौभाग्य प्रदान किया तथा उनके प्राण त्यागनेपर उनकी देहको अपनी गोदीमें लेकर नृत्य किया।

"आपने श्रीहस्ते कृपाय ताँरे बालु दिला।
आपने प्रसाद मागि' महोत्सव कैला॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/१०४)

"उन्होंने अपने श्रीकरकमलोंसे कृपापूर्वक उनकी देहपर बालु दी तथा स्वयं प्रसाद भिक्षा माँगकर विरह-महोत्सव किया।

"महाभागवत हरिदास—परम विद्वान्।
ए सौभाग्य लागि' आगे करिला प्रयाण॥
(चै॰ च॰ अ॰ ११/१०५)

"महाभागवत श्रील हरिदास ठाकु
पारङ्गत होनेके कारण परम विद्वान थे। (करुणामय प्रभुके भक्तवात्सल्यरूपी गुणको जगत्-वासियोंके समक्ष भलीभाँति प्रकाशित करनेवाले भक्तके रूपमें) सौभाग्यको वरण करनेके लिए ही उन्होंने श्रीमन् महाप्रभुसे पहले ही इस जगत्से प्रयाण किया।"

श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र श्रीजगन्नाथपुरीमें श्रील श्रीहरिदास ठाकु
समाधि-पीठ आज तक भी विद्यमान है। वहाँ प्रति वर्ष अनन्त चतुर्दशीके दिन श्रील हरिदास ठाकु
मनाया जाता है।

॥ग्रन्थ समाप्त॥

नमामि हरिदासं तं चैतन्यं तञ्च तत्प्रभुम्।
संस्थितामपि यन्मूर्तिं स्वाङ्के कृत्वा ननर्त्तयः॥

(चै॰ च॰ अ॰ ११/१)

मैं श्रील हरिदास ठाकुरको नमस्कार करता हूँ तथा उनके प्रभु उन श्रीचैतन्यदेवको प्रणाम करता हूँ,— जिन्होंने श्रीहरिदास ठाकुरकी परित्यक्त देहको गोदमें लेकर नृत्य किया था।

वेदान्त
गौड़ीय
प्रकाशन
GVP